MAED-605 Semester III

पाठ्यचर्या विकास

Curriculum Development

शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

अध्ययन बोर्ड			
प्रोफेसर जे0के0 जोशी निदेशक शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी ,उत्तराखंड	**प्रोफेसरएन0 एन0 पाण्डेय** **(सदस्य)** शिक्षा संकाय एम० जे० पी० रुहेलखंड, विश्वविद्यालय, बरेली,	**प्रोफेसर गिरिजेश कुमार** **(सदस्य)** शिक्षा संकाय एम० जे० पी० रुहेलखंड, विश्वविद्यालय, बरेली,	**प्रोफेसर रोमेश वर्मा (सदस्य)** शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी ,उत्तराखंड
डॉ0 दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 रजनी रंजन सिंह सहायक प्रोफेसर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 प्रवीण कुमार तिवारी सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	सुश्री ममता कुमारी सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
डॉ कल्पना पाण्डे लखेड़ा सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्रीमती मनीषा पंत परमर्शदाता उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्री सिद्धार्थ पोखरियाल संविदा शिक्षक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	
पाठ्यक्रम संयोजक एवं संपादक		**उप संपादक**	
डॉ दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखंड		**डॉ देबकी सिरोला** सहायक प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखंड	

इकाई लेखन	इकाई संख्या	इकाई लेखन	इकाई संख्या
डॉ० एस0 के0 एस0 गौतम सहायक प्रोफेसर, इंस्टीट्यूट ऑफ़ एजुकेशन ,बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी	1	डॉ० सोमू सिंह सहायक प्रोफेसर , शिक्षा संकाय काशी हिंदु विश्वविद्यालय , वाराणसी	4, 7.
डॉ० रश्मि सिंह सहायक प्रोफेसर, इंस्टीट्यूट ऑफ़ एजुकेशन, बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी	2	डॉ०स्वेता द्विवेदी सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग जमशेदपुर, वीमेन्स कॉलेज जमशेदपुर , झारखण्ड	**5**
डॉ०धीरेन्द्र सिंह यादव सहायक प्रोफेसर, इंस्टीट्यूट ऑफ़ एजुकेशन,बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी	3	डॉ प्रेम सिंह सिकरवार सहायक प्रोफेसर श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	6

ISBN-13 -978-81-928871-6-6

समस्त लेखों/पाठों से सम्बंधित किसी भी विवाद के लिए सम्बंधित लेखक जिम्मेदार होगा| किसी भी विवाद का जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल)होगा|

कापीराइट: उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय प्रकाशन वर्ष: फरवरी2014 पुन: प्रकाशन - 2022

संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशक: निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139, (नैनीताल)

पाठ्यचर्या विकास
Curriculum Development
MAED-605 Semester III

इकाई सं०	इकाई का नाम	पृष्ठ सं०
1	पाठ्यचर्या : संकल्पना, अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं विशेषताएं, पाठ्यचर्या का अधिगमकर्ता के साथ सम्बन्ध Curriculum : Concept, Meaning, Nature, Scope and Objectives of curriculum, Curriculum and its relation with learners personality	1-14
2	पाठ्यचर्या के प्रकार Types of Curriculum	15- 30
3	पाठ्यचर्या विकास प्रक्रिया एवं सिद्धांत - Curriculum Development-the Process and Principles	31-52
4	पाठ्यचर्या विकास के निर्धारक Determinants of Curriculum Development	53-66
5	पाठ्यचर्या संरचना के दार्शनिक आधार Philosophical Bases of Curriculum Construction	67-93
6	पाठ्यचर्या संरचना के मनोवैज्ञानिक आधार Psychological Bases of Curriculum Construction	94-116
7	पाठ्यचर्या संरचना के समाजशास्त्रीय आधार Sociological Bases of Curriculum Construction	117-129

इकाई 1– पाठ्यचर्या : संकल्पना , अर्थ , प्रकृति , क्षेत्र एवं विशेषताएं , पाठ्यचर्या का अधिगमकर्ता के साथ सम्बन्ध

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 पाठ्यचर्या: संकल्पना, अर्थ, प्रकृति
1.4 पाठ्यचर्या: क्षेत्र एवं विशेषताएं
1.5 पाठ्यचर्या का अधिगमकर्ता के साथ सम्बन्ध
1.6 सारांश
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 संदर्भ-ग्रन्थ
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

हम सभी जानते हैं कि बचपन से आज तक हमने जो भी शिक्षा प्राप्त की है इस शिक्षा प्राप्ति की प्रक्रिया के दौरान हम सभी ने कई तरह की संपन्न होने वाली प्रक्रियाएं विद्यालयों में देखी हैं, जैसे- स्कूलों में सुबह की प्रार्थनाएं, फिर निश्चित समय सारणी के अनुसार सभी कक्षाओं का संचालन, प्रायोगिक क्रिया-कलाप, वर्ष में कई बार परीक्षाओं का आयोजन एवं साथ ही वर्ष भर विद्यालय में कई प्रकार की अन्य गतिविधियों `का आयोजन होना जैसे- खेलकूद प्रतियोगिता, सांस्कृतिक कार्यक्रम, पुस्तक मेला, विज्ञान प्रदर्शनी, स्काउट्स गाइड,एन०सी०सी०, राष्ट्रीय पर्वों का आयोजन आदि। आज हम सभी मिलकर इस विषय को समझेंगे की विद्यालयों में संपन्न होने वाले इन सभी इस प्रकार के क्रिलापों के क्या शैक्षिक निहितार्थ हैं ? विद्यालय में आयोजित होने वाले ये सभी कार्यक्रम किसी न किसी निश्चित उद्देश्य को लेकर ही आयोजित किये जाते हैं. इस इकाई में हम इनके स्वरूप, महत्व एवं उद्देश्यों की चर्चा करेंगे।

पाठ्यचर्या एक ऐसी धुरी के रूप में है जिसके चारो ओर कक्षा के विविध कार्य तथा विद्यालय के समस्त क्रियाकलाप विकसित किये जाते हैं। आप अपने बचपन के दिनों में स्कूलों में किये जाने वाले विविध कार्यकलापों के बारे में सोचिये और यह सोचने का प्रयास कीजिये कि हम ऐसा क्यों

करते थे। इन कार्यकलापों के विविध प्रकारों के बारे में भी सोचिये कि वह एक दूसरे से किस प्रकार सम्बंधित थे। आपको याद होगा कि आपके विद्यालय में भाषा विज्ञान, गणित तथा सामाजिक विज्ञान पढ़ाने वाले अध्यापक अपने विद्यार्थियों के साथ अन्य कौन-कौन सी क्रियाएं कराते थे। इस प्रकार यह इकाई आपके यह समझने में सहायक होगी कि कक्षा में अध्यापक जो भी करता है वह क्यों करता है तथा शिक्षा को यह अधिक उद्देश्यपूर्ण तथा जीवन के लिए उपयोगी कैसे बनाता है। इसके साथ ही पाठ्यचर्या की संकल्पना को भली भांति समझ लेने से शिक्षा के मनोवांछित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने में भी सहायता मिलेगी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप -

1. पाठ्यचर्या की परिभाषा तथा उसकी संकल्पना समझ सकेंगे।
2. पाठ्यचर्या की विविध परिभाषाएं बता सकेंगे।
3. पाठ्यचर्या एवं पाठयचर्या में अंतर बता सकेंगे।
4. पाठ्यचर्या के क्षेत्र एवं विशेषताओं को बता सकेंगे।
5. पाठ्यचर्या के महत्व को समझ सकेंगे।
6. पाठ्यचर्या की प्रक्रिया तथा इसके विविध सोपानों की व्याख्या कर सकेंगे।
7. पाठ्यचर्या अध्यापक और विद्यार्थियों के लिए किस प्रकार महत्वपूर्ण है यह समझ सकेंगे।

1.3 पाठ्यचर्या: संकल्पना, अर्थ, प्रकृति

पाठ्यचर्या: संकल्पना

पाठ्यचर्या विद्यालय की शिक्षा व्यवस्था का केंद्र बिंदु है। विद्यालय में उपलब्ध सभी संसाधन जैसे- विद्यालय भवन, विद्यालय के अन्य उपकरण, पुस्तकालय की पुस्तकें तथा अन्य शिक्षण सामग्री का एक मात्र उद्देश्य पाठ्यचर्या के प्रभावी क्रियान्वयन में सहयोग देना है। कक्षा की समस्त क्रियाएं, पठ्यसहगामी क्रियाकलाप तथा मूल्यांकन की समस्त प्रक्रिया विद्यालयी पाठ्यचर्या के परिणामस्वरुप ही नियोजित की जाती हैं। प्रत्येक सभ्य समाज अपनी युवा पीढ़ी के समाजीकरण हेतु एक निश्चित शैक्षिक कार्यक्रम का नियोजन करता है। इसका क्रियान्वयन विद्यालय के माध्यम से किया जाता है इस प्रक्रिया में किन बातों का समावेश हो तथा इन्हें शैक्षिक व्यवहार और क्रियाओं के रूप में कैसे परिवर्तित किया जाये, इस सम्बन्ध में काफी मतभेद हैं बहुत पहले अरस्तू ने कहा था कि- "जो स्थितियां है.....मानव समाज इनके शिक्षण के प्रति न तो एकमत है और न शिक्षण के लिए

अपनाये जाने वाले साधनों के प्रति ही।" वर्तमान समय में भी यह मतभेद विद्यमान हैं कि पाठ्यचर्या में क्या समाहित किया जाये तथा इसे कैसे संगठित तथा क्रमबद्ध करके पढ़ाया जाये। इस मतभेद के कारण ही पाठ्यचर्या की संकल्पना तथा इसके विकास के प्रति हमारे द्रष्टिकोण में एकरूपता नहीं आ सकी है।

पाठ्यचर्या शिक्षा का आधार है। पाठ्यचर्या द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। यह एक ऐसा साधन है जो छात्र तथा अध्यापक को जोड़ता है। अध्यापक पाठ्यचर्या के माध्यम से छात्रों के मानसिक, शारीरिक, नैतिक, सांस्कृतिक, संवेगात्मक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक विकास के लिए प्रयास करता है। पाठ्यचर्या द्वारा छात्र को जीवन जीने की शिक्षा प्राप्त होती है। इससे अध्यापकों को दिशा-निर्देश प्राप्त होते हैं। छात्रों के लिए लक्ष्य निर्धारित होने से उनमे एकाग्रता आती है। वे नियमित रहकर कार्य करते हैं। पाठ्यचर्या एक प्रकार से अध्यापक के पश्चात् छात्रों के लिए दूसरा पथ प्रदर्शक है। पाठ्यचर्या में किसी भी कक्षा के निहित विषयों के साथ-साथ स्कूल के समस्त कार्यक्रम आते हैं। पाठ्यचर्या के सन्दर्भ में सबसे लोकप्रिय परिभाषा कनिंघम की मानी जाती है। कनिंघम के अनुसार– "पाठ्यचर्या अध्यापक रुपी कलाकार (artist) के हाथ में वह साधन (tool) है जिसके माध्यम से वह अपने पदार्थ रुपी शिष्य (material) को अपने कलागृह रुपी स्कूल (studio) में अपने आदर्श (उद्देश्य) के अनुसार विकसित अथवा रूप (mould) प्रदान करता है।" इसमें संदेह नहीं कि कलाकार को अपने पदार्थ को अपने आदर्शों के अनुरूप ढालने की बहुत स्वतंत्रता है, क्यों कि कलाकार का पदार्थ निर्जीव है, परन्तु स्कूल में अध्यापक का पदार्थ अर्थात् छात्र सजीव है। पुराने समय में जब आवश्यकताएँ सीमित थीं, साधन सीमित थे, तब अध्यापकों को अपने पदार्थ यानि कि छात्रों को नया रूप देने में पूरी स्वतंत्रता थी, परन्तु अब बदलती हुई परिस्थितियों में अध्यापक की यह भूमिका भी बदल गयी है। फिर भी निश्चय ही अध्यापक के हाथ में पाठ्यचर्या बहुत ही महत्वपूर्ण साधन है।

पाठ्यचर्या: अर्थ

पाठ्यचर्या शैक्षिक व्यवस्था का अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण अंग है। पाठ्यचर्या की अवधारणा के सन्दर्भ में प्रायः विद्वानों में एकमत राय नहीं है। पाठ्यचर्या को लोग पाठयचर्या (syllabus) या विषय वस्तु (course of study) या जैसे नामों से भी संबोधित करते हैं। पाठ्यचर्या के लिए प्रचलित ये शब्द अलग-अलग अर्थ और सन्दर्भों को प्रकट करते हैं। अतः पाठ्यचर्या को शाब्दिक, संकुचित और व्यापक तीनों अर्थों में समझने की जरुरत है। तब इसके सही स्वरूप को हम समझ सकते हैं।

पाठ्यचर्या शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– पाठ्य एवं चर्या। पाठ्य का अर्थ है- पढ़ने योग्य अथवा पढ़ाने योग्य और चर्या का अर्थ है – नियम पूर्वक अनुसरण। इस प्रकार पाठ्यचर्या का अर्थ हुआ पढ़ने योग्य (सीखने योग्य) अथवा पढ़ाने योग्य (सिखाने योग्य)। विषय वस्तु और क्रियाओं का

नियम पूर्वक अनुसरण। पाठ्यचर्या के लिए अंग्रेजी में करीकुलम (Curriculum)शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह शब्द लैटिन भाषा के क्यूरेरे (Currere) से बना है जिसका अर्थ है- रनवे (Runway) या रेस कोर्स (Race Course) अर्थात् दौड़ का रास्ता या दौड़ का क्षेत्र अर्थात् किसी निश्चित लक्ष्य तक पहुँचने के लिए मार्ग पर दौड़ना या ऐसे भी कह सकते हैं कि -Curriculum means a course to be run for reaching a certain goa।. इस प्रकार शाब्दिक अर्थ में पाठ्यचर्या छात्रों के लिए दौड़ का रास्ता या दौड़ के मैदान के समान है जिस पर चलते हुए छात्र अपने वांछित शैक्षिक उद्देश्यों को पूरा करता है। राबर्ट यूलिच (Robert Ulich) ने लिखा है कि- "शिक्षा के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जिन अध्ययन परिस्थितियों में क्रमिक रुपरेखा बनायी जाती है उसे पाठ्यचर्या कहते हैं। पाठ्यचर्या में शिक्षण के ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक तीनों पक्ष शामिल होते हैं।"

संकुचित अर्थ में पाठ्यचर्या के लिए एक अन्य शब्द सिलेबस (syllabus) या पाठयचर्या शब्द भीप्रयोग किया जाता है, जिसका अर्थ कोर्स ऑफ स्टडी या कोर्स ऑफ टीचिंग भी है। इसे पाठ्य विवरण या पाठ्य सामग्री या अंतर्वस्तु आदि भी कहते हैं। पाठयचर्या दो शब्दों से मिलकर बना है। पाठ्य + क्रम अर्थात् किसी विषय या अध्ययन की वह विषयवस्तु जो क्रम से व्यवस्थित हो पाठयचर्या कहलाता है। पहले पाठ्यचर्या के लिए पाठयचर्या शब्द का प्रयोग किया जाता था, लेकिन अब इसके संकुचित मान्यता पर आधारित होने के कारण अब पाठ्यचर्या शब्द का प्रयोग किया जाता है। पाठयचर्या में केवल ज्ञानात्मक पक्ष से सम्बंधित तथ्य ही क्रमबद्ध होते हैं। पाठ्यचर्या तथा पाठयचर्या में सामान्य लोग भेद नहीं करते और उन्हे पर्यायवाची शब्दों के रूप में प्रयोग करते हैं परन्तु इनमे पूर्ण और अंश का भेद है। पाठ्यचर्या तथा पाठयचर्या में प्रमुख अंतर इस प्रकार हैं –

1. पाठ्यचर्या जहाँ व्यापक संकल्पना है, वहीं पाठयचर्या सीमित संकल्पना है।
2. पाठ्यचर्या में नियोजित शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विद्यालय और विद्यालय से बाहर, जो कुछ भी संपादित से किया जाता है, वह सब समाहित होता है, जबकि पाठयचर्या केवल विद्यालय की सीमा में कक्षा के भीतर विकसित किये जाने वाले विभिन्न विषयों के ज्ञान की रूपरेखा मात्र होता है।
3. पाठ्यचर्या शब्द का प्रयोग कक्षा विशेष के सन्दर्भ में प्रयोग किया जाता है; जैसे- कक्षा 8 के लिए हिंदी का पाठ्यचर्या; परन्तु पाठयचर्या शब्द का प्रयोग कक्षा विशेष के किसी विषय विशेष तक सीमित होता है; जैसे- कक्षा 8 के लिए हिंदी का पाठयचर्या ।
4. पाठ्यचर्या संपूर्ण विद्यालयी जीवन की चर्या है जबकि पाठयचर्या पठनीय वस्तु का केवल एक क्रम मात्र होता है।
5. पाठ्यचर्या अपने आप में सम्पूर्ण है, जबकि पाठयचर्या पाठ्यचर्या का एक अंग मात्र है।

6. पाठ्यचर्या से सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास संभव है, जबकि पाठयचर्या से व्यक्तित्व के किसी एक पक्ष या किसी एक अंग का ही विकास संभव है।

दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि किसी स्तर की पाठ्यचर्या का वह भाग जिसमें उस स्तर के लिए सैद्धांतिक विषयों के ज्ञान की सीमा निश्चित की जाती है, पाठयचर्या होता है। स्पष्ट है कि पाठ्यचर्या और पाठयचर्या में पूर्ण और अंश का भेद होता है।

व्यापक अर्थ में पाठ्यचर्या (Curriculum) से आशय बालक के बहुआयामी विकास करने तथा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शिक्षक द्वारा अपनायी गयी वे तमाम परिस्थितियां होती हैं जिनसे बालक ज्ञान, अनुभव, क्रिया का अर्जन तथा आदत एवं व्यवहार में परिमार्जन करता है। इस प्रकार पाठ्यचर्या में शिक्षक द्वारा पढ़ाये जाने वाले विषय वस्तु या पाठयचर्या की क्रियाएं, प्रयोगशाला के कार्य, सामुदायिक कार्य, लेखन, वाचन, पुस्तकालय आदि सभी के क्रिया-कलाप शामिल होते हैं। यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार-" पाठ्यचर्या में विषय सामग्री का विस्तृत वर्णन (पाठयचर्या) और कुछ हद तक अध्ययन विधियों (Methodology) को भी शामिल किया जाता है जो कक्षा में सामग्री को ठीक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए प्रयुक्त की जाती हैं" ।अतः स्पष्ट है कि पाठ्यचर्या अपने व्यापक अर्थ में विद्यालय में तथा विद्यालय के बाहर अपनायी जाने वाली उन सभी सैद्धांतिक, व्यवहारिक, क्रियात्मक पहलुओं का संगठन है जो विद्यार्थियों का बहुपक्षीय विकास के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं ।व्यापक अर्थ में पाठ्यचर्या शब्द का प्रयोग अनेक रूपों में किया गया है। सामान्य रूप से इसका आशय इस प्रकार से समझा जा सकता है-

- विद्यालय में अध्ययन के लिए निर्दिष्ट पाठ्यचर्या तथा अन्य सम्बंधित सामग्री।
- विद्यार्थियों को पढ़ाये जाने वाली समस्त विषय सामग्री।
- किसी विद्यालय में किसी निश्चित विषय का पाठयचर्या ।
- विद्यालय में विद्यार्थियों को दिए जाने वाले नियोजित अधिगम अनुभवों का सम्मिलित रूप।

पाठ्यचर्या के व्यापक अर्थ को प्रकट करते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-1953 ई०) में लिखा है कि– "पाठ्यचर्या का अर्थ केवल उन सैद्धांतिक विषयों से नहीं है जो विद्यालय में परंपरागत रूप से पढ़ाये जाते हैं अपितु इसमें अनुभवों की वह सम्पूर्णता भी निहित है जिसमें बालक विद्यालय, कक्षा, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला तथा खेल के मैदान एवं शिक्षक और शिक्षार्थियों के अनगिनत संपर्कों से प्राप्त करता है, इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यचर्या बन जाता है, जो छात्रों के सभी पक्षों को प्रमाणित कर सकता है तथा विकास में सहायता दे सकता है।"

पाठ्यचर्या के सन्दर्भ में कतिपय विद्वानों ने इसे निम्न प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है –

क्रो और क्रो के अनुसार– "पाठ्यचर्या में विद्यार्थियों के विद्यालय या उसके बाहर के वे सभी अनुभव शामिल हैं जो अध्ययन कार्यक्रम में रखे जाते हैं जिसका आयोजन बालकों के मानसिक, शारीरिक, संवेगात्मक, सामाजिक, आध्यात्मिक और नैतिक स्तर पर विकास में सहायता करते हैं।"

के० जी० सैयेदेन के अनुसार- "पाठ्यचर्या वह सहायक सामग्री है जिसके द्वारा बच्चा अपने आप को उस वातावरण के अनुकूल ढालता है, जिसमें वह अपना दैनिक कार्य-व्यवहार करता है तथा जिसमें उसके भविष्य की योजनायें और क्रियाशीलता निहित हैं।"

डंकन ग्रिजेल के अनुसार– "विद्यालयी पाठ्यचर्या समाज की परम्पराओं, पर्यावरण एवं आदर्शों का प्रतिरूप है ।" (The school curriculum is the reflection of the traditional environment and ideas of the society)

बैंट तथा कोन्बेर्ग के अनुसार– "पाठ्यचर्याके अंतर्गत छात्रों के लिए प्रस्तुत की गयी विद्यालयीय वातावरण की वह समस्त सामग्री आती है जिसमें सारी पाठ्य-वस्तु, पठन क्रियाएं एवं विषय सम्मिलित हैं।"

कैसवेल के अनुसार- "बालकों एवं उनके माता-पिता तथा अध्यापकों के जीवन में आने वाली समस्त क्रियाओं को पाठ्यचर्या कहा जाता है। बालकों के कार्य करने के समय जो कुछ भी कार्य होता है उस सबसे पाठ्यचर्या का निर्माण होता है। वस्तुतः पाठ्यचर्या को गतियुक्त (dynamic) वातावरण कहा गया है।"

रडयार्ड तथा हेनरी के अनुसार- "विस्तृत अर्थ में पाठ्यचर्या के अंतर्गत समस्त विद्यालय का वातावरण आता है, जिसमें विद्यालय में प्राप्त सभी प्रकार के संपर्क, पठन क्रियाएँ एवं विषय सम्मिलित हैं।"

ब्रुवेकर के अनुसार– "पाठ्यचर्या एक ऐसा क्रम है जो किसी व्यक्ति को स्थान पर पहुँचने के लिए तय करना पड़ता है।"

ड्यूवी के अनुसार- "पाठ्यचर्या केवल अध्ययन की योजना या विषय सूची ही नहीं बल्कि कार्य और अनुभव की संपूर्ण श्रंखला है। पाठ्यचर्या समाज में कलात्मक ढंग से परस्पर रहने के लिए बच्चों के प्रशिक्षण का शिक्षकों के पास एक साधन है, सारांशतः पाठ्यचर्या सुनिश्चित जीवन का दर्पण है जो विद्यालय में प्रस्तुत किया जाता है।"

फ्रोबेल के अनुसार– "पाठ्यचर्या को मानव जाति के समस्त ज्ञान और अनुभव का सार समझना चाहिये।"

इस प्रकार पाठ्यचर्या का सम्बन्ध सीखने वाले एवं सिखाने वाले से होता है । यह सीखने और सिखाने वाले को जोड़ने वाली एक अनियार्य कड़ी है।

पाठ्यचर्या: प्रकृति,

फ्रांसिस जे० ब्राउन ने अपनी पुस्तक "शैक्षिक समाज विज्ञान" में लिखा है कि– "पाठ्यचर्या उन समग्र परिस्थितियों का समूह है जिसकी सहायता से शिक्षक तथा विद्यालय उन सभी बालकों तथा नवयुवकों के व्यवहार में परिवर्तन लाते हैं जो विद्यालय से होकर गुजरते हैं।" इससे यह स्पष्ट होता है कि पाठ्यचर्या विद्यालय की व्यवस्था का मूल आधार होती है । शिक्षा की सम्पूर्ण व्यवस्था पाठ्यचर्या पर केन्द्रित होती है। पाठ्यचर्या द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है । शिक्षक और शिक्षार्थी पाठ्यचर्या को केंद्र में रख कर विचारों के आदान-प्रदान द्वारा किसी चीज को सीखते हैं तथा व्यवहार में परिवर्तन लाते हैं। पाठ्यचर्या से ही छात्र जीवन जीने की कला(Art of living) सीखते हैं। पाठ्यचर्या की प्रकृति को निम्नलिखित तथ्यों से हम इस प्रकार से समझ सकते हैं-

- पाठ्यचर्या सदैव पूर्ण नियोजित होती है इसमें निहित क्रियाओं को आवश्यकतानुसार एकाएक विकसित नहीं किया जा सकता है।
- पाठ्यचर्या के चार मुख्य आधार होते हैं –सामाजिक शक्तियां, स्वीकृत सिद्धांतों द्वारा प्राप्त मानव विकास का ज्ञान, अधिगम का स्वरुप, तथा ज्ञान और संज्ञान का स्वरूप। इस प्रकार पाठ्यचर्या किसी विशिष्ट समाज के एक विशिष्ट आयु वर्ग के बच्चों की शिक्षा के लिए निर्मित होती है। किसी विशिष्ट व्यवसाय हेतु कक्षा आठ की बालिकाओं के लिए विकसित पाठ्यचर्या इसी कक्षा के लड़कों के लिए पूरी तरह निरर्थक भी हो सकती है।
- पाठ्यचर्या के लक्ष्य या प्रयोजन उससे सम्बंधित शैक्षिक उद्देश्यों से निर्दिष्ट होते हैं। ये उद्देश्य ही साध्य हैं तथा स्वीकृत पाठ्यचर्या इन्हें प्राप्त करने का साधन है । पाठ्यचर्या अध्यापक के अनुदेशों को नियोजित करने में सहायक होती है। अधिगम अनुभवों की गुणवत्ता तथा सार्थकता ही पाठ्यचर्या के क्रियान्वयन के प्रभाव का निर्धारण करती है।
- अध्यापक अपनी कक्षा के सभी विद्यार्थियों के लिए एक ही प्रकार के अधिगम अनुभवों का नियोजन करता है फिर भी अपने अधिगम अनुभवों तथा अपनी सहभागिता के स्तर एवं गुणवत्ता के कारण छात्रों में भिन्नता दिखाई देती है उनमें व्यक्तिगत भेद तथा सामाजिक प्रष्ठभूमि की विभिन्नता एक प्रकार के परिणाम के लिए उत्तरदायी है यही कारण है कि एक ही कक्षा के

प्रत्येक छात्र की वास्तविक पाठ्यचर्या उसी कक्षा के अन्य छात्रों की पाठ्यचर्या कि अपेछा भिन्न होती है।

- प्रत्येक अधिगमकर्ता की अपनी वास्तविक पाठ्यचर्या के अस्तित्व के परिणामस्वरुप निर्दिष्ट पाठ्यचर्या तथा क्रियान्वित पाठ्यचर्या के बीच पाए जाने वाले अंतर के कारण अध्यापक की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती हैं उसे कक्षा में न केवल लचीली व्यवस्था प्रदान करनी होती है वरन अधिगम के सार्थक विकल्प भी खोजने पड़ते हैं। किसी दी गयी पाठ्यचर्या के उद्देश्य, आधार तथा मापदंड की दृष्टी से अध्यापक में उपयुक्त व्यावसायिक निर्णय लेने कि क्षमता निहित होनी चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

1. पाठ्यचर्या विद्यालय की शिक्षा व्यवस्था का केंद्र बिंदु है। (सत्य/असत्य)
2. ---------- ने कहा था कि- "जो स्थितियां है.....मानव समाज इनके शिक्षण के प्रति न तो एकमत है और न शिक्षण के लिए अपनाये जाने वाले साधनों के प्रति ही।"
3. ----------ने लिखा है कि- "शिक्षा के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जिन अध्ययन परिस्थितियों में क्रमिक रुपरेखा बनायी जाती है उसे पाठ्यचर्या कहते हैं। पाठ्यचर्या में शिक्षण के ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक तीनों पक्ष शामिल होते हैं।"
4. ---------- जहाँ व्यापक संकल्पना है, वहीं ---------- सीमित संकल्पना है।
5. ---------- के अनुसार-" पाठ्यचर्या में विषय सामग्री का विस्तृत वर्णन (पाठयचर्या) और कुछ हद तक अध्ययन विधियों (Methodology) को भी शामिल किया जाता है जो कक्षा में सामग्री को ठीक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए प्रयुक्त की जाती हैं"
6. किसके के अनुसार– "पाठ्यचर्या में विद्यार्थियों के विद्यालय या उसके बाहर के वे सभी अनुभव शामिल हैं जो अध्ययन कार्यक्रम में रखे जाते हैं जिसका आयोजन बालकों के मानसिक, शारीरिक, संवेगात्मक, सामाजिक, आध्यात्मिक और नैतिक स्तर पर विकास में सहायता करते हैं।"
7. "शैक्षिक समाज विज्ञान" नामक पुस्तक के लेखक कौन हैं ?

1.4 पाठ्यचर्या: क्षेत्र एवं विशेषताएं

पाठ्यचर्या: क्षेत्र

हर समाज राज्य अथवा राष्ट्र की अपनी मान्यताएं, विश्वास, आदर्श, मूल्य और आवश्यकताएं होती हैं, इनकी पूर्ति के लिए वह शिक्षा का विधान करता है और शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जिन विषयों का ज्ञान एवं क्रियाओं का प्रशिक्षण आवश्यक समझा जाता है उन्हें पाठ्यचर्या में स्थान दिया जाता है।इस प्रकार पाठ्यचर्या शिक्षक और छात्रों के सामने स्पष्ट एवं निश्चित लक्ष्य रखती है और उनकी प्राप्ति के लिए उनके कार्य निश्चित करती है। नियोजित शिक्षा के लिए पाठ्यचर्या की बहुत आवश्यकता होती है। यह सर्वविदित है कि जो आवश्यक है वह उपयोगी होगा और साथ ही उसका एक निश्चित महत्व होगा। यही बात पाठ्यचर्या पर भी लागू होती है। पाठ्यचर्या के क्षेत्र को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है-

1. पाठ्यचर्या के माध्यम से शिक्षा की प्रक्रिया सुचारू रूप से चलती है। शिक्षा के किस स्तर (पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च) पर किन पाठ्य विषयों को पढ़ाना है, किन क्रियाओं को सिखाना है और किन अनुभवों को देना है ये सभी बातें पाठ्यचर्या में स्पष्ट रूप से दी जाती हैं। इस प्रकार से विद्यालयी जीवन के कार्यक्रम की पूरी रूपरेखा पाठ्यचर्या में मिलती है।
2. पाठ्यचर्या के उपलब्ध हो जाने से आवश्यक एवं वांछित पाठ्य सामग्री को पुस्तक की रचना के समय ध्यान में रखा जाता है। इससे उपयुक्त एवं स्तरानुकूल पुस्तकों का निर्माण हो पता है जिनसे बालक के विकास में सहायता मिलती है।
3. पाठ्यचर्या छात्र एवं अध्यापक दोनों को सही दिशा बोध कराती है इससे समय और शक्ति का अपव्यय नहीं होता है। दोनों निश्चित लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं और समय पर वहां पहुँच जाते हैं। इस प्रकार पाठ्यचर्या द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति संभव हो पाती है।
4. एक निश्चित स्तर के लिए एक निश्चित पाठ्यचर्या होने से पूरे प्रदेश अथवा देश में शैक्षिक स्तर की समानता और एकरूपता बनी रहती है जब किसी नए विषय की पढ़ाई किसी शिक्षा संस्था में प्रारंभ हो जाती है अथवा कोई नयी योजना लागू की जाती है तब सबसे पहले पाठ्यचर्या को ही निर्धारित करना पड़ता है।
5. पाठ्यचर्या से मूल्यांकन सरल और संभव होता है। बिना पाठ्यचर्या के मूल्यांकन करना संभव नहीं होता है। अतः मूल्यांकन के लिए पाठ्यचर्या एक निश्चित आधार प्रदान करती है।
6. पाठ्यचर्या से उद्देश्यों की प्राप्ति संभव होती है।
7. पाठ्यचर्या से समय और शक्ति का सदुपयोग होता है।

पाठ्यचर्या के मुख्य रूप से निम्न भेद दिखाई पड़ते हैं -

1. विषय केन्द्रित पाठ्यचर्या
2. बाल केन्द्रित पाठ्यचर्या
3. मिश्रित पाठ्यचर्या
4. आधारभूत पाठ्यचर्या
5. क्रिया केन्द्रित पाठ्यचर्या
6. अनुभव केन्द्रित पाठ्यचर्या
7. समाकलित केन्द्रित पाठ्यचर्या
8. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या
9. कोर पाठ्यचर्या

पाठ्यचर्या: विशेषताएं

हर व्यक्ति की अपनी कुछ आवश्यकताएं होती हैं व्यक्ति की भांति समाज और देश की भी अपनी-अपनी आवश्यकताएं होती हैं। आवश्यकता के परिक्षेत्र में शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं इन उद्देश्यों की प्राप्ति विषयों के ज्ञान और क्रियाओं के माध्यम से होती है इन विषयों और क्रियाओं को पाठ्यचर्या में स्थान दिया जाता है। पाठ्यचर्या से पता लगता है कि क्या पढ़ना और क्या पढ़ाना है ? किन क्रियाओं में भाग लेना है ? इसलिए छात्र और अध्यापक दोनों के लिए पाठ्यचर्या की आवश्यकता होती है। छात्र के व्यक्तित्व विकास के लिए शिक्षा एक साधन है। व्यक्तित्व विकास के उद्देश्य से पाठ्यचर्या में अनेक बौद्धिक विषयों को सम्मिलित किया जाता है अनेक क्रियाओं और खेल-कूदों का आयोजन होता है अनेक कौशलों को सिखाया जाता है पुस्तकालय, वाचनालय, प्रयोगशाला आदि की समुचित व्यवस्था की जाती है। इस प्रकार बालक की सुप्त शक्तियों को जगाने और उनके विकास के निमित्त पाठ्यचर्या आवश्यक प्रतीत होती है।

जब बालक विभिन्न विषयों को पढ़ता है, विभिन्न क्रियाओं में भाग लेता है, विभिन्न तरह के अनुभव प्राप्त करता है तब इन सबके द्वारा उसे अपने समाज की, अपने देश की परम्परा और संस्कृति से परिचय होता है। संस्कृति की रक्षा के साथ-साथ बालक अपनी सृजनात्मक शक्तियों द्वारा उस संस्कृति में आवश्यक परिवर्तन, परिवर्द्धन एवं परिष्कार करता है। समाजीकरण की इस प्रक्रिया में प्रभावी ढंग से भाग लेने के लिए पाठ्यचर्या की बहुत आवश्यकता होती है। पाठ्यचर्या विद्यालयीय कार्यक्रम की एक निश्चित योजना प्रस्तुत करती है। विभिन्न स्तरों के विद्यालयों में बालकों के मानसिक स्तारानुकूल किन क्रियाओं को सिखाया जायेगा और किन विषयों को पढ़ाया जायेगा यह पाठ्यचर्या द्वारा ही निश्चित हो पाता है। पाठ्यचर्या कि सहायता से पुस्तकें निर्धारित कि जाती हैं।

पाठ्यचर्या के आधार पर मूल्यांकन कार्य सरल हो जाता है। पाठ्यचर्या विशेष कर प्राथमिक और माध्यमिक स्तरों पर समाजोपयोगी उत्पादन कार्य एवं कार्यानुभव पर बल देकर शिक्षा को जीवन से जोड़ती है। इन सब कारणों से पाठ्यचर्या आवश्यक है। पाठ्यचर्या की विशेषताओं या महत्व को इस प्रकार से समझा जा सकता है।

1. **शिक्षक के लिए महत्व -** पाठ्यचर्या से शिक्षक को अपने शिक्षणके स्वरुप का निर्धारित करने, शिक्षण का संचालन करने तथा छात्रों की उपलब्धियों को जानने का अवसर प्राप्त होता है। पाठ्यचर्या से शिक्षक अपनी शिक्षण विधि का चयन करने में समर्थ होता है और छात्रों का उचित प्रकार से मार्गदर्शन करने में समर्थ होता है।

2. **शिक्षार्थियों के लिए महत्व** – शिक्षार्थी को इससे अपने शिक्षा के उदेश्यों को पूरा करने में मदद मिलती है। छात्रों को पाठ्यचर्या से पूर्व तैयारी का अवसर मिलता है तथा वे यह जानने में समर्थ होते हैं कि अमुख विषयों में कितना तथ्य पढ़ना है? अर्थात् पाठ्यचर्या के आधार पर शिक्षार्थी अपनी अध्ययन योजना बनाते हैं तथा उस पर चलकर सफलता की प्राप्ति करते हैं।

3. **समाज के लिए महत्व-** पाठ्यचर्या से समाज को भी लाभ पहुँचता है। समाज पाठ्यचर्या द्वारा नवीन मंतव्यों को जानता है तथा उसके अनुरूप अपनी जीवन शैली एवं मान्यताओं को समय के साथ बदलता जाता है। पाठ्यचर्या से ही समाज में पारस्परिक मान्यताओं के स्थान पर परिवर्तित मान्यताओं का दिग्दर्शन होता है। कारण यह है कि विद्यालयी जीवन में पाठ्यचर्या में निहित नवीन मान्यताओं एवं तथ्यों को सीखने के बाद जब बालक विद्यालयी जीवन से निकलकर सामाजिक जीवन में पदार्पण करता है तो वह समाज को कुछ नवीनता युक्त मंतव्य देता है जब इसका व्यापक स्तर पर प्रचार प्रसार हो जाता है तो वह नवीन आयाम, तथ्य, विचार, मान्यता, मूल्य के साथ मिलकर उस आदर्श समाज का अभिन्न अंग बन जाता है। इस प्रकार पाठ्यचर्या समाज के लिए भी उपयोगी है।

4. **सांस्कृतिक उन्नयन हेतु महत्व-** समाज एवं संस्कृति के उन्नायक तत्वों को पाठ्यचर्या में स्थान दिया जाता है। यह तत्व शिक्षा एवं समाज दोनों के उन्नयन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। पाठ्यचर्या के सांस्कृतिक मूल्यों की सीख प्राप्त करके विद्यार्थी अपनी संस्कृति एवं सभ्यता की विशिष्टता, उसकी मौलिकता, करणीय एवं अकरणीय कर्तव्यों, जीवनदर्शों का ज्ञान प्राप्त करते हैं। कालान्तर में ऐसे बालक ही विद्यालय से निकलकर

अपनी सृजनात्मक प्रतिभा द्वारा सांस्कृतिक विरासत की रक्षा तथा उसके उन्नयन हेतु समर्पित होकर कार्य करते हैं।

5. **अवबोध के विकास हेतु महत्व-** विद्यालय में बालक विविध विषयों का जब अध्ययन करता है एवं विविध पाठ्य सहगामी क्रियाओं में हिस्सा लेता है तथा अध्ययन के द्वारा पाठ्यचर्या से तरह-तरह के अनुभव अर्जित करता है तो इससे उसकी अंतर्दृष्टि (बोध) प्रखर बनती है और उसमें अवबोध (समझदारी) का प्रकटन होता है।

1.5 पाठ्यचर्या का अधिगमकर्ता के साथ सम्बन्ध

पाठ्यचर्या छात्र और अध्यापक दोनों के लिए अति महत्तवपूर्ण अंग होती है। यह छात्र के व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक होती है। इससे छात्र समाजीकरण की प्रक्रिया में भाग लेने के लिए तैयार हो जाते हैं। पाठ्यचर्या यह निश्चित करने के लिए भी महत्तवपूर्ण है कि विभिन्न मानसिक स्तर के विद्यालयों में पढ़ने वाले बालकों के उनके मानसिक स्तर के अनुकूल कौन सी क्रियाएँ सिखाना है और कौन सी नहीं ? यह छात्रों को समुचित पुस्तकों के निर्धारण एवं चयन में सहायक होती है। इससे छात्रों को अपना मूल्यांकन कार्य करने में सरलता होती है। यह छात्रों को समाजोपयोगी उत्पादन कार्य और कार्यानुभव पर बल देकर शिक्षा को जीवन से जोड़ने के लिए प्रेरित करती है। इससे क्या पढ़ाना है? क्या सिखाना है? क्या कार्यानुभव देना है? यह शिक्षक ज्ञात कर सकते हैं। इससे छात्र और अध्यापक दोनों को सही दिशा बोध कराने से समय और शक्ति की बचत हो जाती है यह अधिगम हेतु सही समय का निर्धारण करने में उपयोगी होती है। इससे बालकों की मनोवैज्ञानिक आवश्कता की पूर्ति होती है। पाठ्यचर्या के निर्माण एवं क्रियान्वयन में अध्यापक का विशेष महत्व है। पाठ्यचर्या शिक्षा प्रक्रिया का महत्वपूर्ण अंग है। शिक्षा के उद्देश्य तभी पूरे होते हैं जबकि पाठ्यचर्या का निर्माण तथा क्रियान्वयन प्रभावपूर्ण ढंग से होता है और यह निर्माण तथा क्रियान्वयन प्रभावपूर्ण ढंग से तभी हो सकता है जबकि अध्यापक और छात्र सजग एवं जागरूक हों और उत्साह तथा लगन के साथ इस कार्य में भाग लें। आदर्श पाठ्यचर्या तो वह है जो प्रत्येक छात्र का सर्वांगीण विकास कर सके परन्तु ऐसे पाठयचर्या का निर्माण अभी तो कोरी कल्पना है। यह कार्य तभी संभव है जबकि प्रत्येक अध्यापक प्रत्येक छात्र के लिए अलग-अलग पाठयचर्या का निर्माण करे। वैसे विकसित देशों में इस प्रकार के प्रयास किये जा रहे हैं, जिनमे शिक्षा तथा पाठयचर्या बाल केन्द्रित हो। कहने का आशय यह है कि बालक की रुचियों, अभिरुचियों तथा शक्तियों के विकास के लिए अधिक से अधिक अवसर प्राप्त हों। हमे इस प्रकार की पाठ्यचर्या के निर्माण एवं क्रियान्वयन के प्रति सजग रहना होगा।

1.6 सारांश

पाठ्यचर्या के निर्माण एवं क्रियान्वयन में सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था का अभूतपूर्व योगदान रहता है। पाठ्यचर्या एक ऐसी धुरी के रूप में है जिसके चारो ओर कक्षा के विविध कार्य तथा विद्यालय के समस्त क्रियाकलाप विकसित किये जाते हैं ।पाठ्यचर्या विद्यालय की शिक्षा व्यवस्था का केंद्र बिंदु है । विद्यालय में उपलब्ध सभी संसाधन जैसे- विद्यालय भवन, विद्यालय के अन्य उपकरण, पुस्तकालय की पुस्तकें तथा अन्य शिक्षण सामग्री का एक मात्र उद्देश्य पाठ्यचर्या के प्रभावी क्रियान्वयन में सहयोग देना है। कक्षा की समस्त क्रियाएं, पठ्यसहगामी क्रियाकलाप तथा मूल्यांकन की समस्त प्रक्रिया विद्यालयी पाठ्यचर्या के परिणामस्वरुप ही नियोजित की जाती हैं । पाठ्यचर्याशिक्षा का आधार है। पाठ्यचर्या द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। यह एक ऐसा साधन है जो छात्र तथा अध्यापक को जोड़ता है । अध्यापक पाठ्यचर्या के माध्यम से छात्रों के मानसिक, शारीरिक, नैतिक, सांस्कृतिक, संवेगात्मक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक विकास के लिए प्रयास करता है। पाठ्यचर्या द्वारा छात्र को जीवन जीने की शिक्षा प्राप्त होती है। इससे अध्यापकों को दिशा-निर्देश प्राप्त होते हैं । छात्रों के लिए लक्ष्य निर्धारित होने से उनमे एकाग्रता आती है । वे नियमित रहकर कार्य करते हैं । पाठ्यचर्या एक प्रकार से अध्यापक के पश्चात् छात्रों के लिए दूसरा पथ प्रदर्शक है । पाठ्यचर्या में किसी भी कक्षा के निहित विषयों के साथ-साथ स्कूल के समस्त कार्यक्रम आते हैं। पाठ्यचर्या में शिक्षण के ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक तीनों पक्ष शामिल होते हैं । शिक्षा की सम्पूर्ण व्यवस्था पाठ्यचर्या पर केन्द्रित होती है । पाठ्यचर्या द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है । शिक्षक और शिक्षार्थी पाठ्यचर्या को केंद्र में रख कर विचारों के आदान-प्रदान द्वारा किसी चीज को सीखते हैं तथा व्यवहार में परिवर्तन लाते हैं । अंत में हम कह सकते हैं कि पाठ्यचर्या किसी भी विद्यालय की व्यवस्था का मूल आधार होती है।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सत्य
2. अरस्तू
3. राबर्ट यूलिच
4. पाठ्यचर्या ,पाठयचर्या
5. यूनेस्को की रिपोर्ट
6. क्रो और क्रो
7. फ्रांसिस जे० ब्राउन

1.8 संदर्भ–ग्रन्थ

1. Crow, l.D, Alice Crow (1962), Introduction of Education, EurasiaPublishing House, New Delhi.
2. Spears, H (1953), Some Principles of Teaching,Prentice Hall, New *York.*
3. Saler and others (1956), Curriculum Planning for Better Teaching and learning,Rinehart, NewYork.
4. माथुर, एस०.एस० (1981), शिक्षण कला, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
5. मिश्र, आत्मानन्द(1985), शिक्षण कला, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
6. पाल एस० के० एवं अग्रवाल, के० एल० (1995), शिक्षा के सामान्य सिद्धांत,वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. पाठ्यचर्या कि संकल्पना से आप क्या समझते हैं?
2. पाठ्यचर्या और पाठयचर्या में क्या अंतर है?
3. आपके अनुसार पाठ्यचर्या कि सबसे अच्छी परिभाषा किसकी है और क्यों?
4. विद्यालय के लिए पाठ्यचर्या का क्या महत्व है? यह विद्यालय को किस प्रकार अधिगम अनुभव आयोजित करने में सहायता प्रदान करती है ,चर्चा कीजिए।
5. पाठ्यचर्या का छात्रों के लिए क्या महत्व है? विस्तार से चर्चा कीजिए।

इकाई 2 पाठयचर्या के प्रकार

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 पाठयचर्या का अर्थ
2.4 पाठयचर्या के उद्देश्य
2.5 पाठयचर्या के प्रकार
2.6 सारांश
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भग्रन्थ
2.9 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

पाठयचर्या की प्राचीन अवधारणा में तथ्यों के ज्ञान की सीमा निश्चित करना सम्मिलित था। समाज की भौतिक तथा सांस्कृतिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा शास्त्री विद्यालयी विषयों में देश, काल, समय की आवश्यकता के अनुसार सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में शिक्षा के लक्ष्य निर्धारित करते हैं। शिक्षक शिक्षा शास्त्री द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को पाठयचर्या के माध्यम से मूर्त रूप देता है। निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सुनियोजित व्यवस्था को पाठयचर्या कहा जा सकता है। पाठयचर्या लक्ष्यों को प्राप्त करने का एक साधन मात्र है। निश्चित पाठयचर्या के अभाव में लक्ष्यों की प्राप्ति असम्भव है।

किसी भी पाठयचर्या की वैज्ञानिकता एवं उसके उद्देश्यों को जानने के पश्चात हमें यह निर्णय करना होता है कि उसके उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कौन सी और कितनी विषय वस्तु पढ़ाई जानीचाहिए, साथ ही इस विषय वस्तु का चयन एवं संगठन किस प्रकार किया जाए जिससे हमारे लक्ष्य की प्राप्ति हो सके।

पाठयचर्या द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। यह एक ऐसा साधन है जो छात्र तथा अध्यापक को जोड़ता है। अध्यापक पाठयचर्या के माध्यम से छात्रों के मानसिक, शारीरिक, नैतिक, सांस्कृतिक, संवेगात्मक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक विकास के लिए प्रयास करता है। पाठयचर्या द्वारा छात्रों को "जीवन" कला में प्रशिक्षण के अवसर मिलते हैं अध्यापकों को दिशा निदक्रश प्राप्त होता है। छात्रों के लिए लक्ष्य निर्धारित होने से उनमें एकाग्रता आती है। वे नियमित रहकर कार्य करते

हैं। पाठयचर्या एक प्रकार से अध्यापक के पश्चात छात्रों के लिए दूसरा पथ-प्रदर्शक है। पाठयचर्या में पाठयचर्या विषयों के साथ-साथ स्कूल के सारे कार्यक्रम आते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. पाठयचर्या के अर्थ को समझ सकेंगे।
2. पाठयचर्या के उद्देश्यों को जान पाएगें।
3. पाठयचर्या के प्रकारों की व्याख्या कर पाएगें।

2.3 पाठयचर्या का अर्थ (Meaning Of Curriculum)

कुरीकुलम शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के एक शब्द क्यूररे Currere से हुई है जिसका अर्थ है Race Course दौड़ का मैदान । इस प्रकार पाठयचर्या वह दौड़ का मैदान है, जिस पर विद्यार्थी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दौड़ता है।

पाठयचर्या की आधुनिक अवधारणा के अन्तर्गत हम कह सकते हैं कि किसी भी कक्षा शिक्षण के अन्तर्गत सैद्धान्तिक और क्रियात्मक दोनों प्रकार का ज्ञान एक निश्चित सीमा में छात्रों को दिया जाता है। उसे पाठयचर्या कहते हैं।

मुनरो के अनुसार-'' पाठयचर्या में वे समस्त अनुभव निहित है जिनको विद्यालय द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयोग में लिया जाता है''

"Curricu।um embodies a।। the experiences which are uti।ized by the schoo। to attain the aim of education." **Munroe**

माध्यमिक शिक्षा आयोग- '' पाठयचर्या का अर्थ केवल उन सैद्धान्तिक विषयों से नहीं है जो विद्यालय में परम्परागत ढंग से पढ़ाए जाते हैं, वरन् इसमें अनुभवों की वह सम्पूर्णता निहित है जिसको छात्र विद्यालय, कक्षा, पुस्तकालय, वक्रशाप, प्रयोगशाला और खेल के मैदान तथा शिक्षकों एवं शिष्यों के अगणित अनौपचारिक सम्पर्का से प्राप्त करता है। इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठयचर्या हो जाता है। जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर सकता है। और उनके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता देता है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा बताई गई परिभाषा से आपको स्पष्ट हो गया होगा कि पाठयचर्या का अर्थ मात्र कक्षा शिक्षण से नहीं है अपितु इसका सम्बन्ध सम्पूर्ण क्रियाकलापों से है।

2.4 पाठयचर्या के उद्देश्य Objectives

विद्यालय में विभन्न स्तरो के लिए पृथक पृथक पाठयचर्या का निर्माण किया जाता है। पाठयचर्या निर्धारण के समय कुछ विशेष उद्देश्यों को ध्यान में रखना अत्यंत आवश्यक है। पाठयचर्या बनाते समय छात्रों केजीवन से सम्बंधित विभिन्न बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाना अति आवश्यक है। एक अच्छे और आदर्श पाठयचर्या में कुछ उद्देश्यों का होना अति आवश्यक है। जैसे-

1. पाठयचर्या ऐसा हो जो कि छात्रों का बहुमुखी विकास कर सके।
2. पाठयचर्या का उद्देश्य छात्रों की रुचियों, क्षमताओं तथा योग्यताओं को जागृत करना हो।
3. पाठयचर्या छात्रों की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास कर सके।
4. पाठयचर्या का उद्देश्य छात्रों में सामाजिक गुणों का विकास करना हो।
5. पाठयचर्या ऐसा होना चाहिए जिससे छात्रों में कर्तव्य पालन की भावना का विकास हो सके।
6. पाठयचर्या का एक मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों में प्रजातन्त्र की भावना का विकास करना हो। जिससे वह भविष्य में एक आदर्श नागरिक बन सके।
7. पाठयचर्या का उद्देश्य छात्रों की कल्पना शक्ति, चिन्तन, निर्णयन तथा तक्र शक्ति का विकास करना होना चाहिए।
8. पाठयचर्या ऐसा हो जिससे छात्र अपने जीवन के मूल्यों का निर्माण करना स्वयं सीख सकें।

अतः उपरोक्त के सन्दर्भ में कह सकते हैं कि पाठयचर्या का उद्देश्य विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास करना है।

अभ्यास प्रश्न

1. करीकुलम शब्द की उत्पत्ति _____ भाषा के शब्द_____ से हुई है।
2. Currere शब्द का अर्थ है _____ ।
3. _____ के अनुसार - ‘‘ पाठयचर्या में वे समस्त अनुभव निहित है जिनको विद्यालय द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयोग में लिया जाता है ’’
4. पाठयचर्या का उद्देश्य विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास करना है।(सत्य/असत्य)
5. एक अच्छे और आदर्श पाठयचर्या के कोई दो उद्देश्य लिखिए

2.5 पाठयचर्या के प्रकार Types Of Curriculum

पाठयचर्या वह शिक्षा धुरी है जिसके द्वारा बालक को नियोजित तरीके से शिक्षक द्वारा अनुसरण किया जाता है। विद्यालय में शैक्षिक अनुभवों को चुनने एवं कार्यान्वित रूप में लाने के लिए

योजनाबद्ध तरीके से उन सीखने की क्रियाओं को शिक्षक द्वारा अनुसरण किया जाता है। पाठयचर्या आयोजन वह संरचना एवं ढांचा है जिसको अपनाकर अनुभवों के आधार पर निर्मित किया जाता है। पाठयचर्या को निम्न प्रमुख प्रकारों के द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।-

1. कोर पाठयचर्या
2. समेकित पाठयचर्या
3. सैद्धान्तिक पाठयचर्या
4. क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या
5. पुनर्संरचनात्मक पाठयचर्या

कोर पाठयचर्या

कोर पाठयचर्या वह है जिसमें बालक को कुछ विषय अनिवार्य रूप से पढ़ने होते हैं। तो कुछ विषयों का विविध विषयों में से चुनाव करना पड़ता है राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में कोर पाठयचर्या को अधिक महत्व दिया है। पाठयचर्या इस बात पर बल देता है कि विद्यालय अधिक सामाजिक दायित्वों को ग्रहण करे और सामाजिक रूप से कुशल क्षमतावान कर्तव्यपरायण व्यक्तियों का निर्माण करें। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में वर्णित है कि हमारा भारतीय समाज अनेक वगाक्रं, सम्प्रदायों, जातियों, संस्कृतियों, सभ्यताओं, प्रथाओं, मान्यताओं,भौगोलिक स्थितियों तथा विविध भाषाओं में बटा हुआ है। इसलिए पाठयचर्या का सृजन स्थानीय भाषायी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। कुछ विषय अनिवार्य एवं कुछ क्षेत्रीयता या भाषायी विषयों ऐच्छिक रूप में होना चाहिए। जिससे हम अपने भारतीय समाज में कर्तव्यनिष्ठ एवं परिश्रमी व्यक्तियों का निर्माण कर सके। इसके द्वारा हमारे समाज में व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्याओं का अन्त हो सके। कोर पाठयचर्या व्यक्ति को सामाजिक जीवनयापन करने पर जोर देता है। कोर पाठयचर्या बालक के सामान्य विकास पर केन्द्रित है। इसलिए भारतीय समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ विषयों को ध्यान में रखना जरूरी है। जैसे लोकतंत्र, भारतीय स्वतंत्रता का इतिहासत्र सभी वगाक्रं में समानता, स्थानीय भाषाओं का ज्ञान, सामाजिक समता, धर्म निरपेक्षता, पर्यावरण संरक्षण,जनसंख्या, मानवाधिकार, संस्कृति एवं सभ्यता, राष्ट्रीयता की भावना को ध्यान में रखकर अनिवार्य एवं ऐच्छिक विषय का चयन किया जाना चाहिए। क्योंकि कोर पाठयचर्या उपयोगिता की दृष्टि से पाठयचर्या का एक अहम हिस्सा बन चुका है। इसका प्रमुख कारण आधुनिक युग की सामाजिक अव्यवस्था है। हमें बालक को विद्यालय में सामाजिक दायित्वों को ग्रहण कराना है, जिससे वह कुशल व्यक्तियों का निर्माण करें। शिक्षण में एक मुख्य पाठयचर्या अथवा अध्ययन का कोर्स होता है। जिसकी भूमिका को केन्द्रीय माना जाता है तथा जिसे आमतौर पर एक स्कूल या स्कूल पद्धति के सभी छात्रों के लिए अनिवार्य रूप् से लागू किया जाता है। हालांकि हमेशा ऐसा नहीं होता है।

उदाहरण के लिए कोई स्कूल संगीत संबंधी कक्षा को अनिवार्य कर सकता है। लेकिन छात्र यदि आकक्रस्टा, बैंड, कोरस जैसे किसी प्रदर्शन करने वाले समूह में भाग लेते हैं तो इससे बाहर रहने का चुनाव कर सकते हैं। प्रमुख कोर पाठयचर्या को अक्सर प्राथमिक तथा माध्यमिक सतर पर स्कूली बोर्ड, शिक्षा विभाग या शिक्षा का कार्य देखने वाली अन्य प्रशासनिक संस्थाओं द्वारा स्थापित कर दिया जाता है।

प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा में कोर पाठयचर्या

संयुक्त राज्य अमेरिका में कॉमन कोर स्टेट स्टैंडर्ड इनीशिएटिव एक सरकार पहल राज्यों को एक प्रमुख पाठयचर्या अपनाने और उसका विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित करती है। इस समन्वय का उद्देश्य राज्यों समान पाठ्यपुस्त्कों के अधिक उपयोग और न्यूनतम स्तर की शिक्षा प्राप्ति में और अधिक समानता को बढ़ावा देना है। 2009-2010 में राज्यों को इन मानकों को अपनाने के लिए प्रोत्साहन के रूप् में संघ के रेस टू दी टॉप कार्यक्रम से धन मुहैया करवाने की संभावना का आश्वासन दिया गया।

उच्च शिक्षा में कोर पाठयचर्या - कई कॉलेज और विश्वविद्यालय प्रशासन एवं फैकल्टी कभी-कभी स्नातक स्तर पर कोर पाठयचर्या को अनिवार्य कर देते हैं। विशेष रूप् से लिबरल आर्ट्स में छात्रों द्वारा अध्ययन किए जा रहे प्रमुख विषयों की गहराई तथा अधिक विशेषज्ञता के कारण उच्च शिक्षा के एक सामान्य कोर पाठयचर्या में हाईस्कूल अथवा प्राथमिक स्कूल की अपेक्षा छात्रों के अध्ययन संबंधी कार्यों को काफी कम मात्रा में निर्धारित किया जाता है।

इसके अलावा जैसे -जैसे बीसवीं सदी में कई अमेरिकी स्कूलों के कोर पाठयचर्या में कमी आने लगी, कई छोटी संस्थायें ऐसे कोर पाठ्यकम अपनाने के लिए तैयार हो गईं जिनमें छात्रों की लगभग पूरी स्नातक शिक्षा को समाहित किया जाता था। संयुक्त राज्य अमेरिका का सेंट जॉन कॉलेज इस दृष्टिकोण का एक उदाहरण है।

उद्देश्य

1. **कोर पाठयचर्या का परम उद्देश्य (Ultimate goal of Core Curricu\um)** व्यक्तिगत गणना और नागरिक जीवन में शामिल होने के लिए तैयारी के रूप में, उदार कला शिक्षा के शास्त्रीय आदर्श में एक संबंधों के साथ अन्य आधुनिक क्षेत्रों के लिए प्रशिक्षण के आदर्श और अधिक बाल केन्द्रित हों। विषयों में कोर पाठयचर्या के प्राथमिक उद्देश्य के विषयों के लिए एक सामान्य परिचय नहीं होना चाहिए। लेकिन एक परिचय का प्रस्ताव विषयों की सहूलियत अंक-दुनिया में जो हमारे छात्रों को सेवा के लिए कहा जाता है। इतिहास में कोर पाठयचर्या का मुख्य उद्देश्य है अपने परिणाम विधियों और दृष्टिकोण जो छात्रों को

ऐतिहासिक एजेंट के रूप में भाग लेने के लिए कहा जाता है।वर्तमान गठन की जांच उन विचारां, विषयों, संस्थाओं और प्रथाओं कि दोनों की पहचान और समाज की निवास के आकार का है।

यदि दर्शन में एक कोर पाठयचर्या देखें तो दार्शनिकों का मन लगे हुए मिश्रण में जा सकते हैं। एक सेमेस्टर के दर्शन में परिचयात्मक पाठयचर्या भाषाई संदर्भ, ट्रांस दुनिया पहचान के मॉडल समस्या, अवधारणात्मक चेतना की प्रारंभिक आधुनिक सिद्धान्तों के कारण सिद्धान्तों को उद्देश्य बनाया जा सकता है।

मुख्य पाठयचर्या के उद्देश्य के रूप में यह एक शिक्षा के व्यापक लक्ष्य तथा लोगों को प्रभावी ढंग से समकालीन समाज में रहने के लिए सक्षम होने के लक्ष्य से सम्बन्धित है। एक प्रमुख उद्देश्य हमारे छात्रों को अपने चुने हुए पेशे में जीवन जीने के लिए सक्षम होना चाहिए। यह उन्हें इतिहास, संरचना, विषयों, मद्दों और भीतर और व्यावहारिक जीवन के इन विभिन्न लोगों के बीच बातचीत की एक बुनियादी समक्ष के साथ प्रदान करना होना चाहिए। यह छात्रों में व्यापक प्रसार तथा प्रतिक्रिया करने के लिए तैयार करना सुनिश्चित करता है।

2. **पाठयचर्या का आसन्न उद्देश्य (Proximate Purpose of Core Curriculum)**

अच्छी तरह से डिजाइन एक कोर पाठयचर्या के लिए संरचनात्मक प्रयोजनों के अध्ययन का एक अनुशासनात्मक प्रसाद का एक संग्रह व्यावहारिक प्रासंगिकता की कसौटी द्वारा ही प्रभावी हो सकता है।

कोर पाठयचर्या के आसन्न प्रयोजनों के उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. शैक्षणिक कार्य के प्रारंभिक दौर में आश्वस्त करना कि छात्रों को उनके बाद के अध्ययनों में प्रगति बनाने के लिए अच्छी तरह तैयार कर रहे है। इस अर्थ में मुख्य पाठयचर्या मूलभूत होगा।
2. एकीकृत मानदण्ड स्थापित करना कि विषयों से प्राप्त ज्ञान को विशेष रूप् से सम्बन्धित कर सकें। इस अर्थ में मुख्य पाठयचर्या प्रासंगिक होगा।
3. एक शैक्षणिक समुदाय है कि विभाग के प्रमुख या कार्यक्रम के दायरे से परे फैली शताक्र को बनाने के लिए इस अर्थ में मुख्य पाठयचर्या केन्द्रीय होगा।
4. यह कोर के अध्ययन के क्रम में अनुक्रमण प्रदान करते हैं। कि यह महत्वपूर्ण विषयों और कौशल विकास में छात्रों के स्तर के अनुसार बौद्धिक परिपक्वता के निर्माण पाठ्यक्रमों के साथ मुख्य पाठयचर्या सम्बद्ध हो जाएगा।

हम ज्ञान, कौशल और गुण के व्यापक क्षेत्रों में कोर पाठयचर्या की सामग्री विभाजित करते हैं। शैक्षणिक समुदाय बनाने के लिए और बड़े पैमाने पर पाठयचर्या को कोर पाठयचर्या की सम्पन्नता के लिए कोर पाठयचर्या में इन तत्वों की भूमिका पर मुख्य पाठयचर्या के प्रस्ताव में काम किया गया है। कोर पाठयचर्या की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं-

- इससे शिक्षण समस्या केन्द्रित होता है तथा छात्रों एवं समस्याओं को हल करने का अनुभव प्राप्त होता है।
- इसमें विषय वस्तु की पारम्परिक विभाग एवं खण्ड समाप्त कर दिए जाते हैं तथा कई विषयों को एक साथ मिलाकर पढ़ाया जाता है।
- यह पाठयचर्या सभी छात्रों की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने का प्रयास करता है।
- इसमें समय विभाग चक्र लचीला होता है। तथा कालांश बड़े होते हैं।
- इसमें छात्रों में शिक्षकों के सम्बन्ध अधिक घनिष्ठ होते हैं तथा अध्ययन अध्यापन के साथ-साथ परामर्श भी चलता है।
- यह पाठयचर्या मनोवैज्ञानिक एवं बाल केन्द्रित होता है।
- इसमें विभिन्न प्रकार के अधिगम अनुभव प्रयुक्त किए जाते हैं।
- इसके अंतर्गत व्यापक निदक्रशन कार्यक्रम की व्यवस्था रहती है।
- यह पाठयचर्या सबसे अधिक प्रचलित है।

समेकित पाठयचर्या Inclusive Curriculum

बीसवीं शताब्दी में मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनेक नये प्रयोग हुए तथा अधिगम के अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए इस प्रकार के वाद के अनुसार मस्तिष्क एक इकाई है। मस्तिष्क ज्ञान को छोटे-छोटे टुकड़ों में प्राप्त नहीं करता है। बल्कि उसे पूर्ण रूप में ग्रहण करता है। वही वस्तु या विचार मस्तिष्क में स्थिर होता है। जो पूर्ण अर्थ देता है।

इन मनोवैज्ञानिकों के अनुसार अमेरिकी विद्यालयों में एकीकृत पाठयचर्या का विकास हुआ। एकीकृत पाठयचर्या एकीकरण के सिद्धान्त पर आधारित है जिसके अनुसार कोई विचार तथा क्रिया तभी प्रभावशाली एवं उपयोगी होती है। जब उसके विभिन्न भागों या पक्षों में एकता होती है। अतः एकीकृत पाठयचर्या से हमारा तात्पर्य उस पाठयचर्या से है जिसमें उसके विभिन्न विषय एक दूसरे से इस प्रकार सम्बन्धित होते हैं कि उनके बीच कोई अवरोध नहीं होता, बल्कि उनमें एकता होती है। इस प्रकार पाठ्यक्रमों के विभिन्न विषयों के ज्ञान को विभिन्न खण्डों में प्रस्तुत न करके सब विषय मिलकर ज्ञान को एक इकाई के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

शिक्षा का उद्देश्य बालकों को ज्ञान की एकता से परिचित कराना है। यह उद्देश्य विषयों को अलग-अलग रूप में पढ़ाने से पूर्ण नहीं हो सकता अर्थात यह कार्य तभी सम्पन्न हो सकता है, जब विषयों को एक दूसरे से सम्बन्धित करके पढ़ाया जाये। इसके लिए यह आवश्यक है कि विभिन्न विषयों को इस प्रकार परस्पर सम्बन्धित किया जाए कि उनके बीच किसी प्रकार की दीवार न हो। यह दायित्व शिक्षक का ही है। वह पाठयचर्या के सभी विषयों को सम्बन्धित करे, पाठयचर्या की सामग्री का जीवन से सम्बन्ध स्थापित करे ताकि प्रत्येक विषय-सामग्री में भी सह-सम्बन्ध स्थापित करे। इस प्रकार जो पाठयचर्या उक्त सभी प्रकार के सम्बन्धों से युक्त हो, उसे ही ''एकीकृत पाठयचर्या '' की संज्ञा दी जाएगी।

इस प्रकार का पाठयचर्या उन अनुभवों को देता है जिन्हें एकीकरण की प्रक्रिया के लिए सुविधाजनक समझा जाता है। तथा जिससे बालक उस पाठ्यवस्तु को सीखते है जो अनुभवों को समझने में एवं उनके पुनर्निमाण में सहायक होती है।

उद्देश्य इस पाठयचर्या के उद्देश्य इस प्रकार हैं-

- इस पाठयचर्या की सफलता के लिए शिक्षक को पर्याप्त एवं व्यापक अध्ययन की आवश्यकता होती है।
- इसमें बालकों को जीवनोपयोगी शिक्षा मिलती है।
- इसके माध्यम से छात्र विभिन्न विषयों का ज्ञान एक साथ प्राप्त करते हैं।
- इस पाठयचर्या में ज्ञान को समग्र रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
- इस पाठयचर्या में शिक्षकों का उत्तरदायित्व एवं कार्यभार बढ़ जाता है।
- इस पाठयचर्या का उद्देश्य पाठयचर्या को अनुभव केन्द्रित बनाना होता है।
- इसमें छात्रों की रुचियों को महत्व दिया जाता है।
- इसमें छात्रों के पूर्व ज्ञान से नवीन ज्ञान को सम्बंधित करने में आसानी होती है।
- इस पाठयचर्या का उद्देश्य बालकों को ज्ञान की एकता से परिचित कराना है। यह उद्देश्य विषयों को अलग-अलग पढ़ाने से पूर्ण नहीं हो सकता अर्थात यह कार्य तभी सम्पन्न हो सकता है जबकि विषयों को एक दूसरे से सम्बन्धित करके पढ़ाया जाये।

सैद्धान्तिक पाठयचर्या (Theoretical Curriculum)

यह पाठयचर्या में एक निश्चित सवाल ''क्या एक पाठयचर्या है'' और ''कैसे पाठयचर्या में अस्तित्व आता है'' यह ज्ञान की प्रबोधक स्थानान्तरण के सिद्धान्त को एक परिचय के रूप में करने

का कार्य करता है। यह शिक्षात्मक सिद्धान्त के Aforementioned केन्द्रीय समस्याओं की भावना बनाने की कोशिश करता है।

''एक पाठयचर्या क्या है'' पाठयचर्या और पाठयचर्या विकास के सामाजिक गतिविधि की धारणा में पहला सवाल है ''एक पाठयचर्या क्या है?'' इस सवाल पर सावधानी से विचार पूर्ण तक्र के लायक है, प्रबोधक सिद्धान्त।

इस शिक्षण प्रणाली में यह एक भाग की बात नहीं करता है। यह केवल शिक्षकों को शामिल नहीं करता और छात्रों की टेक्स्ट बुक्स और होमवर्क से बहुत आगे है। किसी भी सामाजिक संस्था की तरह यह एक पूर्ण रूप में समाज के साथ अपने संबंधों के रख रखाव के लिए भाग लेने के लिए तद्नुसार यह एक हिस्सा उचित शिक्षण व्यवस्था के बीच संबंध की देखरेख में एक विशेषज्ञ की तरह कार्य करता है। यह सामाजिक जीवन के एक सामान्य आवश्यकता है। जो कोई भी संस्था प्राप्त कर सकती है।

सैद्धान्तिक पाठ्क्रम के गठन के सवाल पर तीन प्रकार के परिवर्तन आमतौर पर लागू किया जाना चाहिए। ठोस पाठयचर्या का एक मिश्रण के परिणामों, कारकों तथा इसके विपरीत पाठयचर्या विकास दोनों एक सिद्धान्त और एक सामाजिक आदर्शों के साथ एक निश्चित सीमा तक सामाजिक परिवर्तन के अधिकार को स्वीकार्य करते हैं।

इस संदर्भ में सैद्धान्तिक शिक्षा की ओर व्यक्तिगत समग्र बुद्धि का मतलब संज्ञानात्मक, रचनात्मक, सौन्दर्य, नैतिकता, एकीकरण और मानवीय लक्ष्यों और इंसान के व्यावसायिक आयाम जो लोगों के विकास की समकालीन बाधाओं को पार कर सकते हैं , इस पाठयचर्या के लिए केन्द्रीय है।

छात्रों को विकसित करने के लिए स्वतंत्र है। और स्वयं अपना निर्धारण करने में सक्रिय है। व्यक्तिगत समस्याओं, विकास का स्तर लक्ष्यों, अंतर का आधार पर पाठयचर्या अवधारणाओं का निर्धारण करने में उपयुक्त है।

उद्देश्य - इस पाठयचर्या के उद्देश्य निम्न लिखित हैं-

- यह पाठयचर्या शिक्षा के प्रति परम्परागत तथा सैद्धान्तिक दृष्टिकोण रखता है। इसमें आदर्श जीवन के सिद्धान्त एवं नैतिक जीवन के सैद्धान्तिक रूप् से सम्बन्धित करके उसके विकास पर बल दिया जाता है।
- प्राचीन काल के स्कूलों तथा भरतीय गुरुकुलों ने इस पाठयचर्या का सूत्रपात किया तथा इसके अंतर्गत भाषाओं, दर्शन, ज्योतिष, गणित, व्याकरण, अध्यात्मशास्त्र, धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि विषयों पर अधिक ध्यान दिया।

- इस प्रकार के पाठयचर्या का आज भी प्रचलन है परन्तु दिन-प्रतिदिन इसकी उपयुक्तता पर प्रश्न चिन्ह लगता जा रहा है। अतः इसकी उपयुक्तता धीरे-धीरे कम होती जा रही है।
- इसके अन्तर्गत व्यक्ति, व्यक्ति के सम्बन्धों, सामूहिक सम्बंधों तथा अंतः सामूहिक सम्बंधों के विकास से सम्बंधित स्थितियों को सम्मिलित किया जाता है। जिससे सामाजिक सहभागिता के विकास को सैद्धान्तिक पाठयचर्या से जोड़ा जा सके।
- इसके अन्तर्गत स्वास्थ्य, बौद्धिक शक्ति, सौन्दर्यात्मक अभियक्ति, मूल्यांकन तथा नैतिक शक्तियों के विकास से सम्बंधित स्थितियों को स्थान दिया जाता है।
- इस पाठयचर्या के अंतर्गत स्वास्थ्य, नागरिकता, व्यावसाकि ज्ञान, गृहसदस्यता तथा अवकाशकालीन क्रियोओं को विशेष महत्व दिया जाता है।
- वातावरण से सम्बंधित कारणों एवं शक्तियों के प्रतिक्रिया क्षमता से सम्बंधित स्थितियां जैसे प्राकृतिक घटनाओं, प्रौद्योगिकी से प्राप्त साधनों, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक स्थितियों को स्थान दिया जाता है।
- यह पाठयचर्या बालकों की तात्कालिक आवश्यकताओं एवं हितों पर आधारित है। ये आवश्यकतायें एवं हित जीवन की स्थायी स्थितियों के क्षेत्र में निहित है।

क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या - Activity Based Curricu\um

पाठयचर्या के विभिन्न प्रकारों में क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या भी विशेष महत्व रखता है।शैशवास्था में बालक क्रिया प्रधान कार्य करके शिक्षा प्राप्त करने में विशेष रुचि लेता है। अतः प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या का निर्माण किया जाता है। जिससे बालक में क्रियात्मकता, सृजनात्मकता का विकास किया जा सके। क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या क्रिया या कार्य को आधार बनाता है। इसके अंतर्गत कक्षा कार्य के लिए अन्तर्वस्तु का चयन शिक्षार्थियों की अभिरुचियों, आवश्यकताओं, समस्याओं तथा अनुभव के आधार पर किया जाता है।यह पाठयचर्या विषय आधारित पाठयचर्या की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप् विकास में आया है। ऐतिहासिक दृष्टि से इसका सूत्रपात प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री पेस्टालॉजी तथा रूसो ने किया है। परन्तु इसके वास्तविक प्रणेता प्रसिद्ध अमेरिकी शिक्षाविद् जॉन डीवी थे। डीवी ने जो शिक्षा योजना अपने प्रयोगत्मक विद्यालय में कार्यान्ति की उसे विषय या अंतर्वस्तु पर आधारित करने के स्थान पर उसमें बालकों की चार प्रमुख अभिवृत्तियों को अवसर प्रदान किए-

i. सामाजिक
ii. रचनात्मक
iii.गवेष्णात्मक एवं प्रयोगात्मक

iv. अभिव्यक्तिजन्य तथा कलात्मक

संयुक्त राज्य अमेरिका में इस दिशा में विशेष प्रयास हुए। इस दिशा में एच0जी0 केशबेल ने नेतृत्व प्रदान किया। इन्होंने हरबर्ट स्पेन्सर द्वारा प्रतिपादित पाँच जीवन क्षेत्रों (आत्मरक्षा जीवन सुरक्षा, वंश वृद्धि एवं शिशुपालन, सामाजिक एवं राजनैतिक अवकाश का उपयोग) से प्रेरणा लेकर इन जीवन क्षेत्रों का समन्वय इस पाठयचर्या से किया

इस प्रकार क्रिया प्रधान पाठयचर्या में बालकों के लिए ऐसे कार्यों का आयोजन किया जाता है। जिनका कुछ सामाजिक मूल्य हो तथा जो उनके सर्वांगीण विकास में सहायक हो। इन कार्यों का चुनाव शिक्षक और छात्रों के परस्पर सहयोग से किया जाता है। तथा इसमें छात्रों की रुचियों एवं आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखा जाता है। डीवी महोदय क्रियाशील पाठयचर्या के प्रमुख समर्थक हैं। उन्होंने बालकों को ऐसे कार्यों द्वारा शिक्षा देने का सुझाव दिया है, जिनके सीखने पर भविष्य में समाजोपयोगी कार्य करने के योग्य बन सके। डीवी महोदय के अनुसार ज्ञान, क्रिया का परिणाम है न कि उसका मार्गदर्शक। उनके अनुसार क्रिया अथवा कार्य ही ज्ञान का स्रोत है। क्रिया, अनुभव से पूर्व होती है। अतः अनुभव, ज्ञान एवं अधिगम आदि सभी क्रिया के ही परिणाम हैं। इस प्रकार डीवी ज्ञान एवं अनुभव में कोई विशेष अंतर नहीं मानते हैं। उनका मानना है कि ज्ञान अनुभव से प्राप्त होता है। अनुभव क्रिया द्वारा उत्पन्न होता है। इसीलिए इस पाठयचर्या को अनुभव प्रधान पाठयचर्या के नाम से भी जाना जाता है। नन महोदय के अनुसार पाठयचर्या में समस्त मानवजाति के अनुभवों को सम्मिलित करना चाहिए। व्यक्तित्व के विकास के लिए तथा सफल जीवन के लिए वर्तमान अनुभवों के साथ-साथ पूर्व अनुभव भी बहुत अधिक उपयोगी होते हैं।

क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या की विशेषतायें निम्नलिखित हैं-

- क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या अनुभव प्रधान है।
- यह छात्रों को जीवन की व्यावहारिकता से अवगत कराने पर बल देता है।
- इसमें विद्यार्थी प्रमुख है और शिक्षण गौण रूप में विद्यमान होता है।
- इसमें छात्र मस्तिष्क प्रधान होता है।
- क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या करके सीखने पर बल देता है।
- क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या का उद्देश्य छात्र को व्यक्तिगत जीवन की आवश्यकता की व्यवस्था में समर्थ है।
- क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या विद्यार्थी केन्द्रित है।
- इस योजना के अंतर्गत विकसित अधिगम - अनुभवों की इकाईयाँ बालकों के लिए महत्वपूर्ण एवं सार्थक होती हैं।

- इसमें अन्तर्वस्तु का चयन वर्तमान उपयोगिता एवं महत्व को ध्यान में रखते हुए किया जाता है।
- इसमें शिक्षा के अधिक व्यापक क्षेत्रों को समाहित करना सम्भव होता है, क्योंकि अधिगम-अनुभवों में पर्याप्त विविधता होती है।
- इसमें जीवन की नवीन स्थितियों में अधिगम के उपयोग की पर्याप्त सम्भावनाएँ रहती हैं।
- इस पाठयचर्या में अधिगम अनुभवों की विभिन्न इकाईयों का एकीकरण सुविधाजनक ढंग से किया जा सकता है।
- बालकों की आवश्यकताओं एवं रुचियों पर आधारित होने के कारण इस प्रकार के पाठयचर्या को वे पसंद करते हैं।
- मानव की प्रगति में क्रियाशीलता सर्वाधिक महत्व रखती है। इससे इस पाठयचर्या की उपयुक्तता स्वयंसिद्ध है।

पुनर्संरचनात्मक पाठयचर्या - (Reconstructivistic Curriculum)

विद्यालयों का पाठयचर्या पुस्तकीय ज्ञान पर अधिक बल देता है तथा इसमें व्यावहारिक क्रियाओं एवं अनुभवों को कम महत्व प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही पार्ठयक्रम का निर्माण परीक्षा की दृष्टि से किया जाता है। चूँकि भारतीय विद्यालयी पाठयचर्या में कौशलों के विकास तथा उचित अभिरुचियों, अभिवृत्तियों एवं मूल्यों के प्रतिपादन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। अतः यह आधुनिक ज्ञान एवं आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सफल नहीं हो सका है। उनकी तुलना में हमारे देश में इस ओर बहुत ही कम ध्यान दिया गया। अतः भारतीय स्कूली पाठयचर्या को विकसित करने, उसे उन्नत करने तथा उसमें उपयुक्त सुधार करने की नितान्त आवश्यकता है।

पाठयचर्या पुनर्संरचना का प्रथम व्यापक प्रयास गाँधीजी की बुनियादी शिक्षा के माध्यम से प्रारंभ तो हुआ परन्तु ब्रिटिश काल में कोई प्रभावशाली कार्य न हो सका। इसके अन्तर्गत हस्तकला को केन्द्र मानकर सम्पूर्ण शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया गया। हस्तकला के साथ साथ भौतिक एवं सामाजिक पर्यावरण को भी पाठयचर्या में स्थान दिया गया। अध्ययन के द्वारा विभिन्न विषयों में सह-सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया गया ।

वर्तमान पाठयचर्या में निम्न कमियों को बताया गया है-

i. सार्थक अर्न्तवस्तुओं के अभाव के बा भी यह बोझिल है
ii. यह पूर्णतया सैद्धान्तिक तथा पुस्तकीय है।
iii. उसमें व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए व्यवहारिक एवं अन्य क्रियाओं का पर्याप्त समावेश नहीं किया गया है।

iv. इसमें व्यावहारिक विषयों एवं तकनीकि का समावेश नहीं किया गया है। जो देश को औद्योगिक एवं आर्थिक विकास हेतु बालकों को प्रशिक्षित करने के लिए नितान्त आवश्यक है।

v. इसमें किशोरों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति तथा उनकी क्षमताओं का उपयोग नहीं हो पाता है।

vi. वर्तमान का पाठयचर्या बहुत संकुचित तथा बोझिल है एवं इसमें परीक्षाओं पर अधिक बल दिया जाता है।

अतः माध्यमिक शिक्षा आयोग ने स्वतंत्र लोकतांत्रिक भारत की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रचलित पाठ्यक्र में व्यापक सुधार लाने हेतु कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये। जिनमें से कुछ प्रमुख सुझाव इस प्रकार हैं-

- माध्यमिक स्तर सामान्य पाठयचर्या
- व्यावहारिक तथा तकनीकि शिक्षा की आवश्यकता की पूर्ति हेतु बहुउद्देशीय विद्यालयों की स्थापना।
- शिक्षा की अवधि में परिवर्तन लाने की आवश्यकता।

पाठयचर्या निर्माण हेतु कुछ सिद्धान्तों के अनुपालन पर भी बल दिया गया है-

- विविधता एवं लचीलेपन का सिद्धान्त।
- अनुभवों की पूर्णता का सिद्धान्त।
- सामुदायिक जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का सिद्धान्त।
- विषय वार सम्बन्ध सिद्धान्त।
- सामान्य विषयों के सांमजस्य का सिद्धान्त।

उद्देश्य

माध्यमिक स्तर पर पाठयचर्या का उद्देश्य मानवीय ज्ञान एवं अभिरुचि के व्यापक क्षेत्र के बारे में बालकों को अति सामान्य ढंग से परिचित कराना होता है। यह स्तर विशिष्टता के लिए नहीं होता है, बल्कि इस स्तर पर ज्ञान के व्यापक एवं सार्थक क्षेत्रों से बालकों को सामान्य परिचित कराना चाहिए। इस दृष्टि से मिडिल स्तर के पाठयचर्या में व्यापकता का संक्षिप्त समावेश होना चाहिए। जिससे बालक मानवीय ज्ञान एवं सभ्यता के प्रमुख तत्वों की जानकारी प्राप्त कर सकें तथा बाद में अध्ययन हेतु ज्ञान के विशिष्ट क्षेत्र का चयन कर सके। जिसमें मुख्य उद्देश्य निम्नवत हैं-

- सामान्य विज्ञान का अध्ययन।
- भाषाओं का अध्ययन।
- समाजिक अध्ययन।
- कला एवं संगीत।
- हस्तकला।
- शारीरिक शिक्षा आदि

अभ्यास प्रश्न

5. पाठयचर्या के प्रमुख प्रकारों के नाम लिखिए।
6. _____ पाठयचर्या वह है जिसमें बालक को कुछ विषय अनिवार्य रूप से पढ़ने होते हैं।
7. कोर पाठयचर्या की कोई दो विशेषताएं लिखिए।
8. एकीकृत पाठयचर्या _____ के सिद्धान्त पर आधारित है
9. समेकित पाठयचर्या के कोई दो उद्देश्य लिखिए।
10. केन्द्रित पाठयचर्या की कोई तीन विशेषतायें लिखिए।

2.6 सारांश

पाठयचर्या द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। यह एक ऐसा साधन है जो छात्र तथा अध्यापक को जोड़ता है। अध्यापक पाठयचर्या के माध्यम से छात्रों के मानसिक, शारीरिक, नैतिक, सांस्कृतिक, संवेगात्मक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक विकास के लिए प्रयास करता है। कुरीकुलम शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के एक शब्द क्यूररे Currere से हुई है जिसका अर्थ है Race Course दौड़ का मैदान। इस प्रकार पाठयचर्या वह दौड़ का मैदान है, जिस पर विद्यार्थी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दौड़ता है। पाठयचर्या की आधुनिक अवधारणा के अन्तर्गत हम कह सकते हैं कि किसी भी कक्षा शिक्षण के अन्तर्गत सैद्धान्तिक और क्रियात्मक दोनों प्रकार का ज्ञान एक निश्चित सीमा में छात्रों को दिया जाता है। उसे पाठयचर्या कहते हैं।

विद्यालय में विभन्न स्तरो के लिए पृथक पृथक पाठयचर्या का निर्माण किया जाता है। पाठयचर्या निर्धारण के समय कुछ विशेष उद्देश्यों को ध्यान में रखना अत्यंत आवश्यक है। पाठयचर्या बनाते समय छात्रों केजीवन से सम्बंधित विभिन्न बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाना अति आवश्यक है। पाठयचर्या वह शिक्षा धुरी है जिसके द्वारा बालक को नियोजित तरीके से शिक्षक द्वारा अनुसरण किया जाता है। विद्यालय में शैक्षिक अनुभवों को चुनने एवं कार्यान्वित रूप में लाने के लिए

योजनाबद्ध तरीके से उन सीखने की क्रियाओं को शिक्षक द्वारा अनुसरण किया जाता है। पाठयचर्या आयोजन वह संरचना एवं ढांचा है जिसको अपनाकर अनुभवों के आधार पर निर्मित किया जाता है। पाठयचर्या को निम्न प्रमुख प्रकार हैं -कोर पाठयचर्या , समेकित पाठयचर्या , सैद्धान्तिक पाठयचर्या , क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या , पुनर्संरचनात्मक पाठयचर्या। प्रत्येक पाठयचर्या के अपनी विशेषताऐं एवं उद्देश्य हैं।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. लैटिन, क्यूररे (Currere)
2. दौड़ का मैदान(Race Course)
3. मुनरो
4. सत्य
5. एक अच्छे और आदर्श पाठयचर्या के कोई दो उद्देश्य हैं –
    i. पाठयचर्या ऐसा हो जो कि छात्रों का बहुमुखी विकास कर सके।
    ii. पाठयचर्या छात्रों की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास कर सके।
6. पाठयचर्या के प्रमुख प्रकारों के नाम हैं –
    i. कोर पाठयचर्या
    ii. समेकित पाठयचर्या
    iii. सैद्धान्तिक पाठयचर्या
    iv. क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या
    v. पुनर्संरचनात्मक पाठयचर्या
7. कोर
8. कोर पाठयचर्या की कोई दो विशेषताएं हैं-
    i. इससे शिक्षण समस्या केन्द्रित होता है तथा छात्रों एवं समस्याओं को हल करने का अनुभव प्राप्त होता है।
    ii. यह पाठयचर्या सभी छात्रों की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने का प्रयास करता है।
9. एकीकरण
10. समेकित पाठयचर्या के उद्देश्य इस प्रकार हैं-
    i. इस पाठयचर्या की सफलता के लिए शिक्षक को पर्याप्त एवं व्यापक अध्ययन की आवश्यकता होती है।
    ii. इसमें बालकों को जीवनोपयोगी शिक्षा मिलती है।

11. केन्द्रित पाठयचर्या की कोई तीन विशेषतायें हैं -
    i. क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या अनुभव प्रधान है।
    ii. यह छात्रों को जीवन की व्यावहारिकता से अवगत कराने पर बल देता है।
    iii. क्रिया केन्द्रित पाठयचर्या विद्यार्थी केन्द्रित है।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. यादव, एस. (2010). *पाठयचर्या विकास*, आगरा: श्री विनोद पुस्तक मंदिर.
2. Agrawal, J.C. (1990). *Curriculum reforms in India.* New Delhi.
3. Bhatt, B.D. and Sharma, S.R. (1992). Principles of Curriculum Construction. New Delhi: Kanishka Publishing House.
4. Dewal, O.S. (2004). National Curriculum. *In Encyclopedia of Indian Education.* New Delhi: NCERT. माथुर, एस०.एस० (1981), शिक्षण कला, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
5. मिश्र, आत्मानन्द(1985), शिक्षण कला, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

2.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. पाठयचर्या के प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए।
2. पाठयचर्या का क्या अर्थ है? पाठयचर्या के विभिन्न उद्देश्यों को लिखिए।

इकाई 3 पाठयचर्या विकास– प्रक्रिया एवं सिद्धांत

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 पाठयचर्या के उद्देश्य
3.4 पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया
3.5 पाठयचर्या का विकास
3.6 पाठयचर्या विकास के प्रमुख सोपान
3.7 पाठयचर्या निर्माण के आधारभूत सिद्धान्त
3.8 सारांश
3.9 शब्दावली
3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.11 संदर्भ-ग्रन्थ
3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

पाठयचर्या शिक्षा का एक अभिन्न अंग है, पाठयचर्या द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। पाठयचर्या के द्वारा ही शिक्षक विभिन्न विषयों के पढ़ाने की तैयारी पूर्ण करता है । शिक्षक पाठयचर्या के माध्यम से छात्रों के मानसिक, शारीरिक, नैतिक, चारित्रिक, संवेगात्मक, राजनैतिक एवं सामाजिक विकास हेतु प्रयासरत रहता है। पाठयचर्या के बिना उसका शिक्षण कार्य उद्देश्य विहीन एवं तथ्यहीन हो जाता है तथा शिक्षक अपने उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर पाता है। इसलिए शिक्षण कार्य में पाठयचर्या एक अभिन्न अंग के रूप में होता है। पाठयचर्या के द्वारा हमें कक्षा विशेष को कब क्या और कितना पढ़ाना है, यह निश्चित कर लेते हैं और छात्रों का भी एक लक्ष्य निर्धारित होता है। जिससे वह पठन पाठन में रुचि एवं एकाग्रता लाते हैं एवं आने वाले समय में जीवन कला में प्रशिक्षण के अवसर प्रदान होते हैं। पाठयचर्या का निर्धारण होने से हम अपने भावी राष्ट्र के विकास को गति प्रदान करते हैं। पाठयचर्या एक प्रकार से शिक्षक के बाद छात्रों का दूसरा पथ प्रदर्शक है। क्योंकि जब शिक्षक नहीं होता है तक छात्र उसी पाठयचर्या के आधार पर अपने ज्ञान को गति प्रदान करते हैं।

पाठयचर्या की प्राचीन अवधारण में तथ्यों के ज्ञान की सीमा निश्चित करना सम्मिलित था, जबकि पाठयचर्या की आधुनिक धारणा विस्तृत एवं व्यापक है। यहां पर छात्र कक्षा के अन्दर जो भी ग्रहण करता है वह तो सम्मिलित है ही एवं यह भी शामिल किया गया है जो छात्र कक्षा के बाहर अनेक कार्य जैसे पढ़ाना लिखाना, शिल्प खेल, पुस्तकालयों एवं अन्य अनुभवों से प्राप्त करते हैं। पाठयचर्या एक ऐसा साधन है जो छात्र एवं शिक्षक को जोड़ने का कार्य करता है। पाठयचर्या के द्वारा ही शिक्षक छात्र को नवीन ज्ञान की दिशा देने का काम करता है। पाठयचर्या में नवीन अनुभवों एवं पुराने अनुभवों को शामिल किया जाना चाहिए जिसके द्वारा छात्र वर्तमान स्थिति को समझने में सक्षम बन सकें। सही अर्थ में पाठयचर्या ऐसा हो जिसमें सभी शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके, जिससे हमारे राष्ट्र का सर्वांगीण विकास हो ।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

4. पाठयचर्या के उद्देश्यों को समझ सकेंगे।
5. पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया कि व्याख्या कर सकेंगे।
6. पाठयचर्या का विकास किस प्रकार होता है यह समझ सकेंगे।
7. पाठयचर्या विकास के प्रमुख सोपानों का वर्णन कर पाएगें।
8. पाठयचर्या निर्माण के आधारभूत सिद्धान्तों की व्याख्या कर पाएगें।

3.3 पाठयचर्या के उद्देश्य (Aims of Curriculum)

- बालक को लोकतंत्र के लिए तैयार करना।
- शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु बालक को तैयार करना।
- छात्रों में ईमानदारी, निष्ठा और उनकी व्यक्ति क्षमता का विकास करना।
- आवश्यकता अनुसार पाठयचर्या का निर्माण करना।
- विद्यालयों के विषयों और विभिन्न क्रियाओं के बीच के अन्तर को समाप्त करना।
- ऐसे गुणों को बढ़ावा देना जिनसे मनुष्य में मानवता का विकास करना।
- बालकों को सांस्कृतिक, सभ्यता एवं मूल्यों के बारे में जानकारी प्रदान करना।
- ऐसे वातावरण का निर्माण करना जिसमें बालक नवीन ज्ञान प्राप्त कर सके।
- राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय भावना का विकास करना।

- बालक का सर्वांगीण विकास करना एवं बालक को जीवन उपयोगी बनाना।

3.4 पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया

पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया से पूर्व हमें अपने उद्देश्य देख लेने चाहिये कि हमारे लोकतांत्रिक देश में किस तरह की शिक्षा दी जाये जिससे हमारे बालक का सर्वांगीण विकास हो सके। पाठयचर्या बनाने के पूर्व हमें एक निश्चित प्रारूप तैयार कर लेना चाहिए। उस प्रारूप का स्वरूप हमारे बालक, शिक्षक, समाज, देश एवं राष्ट्रीय भावना को ध्यान में रख कर तैयार करना चाहिए। फलस्वरूप शिक्षाविदों एवं अनेक सामाजिक संगठनों से राय लेते हुए पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया शुरु की जानी चाहिए।

पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया में शिक्षाविदों, शिक्षा समितियों के माध्यम से विद्यालयों का भ्रमण एवं समाज के हर क्षेत्र वर्ग एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर कार्य किया जाना चाहिए। शिक्षकों के लिए गोष्ठियां, कार्यशाला सेमीनारों का आयोजन किया जाता है। हमें चाहिए कि उन शिक्षकों से भी राय ली जानी चाहिए जो इस प्रकार की कार्यक्रम में भाग लेते रहते हैं। पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया में हमारे संस्कार, संस्कृति एवं भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है; इसके अभाव में हमारे पाठयचर्या की प्रक्रिया नगण्य हो जायेगी, अतः हमें चाहिए कि समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति एवं राष्ट्रहित की भावना से पाठयचर्या की प्रक्रिया को आगे बढाना है। यह भी ध्यान रखा जाये कि पाठयचर्या किस तरह का है। यदि वह उच्चस्तरीय है तो राष्ट्रीय तथा अन्तराष्ट्रीयता का ध्यान में रख कर प्रक्रिया का संचालन किया जाना चाहिए। हमारी प्रक्रिया गतिशील, लचीली एवं परिवर्तनशील हो। क्योंकि यदि पाठयचर्या निर्माण की प्ररक्रिया जटिल होगी तो उसमें समाज एवं बालक की आवश्यकता अनुसार समय पर बदलाव नहीं हो पाते हैं। जिससे समाज, छात्र, शिक्षक आदि सभी लोग प्रभावित होते हैं। जो हमारे प्रजातांत्रिक देश के हित में नहीं है।हमारी प्रक्रिया में सभी विषयों के शिक्षकों को स्थान या उनकी राय रखी जानी चाहिए। पाठयचर्या निर्माण प्रक्रिया के उपरान्त नमूने के तौर पर कुछ विद्यालयों में प्रशिक्षण स्वरूप देखा जाये, जिससे कि हम यह जान सकें कि पाठयचर्या की प्रक्रिया वर्तमान स्वरूप के अनुकूल है या नहीं अतः हमें चाहिए कि हम अपने राष्ट्र के सर्वांगीण विकास हेतु पाठयचर्या प्रक्रिया को संचालित करें। पाठयचर्या की प्रक्रिया बहुत ही जटिल है। पाठयचर्या को सरल एवं प्रगतिशील बनाना होगा, जिससे बालक में राष्ट्रीय भावना एवं समाज की आवश्यकता अनुसार बदलाव किया जा सके। जिससे हमारी शिक्षा, देश की संस्कृति एवं सभ्यता भी प्रभावित हो रही है। आज हमें देखने में आ रहा है कि हमारे देश के पाठयचर्या केवल ज्ञान का प्रसार करने तक ही सीमित है। जिन विषयों एवं तथ्यों का पाठयचर्या में चयन है वह वर्तमान में मानव जीवन के लिए सफल व उपयोगी नहीं दिख रहा है, इसलिए हमें चाहिए कि हम पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया को सरल एवं परिवर्तनशील बनाए , जिसके लिए हमें निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देना होगा-

- सर्वप्रथम ध्यान देना होगा कि पाठयचर्या का निर्माण किस कक्षा के लिए किया जा रहा है।
- जिस स्तर के बालकों के लिए पाठयचर्या का निर्माण किया जाना है, उनका पूर्व ज्ञान का स्तर क्या है?
- पाठयचर्या को ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक पक्षों में बांटकर निर्धारण किया जाना चाहिए।
- छात्रों की वर्तमान आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर मनोवैज्ञानिक स्तर पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
- समाज, संस्कृति, सभ्यता, राष्टीयता एवं अंतर्राष्टीयता की भावना को ध्यान में रखकर पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया की जानी चाहिए।
- पाठयचर्या के निर्माण में विविध सिद्धान्तों एवं शिक्षा के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर कार्य किया जाना चाहिए।
- पाठयचर्या की प्रक्रिया में तथ्यों, प्रसंगों एवं विचारकों के मतों का वर्णन करना चाहिए।
- पाठयचर्या के निर्माण में वैधता, विश्वसनीयता, मानकीकरण का निर्धारण शैक्षिक उद्देश्यों के अनुरूप होना चाहिए।
- शिक्षक के लिए शिक्षण संकेत का निर्माण करना।
- बालक के सर्वांगीण विकास के लिए पाठयचर्या में पर्याप्त क्रियाओं को स्थान दिलाने के लिए मूल्यांकन पद्धति को अपनाना चाहिए।

अतः हमें पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया को सरल बनाना होगा जिससे समयानुसार एवं बालकों तथा समाज की आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके, क्योंकि यदि समय पर बदलाव नहीं किया जाए तो निश्चित रूप से वह पाठयचर्या हमारे लोकतांत्रिक देश के हितों में नहीं होगा और हम उसी घिसे पिटे पाठयचर्या के अनुसार कार्य करते रहेंगे। हमें सर्वप्रथम पाठयचर्या की प्रक्रिया में बदलाव लाकर उन शैक्षिक उद्देश्यों, मूल्यों, लोकतांत्रिक सिद्धान्तों एवं राष्ट्रीय स्तर को ध्यान में रखकर काम करने की आवश्यकता है। हमें बालक के सर्वांगीण विकास हेतु पाठयचर्या निर्माण प्रक्रिया में सहयोगात्मक दृष्टि को ध्यान में रखकर कार्य करना चाहिए। साथ ही छात्र को सैद्धान्तिक रूप के साथ व्यावहारिक रूप में भी पाठयचर्या बताया जाना चाहिए। पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया सरल होनी चाहिए। पाठयचर्या निर्माण प्रक्रिया के उपरान्त ही पाठयचर्या अपने वास्तविक स्वरूप को धारण करती है।

3.5 पाठयचर्या का विकास

पाठयचर्या का सीधा सम्बन्ध शिक्षा के उद्देश्यों से होता है और पाठयचर्या का विभाग का भी उन शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाना है जो वर्तमान बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए जरूरी है। बदलते समय में नए पाठयचर्या की आवश्यकता महसूस की जा रही है। पाठयचर्या के विकास के बिना हम बालक के जीवन को सरलता और सहजता नहीं प्रदान कर सकते हैं। उद्देश्यों के अनुसार पाठयचर्या का विकास किया जाना चाहिए जिससे बालक के साथ साथ समाज को लाभ प्राप्त हो सके। स्वतंत्रता के पूर्व हमारे देश में शिक्षा के उद्देश्य सीमित थे परन्तु स्वतंत्रता के बाद देश में समाज को जागरूक करने हेतु शैक्षिक उद्देश्यों की स्थापना की गई जिसे हम पाठयचर्या के माध्यम से समाज एवं बालक तक पहुंचाने का काम कर रहे है। हमें ऐसे पाठयचर्या का विकास करना जिससे बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके जिसके द्वारा भविष्य में बालक एक विद्वान व्यक्तियों का निर्माण कर उनमें ज्ञान की सीमाओं का विस्तार कर सके उन शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति तभी की जा सकती जब बालक मानसिक, शारीरिक, चारित्रिक, संवेगात्मक आदि गुणों से परिपूर्ण होगा।

वर्तमान समय को देखते हुए नए पाठयचर्या की आवश्यकता महसूस की जा रही है। नए पाठयचर्या में सामाजिक जीवन को ध्यान में रखकर विकास किया जाना चाहिए इसके लिए हमें अपने पूर्व पाठयचर्या का गहन अध्ययन एवं मूल्यांकन करना होगा साथ लोकतांत्रिक देश की आवश्यकताओं, उपयोगिता, मानवीय मूल्यों आदि को आधार मानकर नवीन ज्ञान एवं अनुसंधान का सहारा लेते हुए पाठयचर्या का विकास करना होगा, जिससे देश के नौनिहालों के भविष्य को नवीन दिशा दी जा सकती है। पाठयचर्या का विकास इस उद्देश्य से किया जाना चाहिए कि बालक का विकास उसकी रुचि एवं परिवर्तनशील वातावरण के अनुकूल हो साथ ही राष्टीय शिक्षा नीति 1986 में कहा गया है कि पाठयचर्या संविधान में दर्शाए गए मूल्यों को आधार मानकर विकसित किया जाना चाहिए। सामाजिक एवं सांस्कतिक दृष्टि से उपयोगी तत्वों को पाठयचर्या में महत्त्व दिया जाना चाहिए।

पाठयचर्या विकास की प्रक्रिया अत्यंत जटिल है। इसमें प्रत्येक पग पर सावधानी अपेक्षित है। पाठयचर्या विकसित करते समय सर्वप्रथम निम्नलिखित पक्षों पर ध्यान देना आवश्यक होता है-

- पाठयचर्या का विकास किस कक्षा के लिए किया जा रहा हैं।
- जिस कक्षा के लिए पाठयचर्या विकसित किया जा रहा है। उसके छात्रों की पूर्व जानकारी का स्तर क्या है।
- छात्रों की वर्तमान आवश्यकता, रुचि किन क्षेत्रों से सम्बंधित है। इसमें छात्रों के मनोवैज्ञानिक पक्षों पर भी ध्यान दिया जाता है। जैसे व्यक्तिगत भिन्नता, रुचि, बाल-विकास की अवस्था, परिपक्वता, बुद्धि, सृजनात्मकता आदि।

- समाज की आकांक्षा तथा वैश्विक परिप्रेक्ष्य पर ध्यान दिया जाता है। दार्शनिक दृष्टिकोण पर विचार मंथन जाता है।
- पाठयचर्या का प्रकार किस कोटि का होगा। जैसे- क्रिया प्रधान, हस्त-शिल्प प्रधान, विषय प्रधान, व्यवसाय-प्रधान आदि।
- पाठयचर्या को ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक पक्षों में बांटना तथा उनका प्रतिशत निर्धारण करना। इससे संबधित शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण भी किया जाता है।
- पाठयचर्या के लिए पाठ्य सहगामी क्रियाओं का चयन करना।
- पाठयचर्या हेतु विविध विषय के लिए तथ्यों, प्रसंगों, सिद्धान्तों, विचारकों के मतों का चयन करना।
- पाठयचर्या निर्माण के विविध सिद्धान्त का अनुपालन तथा तत्संबंधी तथ्यों का चयन करना।
- पाठयचर्या के विषयों में अन्तर्वस्तु के क्रम का निर्धारण करना, प्रायः यह सरल से जटिल की ओर होती है।

अभ्यास प्रश्न

1. पाठयचर्या के किन्हीं दो उद्देश्यों को लिखिए।
2. पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया को _____ एवं_____ बनाना चाहिए।
3. बालक के सर्वांगीण विकास के लिए पाठयचर्या में पर्याप्त क्रियाओं को स्थान दिलाने के लिए _____को अपनाना चाहिए।
4. पाठयचर्या को _____ , _____ , _____ पक्षों में बांटकर निर्धारण किया जाना चाहिए।
5. _____में कहा गया है कि पाठयचर्या संविधान में दर्शाए गए मूल्यों को आधार मानकर विकसित किया जाना चाहिए।

3.6 पाठयचर्या विकास के प्रमुख सोपान

प्रसिद्ध विद्वान डी0के0 व्हीलर ने अपनी पुस्तक " Curriculam Process" में पाठयचर्या संरचना के प्रमुख पाँच पद या सोपानों का उल्लेख किया है जो इस प्रकार हैं-

1. शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण।
2. निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु उपयुक्त अधिगम अनुभवों का चयन।
3. अधिगम अनुभवों को प्रस्तुत करने के लिए उपयुक्त अन्तर्वस्तु का चयन।
4. अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया की दृष्टि से चयनित अधिगम अनुभवों एवं अन्तर्वस्तु का संगठन।
5. सम्पूर्ण प्रक्रिया का उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से मूल्यांकन।

1. शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण

शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण पाठयचर्या विकास का प्रथम सोपान है पाठयचर्या के उद्देश्यों के निर्धारण से शैक्षिक कार्यक्रमों को दिशा मिलती है। शैक्षिक क्रियाओं की प्रकृति का निर्धारण होता है।शैक्षिक कार्यक्रमों के नियोजन एवं व्यवस्थीकरण को निश्चित आधार मिलता है। शैक्षिक कार्यक्रमों को क्रमबद्ध ढंग से प्रस्तुत करने में सहायता मिलती है अधिगम के विभिन्न पक्षों में विभेदीकरण सम्भव होता है। विकास एवं उपलब्धि के मापन को आधार मिलता है। शैक्षिक कार्यक्रमों की प्राथमिकताओं को सुनिश्चित करने में सहायता मिलती है। शैक्षिक निर्णयों के लिए उचित निर्देशन प्राप्त होता है।शैक्षिक कार्यक्रमों के विभिन्न पक्षों में सन्तुलन स्थापित करने में सुविधा होती है। अधिगमानुभवों एवं मूल्यांकन एवं स्तरीकरण करने में सहायता मिलती है। उपयुक्त अन्तर्वस्तु के चयन में सुविधा होती है।शैक्षिक विकास कार्यों को निर्देशन मिलता है। अधिगम को कार्यात्मक बनाने में सहायता मिलती है।उपयुक्त अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न करने में एवं शैक्षिक प्रक्रिया को सुपरिभाषित किया जा सकता है एवं वैध मूल्यांकन सम्भव होता है।उपयुक्त महत्व को देखते हुए पाठयचर्या का निर्माण करने से पूर्व सभी सम्बद्ध व्यक्तियों को उन लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के बारे में निश्चित जानकारी होनी चाहिए जिनकी प्राप्ति वे पाठयचर्या निर्माण द्वारा कराना चाहते है। शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण हेतु प्रमुख स्रोत समाज व्यक्ति एवं ज्ञान है।

बी0एस0 ब्लूम के अनुसार ‘‘शैक्षिक उद्देश्यों की सहायता से केवल पाठयचर्या की ही रचना तथा अनुदेशन के लिए निर्देश नहीं दिया जाता बल्कि ये मूल्यांकन की प्रविधियों के विशिष्टीकरण में भी सहायक होते हैं।‘‘

शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण हेतु विभिन्न उपागमों के अन्तर्गत प्रबुद्ध एवं रुचि सम्पन्न् व्यक्तियों का अभिमत संग्रह, आधारभूत क्षेत्रों का अध्ययन, व्यापक क्षेत्रों का विश्लेषण एवं समस्या आधारित उपागम आते हैं। बी0 एस0 ब्लूम महोदय ने शैक्षिक उद्देश्यों को तीन पक्षों में वर्गीकृत किया है। ज्ञानात्मक पक्ष (ज्ञान, अवबोध, अनुप्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण, मूल्यांकन) भावात्मक पक्ष (आग्रहण या प्राप्ति, अनुक्रिया, अनुमूल्यन, व्यवस्थापन, मूल्य का लक्षण वर्णन) क्रियात्मक पक्ष (अनुकरण, हस्तादि प्रयोग अथवा कार्य करना, सुतथ्यता, सन्धियोग, स्वाभावीकरण या नैसर्गिकरण)

बी0 के0 व्हीलर ने अपनी पुस्तक "Curricu।am Process" में आधुनिकतम स्थिति और दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण के कुछ महत्वपूर्ण मानदण्ड प्रस्तावित किए हैं।

1. **मानवीय अधिकारों से तादात्म्य**- शिक्षा मानव उत्थान का सशक्त माध्यम है अतः मानव समाज को संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र की धारा 55 के अनुसार निम्नांकित बातों की अनिवार्य रूप से व्याख्या करनी चाहिए।

- उच्च जीवन स्तर, पूर्ण कार्य, आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति तथा विकास की स्थितियां।
- अन्तराष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक, स्वास्थ्य एवं अन्य सामाजिक समस्यायें तथा अन्तराष्ट्रीय सांस्कृतिक एवं शैक्षिक सहयोग।
- सभी के मानवीय अधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रता के प्रति जाति, धर्म,भाषा एवं लिंग भेद के बिना सार्वभौमिक समादर।

2. **लोकतांत्रिक दृष्टि से अनुकूलन**- शिक्षा के वैध उद्देश्य केवल प्रजातांत्रिक सिद्धान्तों से ही प्राप्त किए जा सकते हैं क्योंकि प्रजातंत्र ही वह व्यवस्था है जिसमें सभी मूलभूत मानवीय आवश्यकताओं की सही ढंग से पूर्ति की जा सकती है। इस व्यस्था की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं-

- प्रत्येक व्यक्ति के महत्व एवं उसकी गरिमा का समादर किया जाता है।
- प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं का अधिकतम विकास करने तथा दूसरों के विकास में सहयोगी बनने के समान अवसर प्राप्त होते हैं।
- सामान्य जनता द्वारा स्वतंत्र रूप से व्यक्त की गई सहमति से सरकार का निर्माण होता है तथा सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी होती है।
- व्यक्तिगत भिन्नता का समादर किया जाता है तथा उन्हें प्रोत्साहित और विकसित बनाया जाता है।
- प्रत्येक व्यक्ति को अपने विवके, बुद्धि अथवा अन्तर्रात्मा के अनुसार विचार करने, बोलने, लिखने-पढ़ने तथा पूजा - अर्चना की स्वतंत्रता होती है। तथा उससे उपेक्षा की जाती है कि वह दूसरों की इसी प्रकार की स्वतंत्रता में बाधक न बने बल्कि उसका पोषक बने।

3. **समाजिक सार्थकता-** बालकों में ऐसे सामाजिक मूल्य एवं निष्ठा विकसित करने में सहायता की जानी चाहिए जिनके माध्यम से वह विभिन्न प्रस्तावित समाधानों का सही मूल्यांकन कर सकें। इसके लिए उनमें वर्तमान को विश्लेषित करने तथा उससे समायोजन स्थापित

करने के साथ साथ भावी समाज के बारे में सोचने तथा उपयुक्त योजना बनाने की क्षमता विकसित की जानी चाहिए।

4. **वैयक्तिक आवश्यकतायें** - पाठयचर्या आयोजकों को वैयक्तिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण हेतु निम्नांकित बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
   - बालक की प्रकति, व्यक्तित्व, शारीरिक एवं बौद्धिक भेदों को समझते हुए व्यक्तिगत भेदों को स्वीकार किया जाए।
   - बालक को अपनी गति के अनुसार विकसित होने की स्वतंत्रता प्रदान की जानी चाहिए।
   - बालक की सुरक्षा का सर्वप्रथम दायित्व परिवार का है किन्तु शिक्षालयों की भी इस हेतु अपनी भूमिका है। अतः शिक्षालयों को इस कार्य में परिवार एवं समाज को सहायता प्रदान करनी चाहिए।
   - बालक में इस भावना का विकास करना चाहिए कि वह जीवन के किसी न किसी क्षेत्र में अवश्य सफल हो सके।
   - प्रत्येक बालक अपने कार्य की पुष्टि एवं मान्यता चाहता है। शिक्षा द्वारा की गई पुष्टि तथा मान्यता सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है। बालक प्रायः अपने वर्ग के सदस्य के रूप में कार्य करना चाहता है।
   - पाठयचर्या निर्माताओं को बालकों की दो प्रकार की आवश्यकताओं पर विशेष बल देना चाहिए-
   - स्व की आवश्यकतायें अर्थात वे आवश्यकतायें जो व्यक्ति को कार्य करने के लिए अभिप्रेरित करती हैं।
   - वे आवश्यकताएं जो प्रौढ़ लोगों के अनुसार बालको के लिए आवश्यक हैं जैसे-: शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, जीवन के विभिन्न पक्षों के लिए तैयारी आदि।

5. **सन्तुलन**-सन्तुलन से तात्पर्य शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण करते समय पूर्व वर्णित चारों बिन्दुओं पर समुचित बल प्रदान करना है अर्थात किसी एक बिन्दु पर आवश्यकता से अधिक बल नहीं दिया जाना चाहिए।

2. अधिगम अनुभवों का चयन

पाठयचर्या विकास का द्वितीय सोपान अधिगम-अनुभवों का चयन है। शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अधिगम-अनुभवों का चयन से तात्पर्य है कि अधिगम अनुभवों का प्रस्तुतीकरण अधिगम और उसके आयोजन से सम्बंधित प्रकिया है। विद्यालय में बालक शिक्षा ग्रहण करने के लिए आता है। वह अपने विद्यालयी जीवन में विभिन्न प्रकार के अनुभव प्राप्त करता है। इन अनुभवों से उसके ज्ञान में वृद्धि, सोचने के ढंग में परिवर्तन, कार्यशैली में परिवर्तन होता है तथा उसकी संवेदनशीलता और अभिवृत्ति विकसित होती है। बालक के इस व्यवहार परिवर्तन में ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा कियात्मक पक्ष सम्मिलित होते हैं।

अधिगम अनुभवों के चयन के संबंध में दो सिद्धान्त विशेष रूप से उल्लेखनीय है-

एक ही अधिगम अनुभव से विभिन्न प्रकार के व्यवहार परिवर्तन किए जा सकते है। साथ ही भिन्न प्रकार के व्यवहार परिवर्तनों के लिए भिन्न प्रकार के अधिगम अनुभवों की आवश्यकता हो सकती है।

अधिकांश स्थितियों में भावात्मक पक्ष, ज्ञानात्मक पक्ष से नियंत्रित होता है अर्थात किसी विषय के सम्बंध में भावनाएं तभी संकिय हो सकती हैं जब उसे समझने के लिए आवश्यक ज्ञान तथा कौशल प्राप्त कर लिया गया हो। पाठयचर्या -आयोजकों को अधिगम अनुभवों के चयन के सम्बंध में निम्नलिखित निर्देशों का अनुसरण करना चाहिए।

1. प्रत्यक्ष तथा दूसरों के द्वारा प्राप्त अनुभवों के अवसरों में संतुलन स्थापित किया जाये।
2. दोनों प्रकार के अनुभवों का आलोचनात्मक विश्लेषण करने के अवसर उपलब्ध कराये जायें।
3. विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के अधिगम-अनुभवों के गारे में समुचित निर्णय लिया जाए।
4. ऐसे अधिगम-अनुभवों का चयन किया जाये जो उपयुक्त भावनाओं को विकसित कर सकें तथा भय की सम्भावनाओं को कम करें।
5. चूंकि अधिगम कई रूपों में होता है अतः ऐसे अधिगम-अनुभवों का चयन करना चाहिए जो एक साथ एक से अधिक क्षेत्रों अथवा उद्देश्यों के लिए उपयोगी हों।
6. अधिगम अनुभव उद्देश्यों से सीधे सम्बन्धित हो।
7. अधिगम अनुभव विद्यार्थियों के लिए सार्थक एवं संतोषप्रद हो।
8. अधिगम अनुभव बालकों की परिपक्वता के अनुसार हो।

अधिगम अनुभवों के चयन के निर्धारण हेतु प्रमुख दो प्रस्तावित मानदण्ड इस प्रकार है-

बर्टन द्वारा प्रस्तावित मानदण्ड के अनुसार अधिगम-अनुभवों को निम्नलिखित छः शर्ते पूरी करनी चाहिए-

- वह विद्यार्थियों की दृष्टि से उद्देश्य प्राप्ति के लिए प्रयुक्त किये जाने के योग्य हो।
- शिक्षकों की दृष्टि में, वह वांछनीय सामाजिक उद्देश्यों की ओर ले जाने वाला हो।
- वह वर्ग के परिपक्वता स्तर के लिए उपयुक्त हो अर्थात वर्ग के लिए चुनौतीपूर्ण हो, प्राप्य हो, नवीन अधिगम की ओर ले जाने वाला हो।
- उसमें विद्यार्थियों के समुचित विकास के लिए, संतुलित विकास के लिए विभिन्न प्रकार की वैयक्तिक तथा वर्गगत कियाओं का समावेश हो।

उसका आयोजन विद्यालय तथा समाज में उपलब्ध साधन सुविधाओं के द्वारा किया जाना सम्भव हो।

उनमें व्यक्तिगत भिन्नताओं की दृष्टि से इतनी विविधता हो कि वर्ग के सभी सदस्यों को उपयुक्त प्रवृत्तियां सुलभ हो सकें।

व्हीलर द्वारा प्रस्तावित मानदण्ड अधिक व्यापक एवं वैज्ञानिक हैं। इसके सात बिन्दु हैं जो अधिगम के सिद्धान्तों के आधार पर निर्धारित किए गए हैं। ये बिन्दु इस प्रकार हैं-

- वैधता
- व्यापकता
- विविधता
- उपयुक्तता
- प्रतिमान
- जीवन से तादात्म्य
- विद्यार्थियों का सहभागीत्व

3. अन्तर्वस्तु का चयन

पाठयचर्या विकास का तृतीय सोपान अन्तर्वस्तु का चयन करना होता है। अन्तर्वस्तु चयन के अंतर्गत निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है-

- अन्तर्वस्तु के विभिन्न स्रोतों पर ज्ञान प्राप्त करना

- अन्तर्वस्तु चयन का आधार निश्चित करना
- अन्तर्वस्तु चयन की प्रमुख समस्याओं का ज्ञान एवं उनके समाधान का प्रयास।
- अन्तर्वस्तु चयन प्रकिया के मानदण्ड निर्धारित करना।
- अन्तर्वस्तु चयन प्रकिया के प्रमुख पदों का ज्ञान।

अन्तर्वस्तु के स्रोत के अंतर्गत पोषित मूल्य, आवश्यकताएं समाज का वर्तमान एवं सम्भावित भावी स्वरूप, शिक्षार्थी की प्रकृति, लोकतांत्रिक नागरिकता की भावी आवश्यकताओं के रूप में प्रौढ़ कियाएं, जनमत, मानवीय ज्ञान का बढ़ता हुआ भण्डार, विषय अथवा अनुशासन की प्रकृति एवं स्वरूप सम्मिलित है।

अन्तर्वस्तु चयन का मूल आधार शैक्षिक उद्देश्य होते हैं। अन्तर्वस्तु चयन के दो प्रमुख प्रस्तावित मानदण्ड हैं-

1. **स्टेनली निस्वत द्वारा प्रस्तावित मानदण्ड** - स्टेनली निस्वत ने दो वर्गों में 12 उद्देश्यों को निर्धारित किया है-

   अ. पर्यावरण समायोजन सम्बंध

   1. कौशल
   2. संस्कृति
   3. गृह सदस्यता
   4. व्यवसाय
   5. अवकाश
   6. सक्रिय नागरिकता

   ब. व्यक्तिगत विकास

   7. शारीरिक विकास
   8. सौन्दर्य बोधात्मक विकास
   9. सामाजिक विकास
   10. आध्यात्मिक विकास
   11. बौद्धिक विकास
   12. नैतिक विकास

2. **व्हीलर द्वारा प्रस्तावित मानदण्ड-** व्हीलर द्वारा प्रस्तावित मानदण्डों को दो भागों में विभक्त किया गया है-

अ. मुख्य मानदण्ड- इसके अंतर्गत दो बिन्दु है-

i. वैधता
ii. महत्व

ब. गौड़ मानदण्ड- इसके अंतर्गत चार बिन्दु हैं -
i. शिक्षार्थी की आवश्यकताएं एवं अभिरुचियां
ii. उपयोगिता
iii. अधिगम योग्यता
iv. सामाजिक तथ्यों के साथ संगति
अन्तर्वस्तु चयन प्रक्रिया के दो प्रमुख पद होते हैं-

प्रथम पद-

i. विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले विषयों का निश्चय।
ii. उन विषयों का निश्चय जिनमें से छात्र अपनी रुचि के अनुसार वैकल्पिक चयन कर सके।

द्वितीय पद -प्रत्येक विषय के शिक्षण के लिए समय की अवधि का निर्धारण।

4. अधिगम अनुभवों एवं अन्तर्वस्तु का संगठन

यह पाठयचर्या विकास का चतुर्थ सोपान है। हैरिक एवं हाइटलर के अनुसार अधिगम अनुभवों एवं अन्तर्वस्तु संग्रथन एवं संगठन ही पाठयचर्या प्रक्रिया की केन्द्रीयभूत समस्या है। जेम्स एम0ली0 के अनुसार पाठयचर्या की संरचना का निर्माण छः पृथक तत्वों के मिलने से होता है-आयोजन या प्रकल्प (Design), क्षेत्र (Scope), अनुक्रम (Sequence), सातत्य (Continuity), संतुलन अथवा विस्तार (Balance or Range), तथा एकीकरण (Integration)। सेलर एवं एलेक्जेन्डर ने पाठयचर्या आयोजन का प्रकल्प क अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है-

‘‘पाठयचर्या प्रकल्प आयोजन वह ढांचा या संरचना है जिसका विद्यालय में शैक्षिक अनुभवों के चुनने, नियोजित करने तथा कार्यान्वित करने में प्रयोग किया जाता है। अतः प्रकल्प वह योजना है जिसका सीखने की क्रियाओं को प्रदान करने के लिए शिक्षक द्वारा अनुसरण किया जाता है।‘‘

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रकल्प वह ढंग है जिसको अपनाकर सीखने के अनुभवों एवं चयनित अन्तर्वस्तु को संगठित तथा निर्मित किया जाता है।

पाठयचर्या संगठन सम्बंधी कुछ विद्वानों द्वारा प्रस्तुत क्रमिक चरण निम्नलिखित हैं-

1. प्रारम्भिक बाल्यावस्था के 2 या 3 वर्ष- बोध तथा आत्म विश्वास का अभ्यास।
2. इसके बाद 3 या 4 वर्ष - पठन, कथन, लेखन आदि आधारभूत कौशलों पर बल।
3. तत्पश्चात विषयों पर ध्यान दिये बिना महत्वपूर्ण विचारों तथा चिन्तन विधियों पर ध्यान।
4. अंत में विशिष्ट विषयों पर ध्यान।

स्पष्ट है कि ये चरण एक दूसरे से पृथक न रहकर परस्पर जुड़े रहेंगे तथा प्रत्येक छात्र एक ही समय में एक से अधिक स्तरों पर रहेगा। इससे यह भी लाभ रहेगा कि छात्र किसी चरण से वंचित नही रहेगा।

सेलर तथा एलेक्जेन्डर ने अपनी पुस्तक **"Curriculum Planning in Modern School"** में विद्यालयी विषयों के लिए अंतर्वस्तु का चयन एवं संगठन इस प्रकार प्रस्तावित किया है-

1. अनुशासन आधारित विद्यालयी विषय-गणित, विज्ञान, भाषा, कुछ सामाजिक विषय, संगीत एवं कला के सैद्धांतिक विषय।
2. ऐसे विद्यालयी विषय जिनकी अंतर्वस्तु अनुशासन आधारित नहीं है- व्यापारिक उद्योग, विदेशी भाषा, स्वास्थ्य, गृहकला, औद्योगिक कला व्यवसाय आदि।
3. क्रियात्मक कौशलों के विकास पर आधारित विद्यालयी विषय- पठन, भाषण, पत्रकारिता, शारीरिक विज्ञान, संगीत, कला, व्यापारिक क्षेत्र के अनेक अध्ययन औद्योगिक कला एवं व्यवसाय।

इसमें दूसरे क्रम का आधार सामाजिक जीवन तथा छात्रों की आवश्यकताएं, अभिरुचियां, समस्याएं, अनुभव तथा व्यावसायिक आवश्यकताएं हैं, जबकि तीसरे क्रम का आधार अपेक्षित कौशलों का विकास करना है।

उपर्युक्त बिन्दुओं से स्पष्ट है कि पाठयचर्या का निर्माण बालकों की आवश्यकताओं रुचियों, योग्यताओं, विशिष्टताओं एवं विभिन्नताओं को दृष्टि में रखते हुए किया जाना चाहिए जिससे उनके व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास हो सके तथा भावी जीवन में वे सफल जीवन-यापन के योग्य बन सकें। इस दृष्टि से विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन ही पाठयचर्या है। माध्यमिक शिक्षा आयोग का यह कथन इसकी पुष्टि करता है

5. सम्पूर्ण प्रक्रिया का उद्देष्यों की प्राप्ति की दृष्टि से मूल्यांकन-

पाठयचर्या संरचना का अंतिम सोपान सम्पूर्ण प्रक्रिया का उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से मूल्यांकन करना है। पाठयचर्या के मूल्यांकन का तात्पर्य शैक्षिक प्रयासों के परिणामस्वरूप् उत्पन्न व्यवहारगत

परिवर्तनों की प्रकृति, दिशा तथा सीमा के प्रमाण प्राप्त करना तथा उनको पाठयचर्या प्रक्रिया के पक्षों में सुधार लाने के लिए मार्ग-दर्शन के रूप में प्रयुक्त करना है।

विद्यार्थियों के व्यक्तिगत अथवा वर्गगत व्यवहार परिवर्तन के साथ-साथ विद्यालय के उद्देश्यों तथा उन्हें प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त अधिगम-अनुभवों, अन्तर्वस्तु संगठन तथा शिक्षण विधियों के सम्बंध में निर्णय लेना भी मूल्यांकन के अंतर्गत आता है। अतः शिक्षा में मूल्यांकन के दो प्रमुख क्षेत्र निम्नवत् है-

1. छात्रों में व्यवहारगत परिवर्तन तथा इन व्यवहारों को प्रभावित करने के लिए उत्तरदायी कारक।
2. मूल्यांकन कार्यक्रम का छात्र अभिप्रेरणा तथा अधिगम पर प्रभाव।
3. पाठयचर्या प्रक्रिया के सभी पक्षों का मूल्यांकन।

मूल्यांकन कार्य में मापन एवं परीक्षण सम्मिलित होता है। मूल्यांकन कार्यक्रम में प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित है-

1. क्रमबद्धता
2. वस्तुनिष्ठता
3. विश्वसनीयता
4. वैधता
5. व्यावहारिकता
6. व्यापकता
7. शिक्षार्थी की सहभागिता।

मूल्यांकन के महत्व को क्रानबैक ने निम्न प्रकार स्पष्ट किया है-

‘‘ मूल्यांकन पाठयचर्या -निर्माण की परिशिष्ट न होकर अनिवार्य अंग हैं’’
मूल्यांकन चयन में सहायक आवश्यक प्रदत्तों को उपलब्ध कराता है तथा यह व्यक्ति अथवा वर्ग की अधिगम तत्परता का बोध कराता है।
इस प्रकार पाठयचर्या की मूल्यांकन प्रक्रिया इसके विकास के सभी चरणों में सतत् रूप से चलती रहती है। तथा इससे भावी कदम के लिए दिशा निर्देश प्राप्त होता रहता है। पाठयचर्या -निर्माताओं को मूल्यांकन के इस महत्व को सदैव ध्यान में रखना चाहिए।

3.7 पाठयचर्या निर्माण के आधारभूत सिद्धान्त

1. **अतीत को जानने या सुरक्षित रखने का सिद्धान्त-** हमें अपने देश के विकास को ध्यान में रखते हुए यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि हम वर्तमान को देखे और अतीत को भूल जायें। अतीत वर्तमान के लिए महान पथ प्रदर्शक की भूमिका में रहता है । हमें प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण में अतीत की सहायता लेनी चाहिए अन्यथा हम यह नहीं जान पायेंगे कि अतीत में हमने अपने देश के हित में क्या किया है और वर्तमान में क्या करना है। अतः स्पष्ट है कि हम अतीत को सुरक्षित रखते हुए उस पाठयचर्या का निर्माण करेंगे। जिसके द्वारा हम वर्तमान में छात्रों को उस संस्कृति से परिचित करायें जो हमारी पारम्परिक धरोहर है। साथ ही हम उन विषयों तथा कार्यक्रमों को चुनेंगे जो कि हमें वर्तमान समय में लाभ पहुंचायेंगे। हमें अतीत को इसलिए जानना है क्योंकि हमारा अतीत अत्यन्त गौरवशाली है और अन्य देशों को ज्ञान का मार्ग दिखाने का काम किया है। अतीत के अध्ययन से यह पता चलता है कि हमारे पूर्वजों के लिए क्या उपयोगी तथा लाभदायक था और वर्तमान समय में क्या लाभदयाक होगा। इस बात का ध्यान रखते हुए स्कूल का कर्तव्य है कि वह परम्पराओं, उनके ज्ञान तथा उनके व्यावहारिक मानदण्डों का संरक्षण करेऔर आने वाली पीढ़ी को सौंप दें, अन्यथा हमारे देश की सभ्यता समाप्त हो जायेगी। इसलिए हमें चाहिए कि परम्पराओं , प्रथाओं एवं अतीत को जानते हुए वर्तमान पाठयचर्या के निर्माण में अतीत को जानने की परम आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पाठयचर्या निर्माण किया जाए।
2. **जीवन की उपयोगिता से सम्बन्धित होने का सिद्धान्त**- पाठयचर्या में उन विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए जो वर्तमान में बालकों के भावी जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके साथ ही उनका वास्तविक जीवन से सम्बन्ध हो, पाठयचर्या में वे सभी कार्यक्रम समाविष्ट होने चाहिए जो कि बालकों को इस योग्य बना दें कि वह बड़ा होने पर प्रभावपूर्ण ढंग से सामाजिक कार्यों में भाग ले सके और वर्तमान जीवन को सरलता से व्यतीत कर सके। ऐसे पुराने विषयों को नहीं पढ़ाया जाना चाहिए जिससे जीवन का कोई सम्बन्ध न हो। पाठयचर्या में ऐसी बातों को जोड़ा जाये जिसके द्वारा बालक अपनी उपयोगिता का समक्ष सके, पाठयचर्या में उन्हीं विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए जो बालकों के भावी जीवन में काम आ सके। अनुपयोगी विषयों को पाठयचर्या से अलग रखा जाना चाहिए। पाठयचर्या में मातृभाषा, राष्ट्रभाषा, सामाजिकता को प्रथम स्थान पर रखा जाना चाहिए, जिससे बालकों को उपयोगिता के आधार पर पाठयचर्या दिया जा सके। पाठयचर्या बालक के भावी जीवन के लिए उपयोगी होना चाहिए।
3. **रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियों का सिद्धान्त**- पाठयचर्या में ऐसे सभी विषयों को जोड़ा जाना चाहिए जिसमें रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियों के विकास में अपना योगदान प्रदान कर सके। इसके लिए बालकों को समय-समय पर प्रोत्साहित भी किया जाना चाहिए तथा उचित दिशा निर्देश दिया जाना उपयुक्त होगा। प्रत्येक बालक में किसी न किसी रूप में रचनात्मक कार्य

करने की योग्यता अवश्य होती है। बालक की रुचियों तथा विशिष्ट योग्यताओं की खोज करके उनके अन्दर रचनात्मक एवं सृजनात्मक भावनाओं का विकास किया जा सके।

4. **क्रियाशीलता का सिद्धान्त-** पाठयचर्या का निर्माण क्रियाओं तथा अनुभवों को ध्यान में रखते हुए किया जाये बच्चे की दैनिक क्रियाओं की ओर अनुभूति करते हुए पाठयचर्या का निर्माण किया जाना चाहिए जिससे भविष्य में बालक सर्वांगीण विकास किया जा सके साथ ही पाठयचर्या में ऐसी क्रियाओं एवं अनुभवों की स्थान दिया जाना चाहिए जो लोकतांत्रिक दृष्टिकोण को अधिक से अधिक विकसित कर सकें।
5. **नैतिकता एवं उत्तम आदर्शों का सिद्धान्त**- बालक को शिष्ट एवं नैतिक जीवन व्यतीत करने हेतु पाठयचर्या में नैतिकता का विकास करना होगा जिसके द्वारा बालकों को बताना होगा कि इस लोकतांत्रिक देश में नैतिक मूल्य क्या है और इनकी उपयोगिता क्या है। क्योंकि पाठयचर्या में जब तक नैतिकता को स्थान नहीं होगा तब तक हम अपने लोकतांत्रिक उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं कर सकते हैं। पाठयचर्या के निर्माण के समय ध्यान रखना होगा कि बालक के अन्दर उत्तम आदर्शों का होना अति आवश्यक है। इसके लिए हमें चाहिए कि उन विषयों, क्रियाओं का समावेश करे जिससे बालकों को उत्तम आदर्श प्राप्त हो सके। पाठयचर्या में हमें समाज, देश एवं परोपकार की भावना का भी समावेश करना होगा।
6. **लचीलेपन का सिद्धान्त-** पाठयचर्या निर्माण के समय ध्यान देना होगा कि हमारा पाठयचर्या लचीला हो जिसमें बालक की आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन किया जा सके और अनावश्यक बालक पर बोझ न लादा जाये। अन्यथा बालक निराशा की भावना से ग्रसित हो सकता है और व बालक की रुचियों आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अनुपक्त साबित होता है। अतः वर्तमान को देखते हुए पाठयचर्या का लचीला होना अनिवार्य है। जिसमे आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके।
7. **विकास एवं प्रगतिषीलता की प्रक्रिया का सिद्धान्त**- किसी भी पाठयचर्या का निर्माण सदैव के लिए नहीं होता है। हमें परिस्थिति के अनुसार पाठयचर्या में बदलाव की आवश्यकता होती है। जिससे हम अपने आने वाले भविष्य को तैयार कर सकें। और पाठयचर्या के माध्यम से शिक्षा को विकासोन्मुख बना सकें हमें चाहिए कि अपने राष्ट के विकास हेतु वर्तमान समय एवं परिस्थितियों का ध्यान में रखते हुए पाठयचर्या का निर्माण करना होगा जिसके द्वारा हम बालक का विकास शील प्रक्रिया से जोड़ सकें । किसी भी देश की प्रगति में पाठयचर्या का महत्वपूर्ण स्थान होता है क्योंकि यदि आप बालक को देश की प्रगति के बारे में नहीं बतायेंगे तो वह वर्तमान में देश की प्रगति में किए जा रहे प्रयासों में शामिल नहीं हो पायेगा। आज के बच्चे कल के आदर्श नागरिक हैं अतः उनको इस प्रकार शिक्षित किया जाना चाहिए कि उनमें प्रगतिशील विचारों की अवधारणा विकसित हो सके।

8. **अनुभवों की पूर्णता का सिद्धान्त**- पाठयचर्या का अर्थ केवल सैद्धान्तिक विषयों से नहीं होना चाहिए बल्कि पाठयचर्या में उन सभी अनुभवों को स्थान दिया जाना चाहिए जिनको बालक विद्यालय के बाहर अन्य जगहों पर प्राप्त करता है। जैसे खेल का मैदान, प्रयोगशाला, वर्कशाप आदि। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पाठयचर्या में बालक द्वारा विभिन्न क्रियाओं से प्राप्त अनुभव भी विशेष महत्व रखते हैं।
9. **खाली समय के सदुपयोग का सिद्धान्त**- पाठयचर्या निर्माण के समय ध्यान दिया जाना चाहिए कि बालक खाली समय का उपयोग किस प्रकार करे। पाठयचर्या में साहित्य, कला, खेलकूद, सामुदायिक कार्यों का समावेश होना चाहिए। हम कह सकते हैं कि पाठयचर्या इस प्रकार नियोजित किया जाये कि छात्रों के सर्वांगीण विकास सहायक सिद्ध हो।
10. **संस्कृति एवं सभ्यता का सिद्धान्त**- शिक्षा का एक उद्देश्य छात्रों को अपनी संस्कृति एवं सभ्यता के संरक्षण के प्रति जागरूकता प्रदान करना भी है। पाठयचर्या में उन विषयों, वस्तुओं एवं क्रियाओं को अवश्य शामिल किया जाना चाहिए जिनके द्वारा बालकों को अपनी संस्कृति एवं सभ्यता का ज्ञान प्राप्त हो सके। पाठयचर्या के माध्यम से छात्रों को अपनी सांस्कतिक धरोहरों एवं सभ्यताओं के संरक्षण के लिए प्रेरित किया जा सके।
11. **प्रजातन्त्रात्मक भावना के विकास का सिद्धान्त**- हमारा देश एक प्रजातांत्रिक देश है हमें चाहिए कि पाठयचर्या के द्वारा प्रजातांत्रिक भावना को विकसित किया जाना चाहिए जिससे कि शिक्षा का मूल उद्देश्य की प्राप्ति हो सके। हमारा पाठयचर्या ऐसा होना चाहिए जो जनतंत्र की भावना एवं आदर्श को पोषक हो हमें बालक के अन्दर लोकतांत्रिक भावना को जागृत करना है इसलिए पाठयचर्या जनतांत्रिक भावना का समावेश होना चाहिये।
12. **नवीनता की खोज का सिद्धान्त**- पाठयचर्या के निर्माण के समय हमें ध्यान देना चाहिये कि हम उस नवीन ज्ञान की प्राप्ति हेतु अग्रसर रहे जिसके द्वारा बालक का विकास हो सकता है। पाठयचर्या में चाहिए कि वर्तमान का ध्यान रखते हुए नवीन ज्ञान को भी स्थान दिया जाना चाहिए।
13. **सह-सम्बन्ध का सिद्धान्त**- पाठयचर्या में चाहिए कि एक विषय की शिक्षा दूसरे विषय की शिक्षा का आधार बन सके, विषयों के सम्बन्धित न होने पर पाठयचर्या की प्रभावशीलता समाप्त हो जाती है। बालक को सह-सम्बन्ध के आधार पर पाठयचर्या बताया जाना चाहिए।
14. **सर्वांगीण विकास का सिद्धान्त-** बालक को ऐसा पाठयचर्या देना चाहिए जिससे कि वह हर प्रकार का ज्ञान अर्जित कर सके जिससे वह अपना शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक, संवेगात्मक तथा नैतिक विकास कर सके। यदि हमारा पाठयचर्या बालक के सर्वांगीण विकास में सहायक होगा तभी हम उन शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति कर पायेंगे।
15. **सामुदायिक जीवन से सम्बन्ध का सिद्धान्त**- पाठयचर्या के निर्धारण के समय यह भी ध्यान रखा जाये कि बालक को सामुदायिक जीवन यापन करते समय कठिनाई का सामना न करना पड़े।

उसके लिए हमें चाहिए स्थानीय आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए प्रथाओं, संस्कारों, मान्यताओं, विश्वासों, मूल्य एवं मूलभूत समस्याओं को पाठयचर्या में स्थान दिया जाना चाहिए।

16. **सन्तुलन का सिद्धान्त**- पाठयचर्या के निर्माण में ध्यान देना चाहिए कि जीवन का हर पहलू एवं हर विषय में समान महत्व की प्राप्ति हो। ऐसा न हो कि किसी विषय या पहलू को अधिक महत्व दिया जाये, अतः बालक पाठयचर्या के द्वारा प्रत्येक क्षेत्र का समान ज्ञान प्राप्त कर सके।
17. **शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति का सिद्धान्त**- पाठयचर्या में उन्ही क्रियाओं एवं विषयों को रखा जाना चाहिए जो शिक्षा के उद्देश्यों के अनुकूल हो हमें बालक को सामाजिक हितों के संरक्षण योग्य बनाना है । हमें पाठयचर्या के माध्यम में बालक को व्यवसाय परक एवं कार्यक्षमता में निपुण बनाना है। वर्तमान समय में हमें बालक के अन्दर शारीरिक, सामाजिक, सांस्कतिक एवं चारित्रिक विकास के बच्चे बच्चे शिक्षा के क्षेत्र में सर्वांगीण विकास हो जिससे हमारे शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके।
18. **चेतना का सिद्धान्त**- पाठयचर्या इस प्रकार का जिसमें छात्र के अन्दर भविष्य में होने वाली घटनाओं के विषय में जानकारी दी जा सके ताकि समाज एवं देश के विकास में बालक सहयोग प्रदान कर सके और किसी प्रकार घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो। बालक का भविष्योपयोगी जानकारी प्रदान की जाये।

अभ्यास प्रश्न

6. पाठयचर्या विकास के प्रमुख सोपानों को लिखिए।
7. पुस्तक "Curricu।am Process" के लेखक हैं _____।
8. _____द्वारा प्रस्तावित मानदण्ड के अनुसार अधिगमअनुभवों को छः शर्ते पूरी करनी - चाहिए।
9. _____के अनुसार पाठयचर्या की संरचना का निर्माण छः पृथक तत्वों के मिलने से होता है।
10. "Curricu।um P।anning in Modern Schoo।" नामक पुस्तक के लेखक कौन हैं]
11. पाठयचर्या निर्माण के किन्हीं दो आधारभूत सिद्धान्तों को लिखिए

3.8 सारांश

पाठयचर्या शिक्षा का आधार है। पाठयचर्या के बिना इस लोकतांत्रिक देश में शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो सकती, अतः हमें चाहिए कि उन शैक्षिक उद्देश्यों, मानवीय मूल्यों को ध्यान में रखकर पाठयचर्या का निर्माण करना होगा साथ अनुसंधान के माध्यम से बालक की आवश्यकताओं एवं जीवन उपयोगी बनाना है। जिससे भविष्य में वह अच्छे समाज का नागरिक बन सके और अपनी

व्यक्तित्व क्षमता एवं शक्ति के माध्यम से देश को प्रगतिशीलता में सहयोग प्रदान करे। बालक को मानसिक, शारीरिक, संवेगात्मक आदि क्रियाओं को ध्यान में ध्यान हुए सर्वांगीण विकास हेतु पाठयचर्या को नवीन पाठयचर्या के रूप में प्रस्तुत करना है। ऐसे पाठयचर्या का निर्माण करना है जिसमें बालक, शिक्षक एवं समाज तथा विषय वस्तु का ध्यान रखा जायें जिससे हमारे नैतिक मानवीय मूल्यों का ह्रास न हो। हमे सभ्यता, संस्कृति, राष्टीयता एवं अंतराष्टीयता की भावना को ध्यान में रखना होगा। बालक के अन्दर अच्छे गुणों के विकास हेतु पाठयचर्या निर्माण में पुस्तक के द्वारा एवं लेखकों, शिक्षाविदों, समाजसेवियों अन्य सभी से राय लेते एवं पूर्ण मूल्यांकन करते हुए, शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पाठयचर्या का विकास करना होगा।

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पाठयचर्या के कोई दो उद्देश्य -
   - आवश्यकता अनुसार पाठयचर्या का निर्माण करना।
   - बालक का सर्वांगीण विकास करना एवं बालक को जीवन उपयोगी बनाना।
2. सरल , परिवर्तनशील
3. मूल्यांकन पद्धति
4. ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक
5. राष्टीय शिक्षा नीति 1986
6. पाठयचर्या विकास के प्रमुख सोपानों हैं -
   i. शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण।
   ii. निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु उपयुक्त अधिगम अनुभवों का चयन।
   iii. अधिगम अनुभवों को प्रस्तुत करने के लिए उपयुक्त अन्तर्वस्तु का चयन।
   iv. अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया की दृष्टि से चयनित अधिगम अनुभवों एवं अन्तर्वस्तु का संगठन।
   v. सम्पूर्ण प्रक्रिया का उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से मूल्यांकन।
7. डी0के0 व्हीलर
8. बर्टन
9. जेम्स एम0ली0
10. सेलर तथा एलेक्जेन्डर
11. पाठयचर्या निर्माण के कोई दो आधारभूत सिद्धान्त
    i. जीवन की उपयोगिता से सम्बन्धित होने का सिद्धान्त

ii. लचीलेपन का सिद्धान्त

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाठक पी.डी.,त्यागी जी.एस.डी.,दसवां संस्करण, 1988, ''सफल शिक्षण कला'', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
2. अग्रवाल जे.सी., जायसवाल विजय, 2008, 2013, ''शैक्षिक तकनीकि एवं प्रबंध'', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
3. मालवीय डॉ., राजीव, 2011, '' शैक्षिक तकनीकि एवं प्रबन्ध'', शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
4. अग्रवाल जे.सी., 2011, ''शैक्षिक तकनीकि एवं प्रबन्ध'', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
5. मिश्रा, डॉ. डी.सी., द्वितीय संस्करण, , ''शैक्षिक तकनीकि के सारभूत तत्व एवं प्रबंधन", साहित्य प्रकाशन, आगरा।
6. लाल, रमन बिहारी, 2009-2010, "भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्यायें", रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ।
7. सिंह डॉ., कर्ण, 2004, ''भारतीय शिक्षा का ऐतिहासिक विकास'', वेदान्त पब्लिकेशन्स, लखनऊ।
8. इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, अगस्त 2008, ''पाठ्यचर्या एवं अनुदेशन।
9. http://www.ncdc.go.ug
10. http://www.undp.org
11. http://www.uwsp.edu
12. http://www.unom.ac.in
13. http://www.wikihow.com
14. http://www.tigweb.org
15. http://www.staff.mq.edu.au>teaching
16. http://www.flinders.edu.au
17. http://www.technology.com
18. http://www.cuip.uchicago.edu
19. http://www.oak.ucc.nau.edu
20. http://www.threeeducationcafe.wordpress.com

3.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठयचर्या विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।
2. पाठयचर्या विकास के प्रमुख सिद्धान्त कौन -कौन से हैं? विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

3. डी0 के0 व्हीलर द्वारा प्रतिपादित पाठयचर्या विकास के प्रमुख सोपानों की विवेचना कीजिए।
4. स्टैनली निस्वत द्वारा प्रस्तावित अन्तर्वस्तु चयन के प्रमुख मानदण्डों को लिखिए।
5. पाठयचर्या निर्माण की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
6. एक अच्छे पाठयचर्या निर्माण के क्या उद्देश्य होंगे? लिखिए।

इकाई 4 : पाठयचर्या विकास के निर्धारक

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 पाठयचर्या विकास के निर्धारक
4.3.1 पाठयचर्या विकास के दार्शनिक आधार/निर्धारक
4.3.2 पाठयचर्या विकास के सामाजिक आधार/निर्धारक
4.3.3 पाठयचर्या विकास के मनोवैज्ञानिक आधार/निर्धारक
4.4 सारांश
4.5 शब्दावली
4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

शिक्षा एक सोद्देश्य प्रक्रिया है तथा शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु पाठयचर्या का निर्माण किया जाता है। पाठयचर्या वह समग्र परिस्थिति अथवा परिस्थितियों का समूह होता है जिसके माध्यम से शिक्षक तथा विद्यालय प्रशासक उन अनेक बालकों एवं तरुणों के व्यवहार में परिवर्तन लाते हैं जो विद्यालय शिक्षा ग्रहण करने आते हैं। पाठयचर्या में केवल ज्ञानात्मक पक्ष का ही समावेश नही किया जाता है अपितु कौशल एवं रुचियों, मनोवृतियों आदि व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों का समावेश होता है। अब आप के मन में यह प्रश्न होगा कि पाठयचर्या निर्माण के आधार क्या हैं? प्रमुख रूप से तीन शास्त्र पाठयचर्या के आधार निश्चित करते हैं। प्रथम आधार दर्शन शास्त्र द्वारा निर्धारित किया जाता है। शिक्षा के लक्ष्य, ज्ञान की प्रकृति, शिक्षा में मूल्यों का समावेश, इन सबका निर्धारण दर्शनशास्त्र द्वारा किया जाता है। शैक्षिक लक्ष्यों को व्यावहारिक शब्दावली में प्रस्तुत करने का कार्य मनोविज्ञान करता है। कितना और किस प्रकार का ज्ञान किस कक्षा स्तर, आयु स्तर के बालकों के लिए उपयुक्त है? व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान में रखकर पाठयचर्या निर्माण करने में भी शिक्षा मनोविज्ञान मदद करता है। मनोविज्ञान का सबसे अधिक प्रभाव शिक्षण विधियों पर पड़ता है। शिक्षण विधियों को भी पाठयचर्या का अंग माना जाता है। इस प्रकार मनोविज्ञान पाठयचर्या निर्माण का दूसरा प्रमुख आधार माना जाता है। मनुष्य के सामाजिक प्राणी होने के नाते उससे कुछ सामाजिक अपेक्षाएँ होतीं

हैं। सामाजिक परिस्थितियों का अध्ययन व विश्लेषण समाजशास्त्र द्वारा किया जाता है । शिक्षा के लक्ष्य सामाजिक परिस्थितियों द्वारा प्रभावित होते हैं और इस प्रकार समाजशास्त्र शिक्षा के लक्ष्यों का निर्धारण करने में सहायक होता है। इस प्रकार पाठयचर्या विकास के प्रमुख निर्धारक दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र हैं जिनके द्वारा ही सार्थक एवं प्रभावशाली पाठयचर्या निर्मित किया जाता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप –

1. पाठ्यचर्या विकास के लिए विषय की प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे।
2. विद्यार्थी संबंधी उन कारकों को स्पष्ट कर सकेंगे जो पाठ्यचर्या विकास को प्रभावित करते हैं।
3. पाठ्यचर्या विकास को प्रभावित करने वाले दार्शनिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक कारकों(निर्धारकों) को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. पाठ्यचर्या योजना तथा पाठ्यचर्या विकास पर विभिन्न कारकों के सापेक्ष प्रभाव की चर्चा कर सकेंगे।

4.3 पाठयचर्या विकास के निर्धारक

अब आप उन कारकों के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे जो पाठयचर्या विकास के प्रमुख आधार हैं अर्थात जो पाठयचर्या विकास के प्रमुख निर्धारक हैं। पाठयचर्या विकास के प्रमुख आधारों- दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र की चर्चा निम्नलिखित है-

4.3.1 पाठयचर्या विकास के दार्शनिक आधार

शिक्षा क्यों दें ? किसको दें ? कैसे दें ? कब दें ? तथा शिक्षा कैसी हो? आदि आधारभूत प्रश्नों पर आप विचार कीजिये? पाठयचर्या निर्माताओं को इन आधारभूत प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक होता है। पाठयचर्या के क्रियान्वयन के फलस्वरूप प्राप्त परिवर्तित व्यवहार की वांछनीयता अथवा उचित – अनुचित के निर्धारण में भी दर्शन की शाखा मूल्यमीमांसा दिशा प्रदान करती है। दर्शनशास्त्र मूलतः जीवन की आधारभूत समस्याओं के उत्तर प्राप्त करने और मानव जीवन को सार्थक बनाने के लिए किए जाने वाले अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जाता है।

पाठयचर्या का मेरुदंड ही दर्शन है। क्या पढ़ाया जाय? क्या न पढ़ाया जाय? इस प्रश्न का उत्तर व्यक्ति और समाज अपनी दार्शनिक मान्यता के आधार पर देता है। प्रत्येक दार्शनिक विचारधारा का

पाठयचर्या पर अवश्य प्रभाव पड़ता है। **रस्क** महोदय ने कहा है कि "दर्शन पर पाठयचर्या का संगठन जितना आधारित है उतना शिक्षा का कोई अन्य पक्ष नहीं।

देश और काल के अंतराल से अभी तक जिन विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का अभ्युदय हुआ है, उनमें से प्रमुख विचारधाराएँ निनलिखित हैं-

1. आदर्शवाद (Idealism)
2. प्रकृतिवाद (Naturalism)
3. प्रयोजनवाद (Pragmatism)
4. यथार्थवाद (Realism)
5. अस्तित्ववाद (Existentialism)

आदर्शवाद और पाठयचर्या (Idealism and Curriculum)

आदर्शवाद भौतिक जगत की तुलना में आध्यात्मिक जगत को अधिक महत्तव देता हैं तथा वस्तु की अपेक्षा विचार को अधिक महत्वपूर्ण मानता हैं। इसलिये शिक्षा के उद्देशय- आत्मानुभूति अथवा व्यक्तित्व का उन्नयन करना है। इसलिये आदर्शवादी पाठयचर्या की रचना आदर्शो, विचारों एवं शाशवत मूल्यों के आधार पर होती हैं और पाठयचर्या में प्रमुख विषयों- धर्मशास्त्र, अध्यात्मशास्त्र, भाषा, साहित्य, समाजशास्त्र, इतिहास, भूगोल, कला एवं संगीत आदि को शामिल करने पर बल देता है तथा शारीरिक शिक्षा, विज्ञान, गणित आदि को गौण विषय मानता है।

प्रकृतिवाद और पाठयचर्या (Naturalism and Curriculum)

प्रकृतिवाद के अनुसार प्रकृति ही सब कुछ है, ईश्वर के अस्तित्व की मान्यता नहीं है तथा इस विचारधारा ने पदार्थ, भौतिक जगत एवं प्रकृतिक नियमों को सर्वाधिक महत्त्व दिया। प्रकृतिवादी मनुष्य की मूल प्रवृतियों का शोधन एवं मार्गांतिकरण कर जीवन संघर्ष के लिए तैयार करना, वातावरण से अनुकूलन को शिक्षा का मूल उद्देश्य मानते हैं। प्रकृतिवादी पाठयचर्या की रचना बालक की प्रकृति एवं रुचियों, योग्यताओं के आधार पर की जाती हैं। इस पाठयचर्या में वैज्ञानिक विषयों को प्रमुख तथा मानवीय विषयों को गौण स्थान दिया जाता है। प्रकृतिवादियों के अनुसार मुख्य विषय- खेलकूद, शरीर विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, वनस्पति विज्ञान एवं गणित आदि। इन्होने भाषा, साहित्य, सामाजिक विज्ञान, कला, संगीत आदि विषयों को कम महत्व देने की वकालत की।

प्रयोजनवाद और पाठयचर्या (Pragmatism and Curriculum)

प्रयोजनवादी दार्शनिक ईश्वर एवं आध्यात्मिक तत्व के स्थान पर व्यक्ति में विश्वास करते हैं तथा मानव की शक्ति के महत्व को स्वीकार करता है। इनके अनुसार मूल्य पूर्व निर्धारित नहीं होते हैं बल्कि निर्माण की अवस्था में हैं। इन्होने मानवीय एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को अधिक महत्व दिया। प्रयोजनवादियों के अनुसार शिक्षा के कोई पूर्व निर्धारित उद्देश्य नहीं होते बल्कि उद्देश्य व्यक्तियों के होते हैं तथा देश, काल एवं परिस्थिति के अनुसार बदलते रहते हैं।शिक्षा का कार्य ऐसे गतिशील एवं लचीले मस्तिष्क का निर्माण करना है जो अज्ञात भविष्य में नवीन मूल्यों की रचना कर सके। प्रयोजनवादी पाठयचर्या उपयोगिता, रुचि, अनुभव तथा एकीकरण के सिद्धान्त पर आधारित होता है। पाठयचर्या के प्रमुख विषय स्वास्थ्य विज्ञान, शारीरिक विज्ञान, इतिहास, भूगोल, विज्ञान, गणित, गृह विज्ञान तथा कृषि शिक्षा आदि हैं।

यथार्थवाद तथा पाठयचर्या (Realism and Curriculum)

यथार्थवादी दर्शन पूर्णत वैज्ञानिक दृष्टिकोण आधारित है। यह स्थूल जगत को महत्व देता है तथा कारण- परिणाम के वैज्ञानिक नियम को सर्वव्यापी एवं सर्वमान्य मानता है तथा व्यक्ति एवं समाज दोनों में विश्वास करता है। यथार्थवादी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य सुखी एवं वास्तविक जीवन की तैयारी हेतु ज्ञानेन्द्रियों का विकास एवं प्रशिक्षण करना है तथा बालक को प्रकृति एवं सामाजिक वातावरण से परिचित कराकर उसे व्यावसायिक कुशलता प्रदान करना है। यथार्थवादी पाठयचर्या उपयोगिता तथा आवश्यकता के सिद्धान्त पर आधारित होता है। पाठयचर्या में दैनिक जीवन मे उपयोगी विषयों को सम्मिलित किया जाता है। प्राकृतिक विज्ञान, भौतिकी, रसायन, स्वास्थ्य रक्षा, व्यायाम, भ्रमण, गणित, नक्षत्र विज्ञान, इतिहास, भूगोल आदि विषयों को शामिल किया गया है।

अस्तित्ववाद और पाठयचर्या (Existentialism and Curriculum)

अस्तित्ववाद विचारधारा पाठयचर्या की प्रस्तावना में आस्था नहीं रखते है। इस विचारधारा के पाठयचर्या का चयन छात्र स्वयं अपनी आवश्यकता, योग्यता एवं जीवन की परिस्थितियों के अनुकूल करता है। इस विचारधारा के अंतर्गत वैज्ञानिक विषयों की अपेक्षा मानवीय अध्ययनों पर विशेष बल दिया गया है। इस अध्ययनों के माध्यम से दुख, चिंता, मृत्यु, घृणा आदि का ज्ञान प्राप्त करना। इसके अंतर्गत कला, संगीत, साहित्य, धर्म, नैतिक सिद्धान्त व्यक्तिक चयन, चिंतन, स्व-उतरदायित्व विषयों को शामिल किया जाता है।

भारतीय दर्शन एवं पाठयचर्या (Indian Philosophy and Curriculum)

भारतीय दर्शनिक विचारधारा के अनुसार ज्ञान हमारी आत्मा मे निहित रहता है तथा शिक्षा द्वारा इसे प्रकाश मे लाया जाता है। यह मानव को विवेकयुक्त प्राणी मानता है। चार पुरुषार्थों के रूप में चार

भारतीय मूल्य है- अर्थ, कम, धर्म और मोक्ष। जीवन के विभिन्न पक्षों की जड़ धर्म ही है अतः जो धर्म का लक्ष्य है वही शिक्षा का भी लक्ष्य है। भारतीय दार्शनिक पाठयचर्या में यही धर्मशास्त्र, अध्यात्मशस्त्र, नीतिशास्त्र, प्राचीन भाषाएँ, गणित, तर्कशास्त्र आदि विषयों को पढ़ाने का समर्थन करतें हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्रत्येक दार्शनिक विचारधारा अपने दार्शनिक सिद्धांतों एवं मूल्यों के आधार पर विषयों को पढ़ाये जाने का समर्थन करती है तथा किसी समाज में पाठयचर्या विषयों का निर्धारण उस समाज , काल, परिस्थिति मे प्रचलित एवं मान्य दार्शनिक विचारधारा के आधार पर होता है। इस प्रकार आप जान गए होंगे कि किस प्रकार दर्शनशास्त्र पाठयचर्या निर्माण हेतु एक निर्धारक के रूप मे कार्य करता है।

4.3.2 पाठयचर्या विकास के सामाजिक आधार

शिक्षा में सामाजिक प्रवृति का तात्पर्य शिक्षा द्वारा बालकों में सामाजिक गुणों के विकास करने के प्रयास करने की प्रक्रिया से है जिससे व्यक्ति और समाज दोनों का कल्याण हो सके। उन्नीसवी शताब्दी में महान दार्शनिक रूसो के व्यक्तित्ववाद के प्रतिक्रिया के फलस्वरूप समाजिकतावादी प्रवृति का जन्म हुआ, जिसने व्यक्ति को बदलते हुए समाज में रहने के लिए तैयार करने की आवश्यकता पर बल दिया। इसी समय फ्रांसीसी विद्वान अगस्त काम्टे ने एक नवीन सामान्य सामाजिक विज्ञान 'समाजशास्त्र' को जन्म देकर शिक्षा मे समाजशास्त्रीय प्रवृति को पूर्ण बना देने की सुद्धढ आधारशिला रख दी। समाजशास्त्र की ही शाखा शैक्षिक समाजशास्त्र को समाज के सभी आदर्शो, नियमों, समस्याओं, साधनों एवं तथा उनके व्यक्ति पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करके समाज की उन्नति के लिए शिक्षा के उद्देश्यों, पाठयचर्या , शिक्षणविधि, पाठ्यपुस्तकें, अनुशासन, विद्यालय तथा शिक्षक आदि का स्वरूप निर्धारित करता है। शिक्षा में समाज की क्या भूमिका है तथा पाठयचर्या निर्माण इससे कैसे प्रभावित होता है इसकी विशेषताएँ निम्नलिखित है-

1. समाजशास्त्रीय प्रवृति (Sociological Tendency)
2. सामाजिक स्थिति (Social Condition)
3. सामाजिक दबाव वर्ग (Social Pressure Group)
4. परिवार (Family)
5. धार्मिक संगठन (Religious Organisations)
6. शिक्षक एवं शिक्षार्थी (Teacher and Students)
7. समाज की प्रकृति (Nature of the Society)
8. समाज की बदलती आवश्यकतायेँ (Changing Needs of the Society)

समाजशास्त्रीय प्रवृति और पाठयचर्या (Sociological Tendency and Curriculum)

शिक्षा में समाजशास्त्रीय प्रवृति पाठयचर्या निर्माण में साहित्यिक विषयों की अपेक्षा सामाजिक विषयों पर अधिक बल दिया जाता है। इसके अनुसार प्रकृति विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान का विशेष स्थान होता है। इसलिए पाठयचर्या का विस्तार सामाजिक एवं व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए।

सामाजिक स्थिति और पाठयचर्या (Social Condition and Curriculum)

समाज के आवश्यकतों के अनुरूप ही शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण करना चाहिए तथा पाठयचर्या का उद्देश्य भी एक तरह से व्यक्ति को समुचित समायोजन में सहायता प्रदान करने की होती है। अतः वर्तमान पाठयचर्या में सामाजिक स्थिति की ध्यान में रखते हुए जनसंख्या शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, प्रदूषण की समस्या, सुरक्षा-शिक्षा, परिवहन शिक्षा, काम-शिक्षा, जाति-उन्मूलन, परिवार कल्याण, विवाह एवं तलाक की समस्या, राष्ट्रिय एवं अंतर्राष्ट्रीय एकता की शिक्षा आदि विषयों का समावेश किया जा रहा है।

सामाजिक दबाव वर्ग और पाठयचर्या (Social Pressure Group and Curriculum)

शिक्षा में सामाजिक प्रवृति के कारण पाठयचर्या को विभिन्न स्तरों पर कई तरह के सामाजिक दबावों का सामना करना पड़ता है। एक तरफ जहां कुछ वर्ग परिवर्तन लाने के उद्देश्यों से कार्य करते हैं वहीं अनेक दबाव समूह उन्हें रोकने के उद्देश्य से भी क्रियाशील रहते हैं। वर्तमान समय में विभिन्न प्रकार के विद्यालय, शिक्षा परिषदें, विश्वविद्यालय, परीक्षा कार्यक्रम एवं संसोधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है।

परिवार और पाठयचर्या (Family and Curriculum)

बालक की अनौपचारिक शिक्षा का प्रारम्भ परिवार से ही होता है। वर्तमान समय में परिवारों के परंपरागत कार्यों एवं दायित्वों का स्थानांतरण विद्यालयों को हो गया है तथा इसका महत्वपूर्ण कारक आज के युग की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था भी है।

धार्मिक संगठन और पाठयचर्या (Religious Organisation and Curriculum)

प्राचीन काल से ही शिक्षा के क्षेत्र में परिवार के बाद दूसरा स्थान धार्मिक संगठनो का रहा है। किन्तु वैज्ञानिक एवं औद्योगिक क्रांति के बाद शिक्षा के क्षेत्र में धार्मिक संगठनो की भूमिका कुछ कम हुई है। अब भी पाठयचर्या के सामाजिक आधारों मे धर्म का महत्वपूर्ण स्थान बना हुआ है।

शिक्षक, शिक्षार्थी और पाठयचर्या (Teacher, Student and Curriculum)

पाठयचर्या के उद्देश्यों, उसकी अंतर्वस्तु, अधिगमानुभावों का चयन, मूल्यांकन प्रक्रिया आदि के संबंध में निर्णय लेते समय छात्र जनसंख्या को भी ध्यान देने आवश्यक होता है जिसके लिए पाठयचर्या का आयोजन किया जा रहा है। साथ ही साथ शिक्षकों के आचार-विचार, आस्थाएँ, मान्यताएँ, सामाजिक पृष्ठभूमि एवं शैक्षिक योग्यताएँ आदि पाठयचर्या को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं।

समाज की प्रकृति और पाठयचर्या (Nature of the Society and Curriculum)

कोई भी समाज न तो पूर्ण रूप से परंपरा प्रेमी होता है और न ही पूर्ण रूप से परिवर्तन प्रेमी होता है। इसप्रकार समाज की प्रकृति के अनुरूप पाठयचर्या को अपने आपको समायोजित करते रहना पड़ता है। यह एक सतत प्रक्रिया है।

समाज की बदलती आवश्यकताएँ और पाठयचर्या (Changing needs of the Society and Curriculum)

आधुनिक समाज में परिवर्तन गति बहुत अधिक तीव्र होने के कारण अनेक नवीन प्रवृतियों का उदय हो रहा हो रहा है जिसके कारण पाठयचर्या नियोजकों को कठिनाई का सामना करना पद रहा है। किसी भी आधुनिक समाज में मुख्यतः सामाजिक, राजनैतिक, तकनीकी, आर्थिक एवं परिस्थितीय परिवर्तन से संबन्धित विषयों को पाठयचर्या में समावेशित किया जा रहा है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्रत्येक सामाजिक विचारधारा अपने सामाजिक सिद्धांतों एवं आवश्यकताओं के आधार पर विषयों को पढ़ाये जाने पर बल देती है तथा किसी समाज में पाठयचर्या विषयों का निर्धारण उस समाज , काल, परिस्थिति मे प्रचलित एवं आवश्यक समाजशास्त्रीय विचारधारा के आधार पर होता है। इस प्रकार आप जान गए होंगे कि किस प्रकार समाजशास्त्र विषय पाठयचर्या निर्माण हेतु एक निर्धारक के रूप मे कार्य करता है।

4.3.3 पाठयचर्या विकास के मनोवैज्ञानिक आधार

शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृति ने शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षण पद्धति, पाठयचर्या , शिक्षा के संगठन, अनुशासन की अवधारणा, शिक्षक की भूमिका आदि सभी क्षेत्रों को नया आयाम प्रदान किया है। मनोविज्ञान के विकास ने पाठयचर्या रचना को कई प्रकार से प्रभावित किया है। पाठयचर्या की पृष्ठभूमि में मनोवैज्ञानिक दृष्टि सर्वत्र व्याप्त रहती है फिर भी इसके पाठयचर्या निर्माण के मुख्य निर्धारक निम्नलिखित है-

1. परिपक्वता एवं विकास (Maturity and Development)
2. व्यक्तिगत भिन्नता (Individual Differences)

3. अभिरुचि (Interest)
4. अभिप्रेरणा (Motivation)
5. अधिगम प्रक्रिया एवं अधिगम का स्थानांतरण (learning Process and Transfer of learning)

परिपक्वता, विकास तथा पाठयचर्या (Maturity, Development and Curriculum)

मनुष्य की आयु में वृद्धि के साथ समुचित ढंग से होने वाले शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तनों को मनोविज्ञान में परिपक्वता की संज्ञा दी जाती है। बालक का शारीरिक विकास शिक्षाक्रम को निश्चित रूप से प्रभावित करता है अतः अधिगम स्थितियों का चयन बालक के विकास की दृष्टि से ही किया जाना चाहिए। इसीलिए पेस्टोलोजी ने पाठयचर्या निर्माण में विकास के सिद्धांत को प्रमुखता प्रदान की है।

व्यक्तिगत भिन्नता एवं पाठयचर्या (Individual Differences and Curriculum)

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो किन्हीं भी दो व्यक्तियों के बीच तो अंतर होता ही है, साथ ही व्यक्ति के अंदर विभिन्न प्रकार की क्षमताओं के विभिन्न स्तर भी होते है। वर्तमान समय मे विभिन्न आयु वर्ग के बालकों की आवश्यकताएँ भिन्न-2 होती है तथा इन बालकों के लिए अलग-2 पाठ्यक्रमों का ढंग उपयोग मे लाया जा रहा है किन्तु एक ही आयु वर्ग में व्यक्तिगत भिन्नता के कारण उनके पाठ्यक्रमों में विविधता की भी आवश्यकता हैं।

अभिरुचि एवं पाठयचर्या (Interest and Curriculum)

अभिरुचि का तात्पर्य किसी वस्तु या विषय के प्रति लगाव का होना है। बालकों में जन्मजात अभिरुचियों की संख्या बहुत कम होती है तथा काव्यात्मक, कलात्मक एवं संगीत संबंधी अभिरुचियों को छोड़ कर अधिकतर अभिरुचियाँ बालक वातावरण से अर्जित करते है। इसके लिए पाठयचर्या निर्माताओं को विविध अधिगम-अनुभवों के साथ-2 उचित अभिप्रेरकों, निर्देशन तथा पुनर्बलन की व्यवस्था की ओर भी ध्यान देना चाहिए। इसलिए पाठयचर्या निर्माण में रुचि के सिद्धांत का अपना विशेष महत्व है।

अभिप्रेरणा एवं पाठयचर्या (Motivation and Curriculum)

अभिप्रेरणा से प्राणी की अनुक्रिया की शक्ति में वृद्धि होती है। अभिप्रेरणा द्वारा किसी क्रिया को सीखने के लिए उत्साह उत्पन्न किया जा सकता है अतः एक कुशल शिक्षक विद्यालय मे अभिप्रेरणा का सकारात्मक उपयोग करके बालकों को नवीन तथ्यों के विषय में रुचि उत्पन्न कर सकता है तथा

पाठयचर्या निर्माणकर्ता को इस बात का ध्यान रखना चाहिए की निश्चित तथ्यों के पश्चात अभिप्रेरणा की व्यवस्था की गयी हो।

अधिगम प्रक्रिया एवं पाठयचर्या (learning Process and Curriculum)

पाठयचर्या -नियोजकों के लिए अधिगम-प्रक्रिया के सैद्धांतिक पक्ष की अपेक्षा इसका व्यवहारिक एवं शैक्षिक पक्ष अधिक महत्वपूर्ण है, मनोविज्ञान के विकास के साथ ही साथ अडिगम- मनोविज्ञान भी बहुत विकसित हो चुका है। अधिगम का क्षेत्र –सिद्धांत उद्दीपन एवं अनुक्रिया के बीच होने वाली प्रक्रियाओं की संकल्पना पर आधारित है। अतः पाठयचर्या नियोजकों एवं शिक्षकों कों S –R संबंध स्थापित करते समय उनकी मध्यवर्ती क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं के प्रति भी सजग रहने की आवश्यकता होती है।

अधिगम स्थानांतरण एवं पाठयचर्या (learning Transfer and Curriculum)

अधिगम या प्रशिक्षण के स्थानांतरण से तात्पर्य एक परिस्थिति या क्षेत्र में अर्जित ज्ञान, प्रशिक्षण और आदतों का दूसरी परिस्थिति या क्षेत्र में उपयोग किया जाना है। अधिगम के स्थानांतरण को ध्यान में रखते हुए पाठयचर्या नियोजकों को पाठयचर्या का निर्धारण छात्रों के आवश्यकता के अनुकूल होना चाहिए। पाठयचर्या के माध्यम से भावी जीवन के आवश्यकताओं का भी परिचय कराया जाना चाहिए।

पाठयचर्या नियोजकों के लिए उपयोगी अधिगम संबंधी सामान्य तथ्य

विभिन्न मनोवैज्ञानिक प्रयोगों के आधार पर अधिगम संबंधी जिन तथ्यों की पुष्टि हो चुकी है, उनमें से प्रमुख इसप्रकार है-

- अधिगम जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है तथा ये शिक्षार्थी की परिपक्वता से संबन्धित होती है।
- अधिगम बालक की शारीरिक, मानसिक, एवं संवेगात्मक विकास की दशाओं से प्रभावित होती है।
- अधिगम में शिक्षार्थी की सक्रिय सहभागिता आवश्यक होती है तथा अधिगम तभी प्रभावी होगा जब शिक्षार्थी का लक्ष्य स्पष्ट होगा।
- प्रभावशाली अधिगम के लिए अभिप्रेरणा का होना आवश्यक है तथा अधिगम के लिए मुक्त वातावरण सहायक होता है।
- अधिगम-तत्परता शिक्षार्थी के पूर्व अनुभव, अभिरुचियों एवं अभिवृतियों पर निर्भर करती हैं।

- तत्काल पुनर्बलन अधिगम की गति को बढ़ाता है, जबकि पुनर्बलन का आभाव अधिगम में बाधक होता है।
- प्रस्तुत अधिगम-अनुभवों का क्षेत्र जितना आधिक व्यापक होता है, सामान्यीकरण एवं विभेदीकरण उतना ही अधिक अच्छा होता है।
- एक ही परिस्थिति के प्रति बालकों की प्रतिक्रिया भिन्न-2 हो सकती है, क्योंकि अधिगम व्यक्तिक मूल्यों, लक्ष्यों एवं विचारों पर आधारित होता है।

पाठयचर्या -नियोजकों के लिए अधिगम संबंधी कुछ सुझाव

अधिगम संबंधी समान्य तथ्यों की जानकारी के साथ-साथ पाठयचर्या -नियोजकों को मनोवैज्ञानिक प्रवृति संबंधी कुछ महत्वपूर्ण बातों पर भी ध्यान रखना आवश्यक है, जो इसप्रकार है-

- पाठयचर्या का संबंध बालक प्रकृति एवं जीवन की वास्तविकता से होना चाहिए।
- विद्यालयों में प्रदान किया जाने वाला अनुभव बालकों की स्वाभाविक क्रियाओं एवं अभिरुचियों पर आधारित होना चाहिए।
- अधिगम-प्रक्रिया में "क्रिया द्वारा सीखना" अर्थात करके सीखने को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।
- यथासंभव पाठयचर्या के लिए विषय-सामाग्री का चयन वास्तविक जीवन की परिस्थितियों से ही करना चाहिए।
- पाठयचर्या में बालकों को अभिप्रेरित करने के अधिक-से-अधिक अवसर सुलभ होने चाहिए जिससे वे विभिन्न क्रियाओं, चर्चाओं एवं रचनात्मक कार्यों में सक्रिय भाग ले सकें तथा उन्हें विभिन्न प्रकार के कौशलों एवं ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता का अनुभव भी हो सके।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्रत्येक मनोवैज्ञानिक विचारधारा अपने मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों एवं आवश्यकताओं के आधार पर विषयों को पढ़ाये जाने पर बल देती है तथा मनोविज्ञान ने शिक्षा के हर पक्ष को प्रभावित किया है। मनोविज्ञान के विकास के परिणामस्वरूप अनेक देशों में बालकों की आवश्यकताओं के आधार पर पाठयचर्या निर्माण का प्रयास किया जा रहा है इस प्रकार आप जान गए होंगे कि किस प्रकार मनोविज्ञान विषय पाठयचर्या निर्माण हेतु एक निर्धारक के रूप मे कार्य करता है।

अभ्यास प्रश्न

1. पाठयचर्या विकास के दार्शनिक आधार से क्या तात्पर्य है?
2. पाठयचर्या विकास का दार्शनिक आधार किन-2 दर्शनिकों ने से प्रभावित है?
3. पाठयचर्या विकास के सामाजिक आधार के अंतर्गत पाठयचर्या को परंपरागत ढंग से प्रभावित करने वाले दबाव वर्गो के नाम बताइये?
4. समाज की बदलती आवश्यकताओं के आधार पर वर्तमान पाठयचर्या कैसा होना चाहिए?
5. मनोविज्ञान पाठयचर्या विकास को किस प्रकार प्रभावित करता है?
6. पाठयचर्या विकास मे मनोवैज्ञानिक आधार की कोई दो उपयोगिता बताइये?

4.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने देखा किस प्रकार पाठयचर्या विकास में विभिन्न निर्धारकों की क्या- क्या भूमिका रही है इस विषय में विस्तार से चर्चा हो चुकी है। इस इकाई में सर्वप्रथम पाठयचर्या विकास के दार्शनिक आधार के विषय में चर्चा हुई आपने देखा कि किस प्रकार महान दार्शनिकों ने पाठयचर्या विकास में अपने-अपने मतों को प्रस्तुत किया है तथा समय-2 पर दर्शन के अंतर्गत आने वाले आदर्शवाद, प्रकृतिवाद, प्रयोजनवाद, यथार्थवाद तथा अस्तित्ववाद ने पाठयचर्या विकास में बालकों कि आवश्यकताओं को अलग-2 बताया है साथ ही साथ पाठयचर्या के आधारभूत सिद्धांतों को भी भिन्न-2 बताया है। दार्शनिक आधार पर चर्चा करने के पश्चात अपने पाठयचर्या विकास के सामाजिक आधार के विषय में जाना कि किस प्रकार हमारा समाज, परिवार, धार्मिक संगठन, हमारी बदलती आवश्यकताएँ तथा शिक्षक एवं शिक्षार्थी पाठयचर्या विकास को किस प्रकार प्रभावित करते है। तत्पश्चात पाठयचर्या विकास के मनोवैज्ञानिक आधार कि चर्चा के अंतर्गत अपने देखा कि किसप्रकार मनोविज्ञान तथा मनोविज्ञान के अंतर्गत होने वाले शोध पाठयचर्या विकास को प्रभावित करता है। मनोविज्ञान कहता है पाठयचर्या शिक्षार्थी केन्द्रित होना चाहिए तथा पाठयचर्या शिक्षार्थी कि अभिक्षमता, अभिरुचि, तथा योग्यता को ध्यान में रख कर बनाना चाहिए। मनोविज्ञान यह भी बताता है कि एक शिक्षक के अंदर क्या-2 गुण होने चाहिए तथा शिक्षक के शिक्षण प्रणाली के विषय में भी बताता है।

उपरोक्त सूचनाओं के आधार पर आप समझ गए होंगे कि किस प्रकार दर्शन, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान पाठयचर्या विकास में क्या भूमिका निभाते है तथा इन विषयों का पाठयचर्या निर्माण में क्या महत्ता है।

4.5 शब्दावली

1. **निर्धारक-** ऐसे कारक या तत्व जो पाठयचर्या निर्माण के आधार होते हैं निर्धारक कहलाते हैं।
2. आदर्शवाद-ऐसी दार्शनिक विचारधारा जो वस्तु की अपेक्षा विचार को अधिक महत्व देती हैं।
3. **प्रकृतिवाद-** ऐसी दार्शनिक विचारधारा जो ईश्वर के अस्तित्त्व को स्वीकार नहीं करती तथा प्रकृति एवं प्रकृतिक नियमों को सबकुछ मानती है।
4. **प्रयोजनवाद**- ऐसी दार्शनिक विचारधारा जो व्यक्ति मे विश्वास करती है और यह मानती है आध्यात्मिक नियम देश, काल, परिस्थिति के अनुसार परिवर्तनशील है तथा मूल्य पूर्वनिर्धारित बल की निर्माण की अवस्था में हैं।
5. **यथार्थवाद**- एक ऐसी दार्शनिक विचारधारा जो पूर्णत: वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित है तथा कारण परिमाण के वैज्ञानिक नियम को सर्वव्यापी एवं सर्वमान्य मानती है तथा व्यक्ति और समाज मे विश्वास करती है।
6. **अस्तित्ववाद**- एक ऐसी दार्शनिक विचारधारा जो प्रत्येक व्यक्ति को अदभूत, अनोखा एवं अनुभूति करने में सक्षम मानती है तथा चयन की स्वतन्त्रता पर ज़ोर देती है।

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पाठयचर्या विकास के दार्शनिक आधार से तात्पर्य पाठयचर्या निर्माण मे दार्शनिक दृष्टिकोण का समावेश करने से है क्यूंकि पाठयचर्या का मेरुदंड दर्शन को माना जाता है।
2. पाठयचर्या के दार्शनिक आधार रूसो, अरस्तू, प्लेटो आदि महान दर्शनिकों से प्रभावित है।
3. पाठयचर्या विकास के सामाजिक आधार के अंतर्गत परिवार, परम्पराएँ, धार्मिक संगठन, शिक्षक, शिक्षार्थी, समाज की प्रकृति, विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक संगठन आदि दबाव वर्ग प्रभावित करते है।
4. समाज की बदलती आवश्यकताओं के आधार पर देखा जाय तो वर्तमान पाठयचर्या बहुमुखी, लचीला, सामाजिक भावना उत्पन्न करने वाला, स्वास्थ के प्रति सजग करने वाला, व्यवसायिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाला, राष्ट्रभाषा की शिक्षा पर बल देने वाला होना चाहिए।
5. मनोविज्ञान पाठयचर्या विकास को अपने नए शोधों एवं तकनीकियों द्वारा प्रभावित करता है शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृति ने शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षण पद्धति, पाठयचर्या , शिक्षा के संगठन, अनुशासन की अवधारणा, शिक्षक की भूमिका आदि आयामों को नयी दिशा प्रदान किया है।
6. पाठयचर्या विकास का मनोवैज्ञानिक आधार, मानव विकास के विभिन्न पक्षों की खोज एवं उनके अध्ययन मे लगातार लगे हुए मनोविज्ञान की उपयोगिता को स्पष्ट करता है जिसके

फलस्वरूप अनेक देशों में बालकों की आवश्यकताओं के आधार पर पाठयचर्या निर्माण का प्रयास किया जा रहा है।

4.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

6. यादव, एस. (2010). *पाठयचर्या विकास*, आगरा: श्री विनोद पुस्तक मंदिर.
7. Agrawal, J.C. (1990). *Curriculum reforms in India.* New Delhi.
8. Bhatt, B.D. and Sharma, S.R. (1992). Principles of Curriculum Construction. New Delhi: Kanishka Publishing House.
9. Dewal, O.S. (2004). National Curriculum. *In Encyclopedia of Indian Education.* New Delhi: NCERT.
10. Government of India (1966). *Report of the education commission 1964-66.* New Delhi: Government of India.
11. Government of India (1966). *National Policy on Education - 1986.* New Delhi: Government of India.
12. IGNOU (1997). *Curriculum and instruction (Block 1 & 2).* New Delhi: IGNOU.
13. Mohanty, J. (1981). *Indian education in emerging society.* New Delhi.
14. NCERT (1985). *National curriculum for primary and secondary education.* New Delhi: NCERT.
15. Teba, Hilda (1962). *Curriculum development, theory and practice.* New York: Harcourt.

4.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. शिक्षा के दार्शनिक आधार से क्या समझते हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए तथा पाठयचर्या निर्माण में इसकी क्या भूमिका है ? समझाइए।
2. शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार से क्या समझते हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए तथा पाठयचर्या निर्माण में इसकी क्या भूमिका है ? समझाइए।
3. शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार से क्या समझते हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए तथा पाठयचर्या निर्माण में इसकी क्या भूमिका है ? समझाइए।

4. पाठयचर्या विकास से आप क्या समझते हैं? पाठयचर्या विकास के समस्त निर्धारकों के सापेक्ष प्रभाव की विवेचना कीजिए?

इकाई–5 पाठयचर्या संरचना के दार्शनिक आधार

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 पाठ्यचर्या निर्माण के आधार के रूप में दर्शन
5.3.1 प्रगतिवाद
5.3.2 पदार्थवाद
5.3.3 पुनर्संरचनावाद
5.4 पाठ्यचर्या एवं मूल्यों के बीच सम्बन्ध
5.4.1 मूल्य
5.4.2 मूल्यों के स्रोत
5.4.3 मूल्यों के प्रकार
5.4.4 पाठ्यचर्या एवं मूल्य
5.5 सारांश
5.6 शब्दावली
5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.9 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

शिक्षा हमारे जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। कहा जाता है कि शिक्षा के अभाव में मनुष्य निरा पशु ही है। मनुष्य में मानवीय गुणों का सही अर्थों में विकास शिक्षा के द्वारा ही होता है। शिक्षा को मुख्या रूप से तीन भागों में बाँटा जाता है; औपचारिक, अनौपचारिक तथा निरौपचारिक । अनौपचारिक शिक्षा को तो नियोजित नहीं किया जा सकता परन्तु औपचारिक एवं निरौपचारिक शिक्षा नियोजित की जा सकती है और इन दोनों अभिकरणों के लिए पाठ्यचर्या की महती आवश्यकता है । जहाँ गुणों के निर्माण के लिए शिक्षा आधार के रूप में कार्य करती है वहीँ पाठ्यचर्या शिक्षा के लिए मील के पत्थर के समान कार्य करती है। प्रस्तुत पाठ में हम पाठ्यचर्या निर्माण के दार्शनिक आधार का अध्ययन करेंगे जिसमें प्रगतिवाद, पदार्थवाद, पुनर्संरचनावाद दर्शन

के अनुसार पाठ्यचर्या के स्वरुप का अध्ययन किया जाएगा और अन्त में पाठ्यचर्या और मूल्यों के मध्य के अन्तर्सम्बन्धों पर प्रकाश डाला जाएगा।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप-

1. पाठ्यचर्या निर्माण के विभिन्न आधारों को बता सकेंगे।
2. पाठ्यचर्या निर्माण के दार्शनिक आधार की आवश्यकता को स्पष्ट कर सकेंगे।
3. प्रगतिवाद की संकल्पना की व्याख्या कर पाएंगे।
4. पाठ्यचर्या निर्माण के लिए प्रगतिवादी दर्शन की आवश्यकता को विश्लेषित कर सकेंगे।
5. पदार्थवाद की संकल्पना की व्याख्या कर पाएंगे।
6. पाठ्यचर्या निर्माण के लिए पदार्थवादी दर्शन की आवश्यकता को विश्लेषित कर सकेंगे।
7. पुनर्संरचनावाद की संकल्पना की व्याख्या कर पाएंगे।
8. पाठ्यचर्या निर्माण के लिए पुनर्संरचनावादी दर्शन की आवश्यकता को विश्लेषित कर सकेंगे।
9. मूल्य की संकल्पना समझते हुए उसे परिभाषित कर सकेंगे।
10. पाठ्यचर्या एवं मूल्यों के मध्य सहसंबंध की व्याख्या कर सकेंगे।

5.3 पाठ्यचर्या निर्माण के आधार के रूप में दर्शन

किसी भी पाठ्यचर्या के निर्माण के पीछे विभिन्न उद्देश्य होते हैं जिनकी प्राप्ति हेतु पाठ्यचर्या विकसित की जाती है। यह पाठ्यचर्या सदैव ही अपने समाज की मान्यताओं, धारणाओं, विश्वासों, विचारों और मांग पर आधारित होती है। यहाँ अपने समाज से आशय स्थान विशेष, तात्कालिक स्थिति एवं परिस्थितियों से है। देशकाल एवं आवश्यकताओं के अनुरूप ही पाठयचर्या भी परिवर्तित होता रहता है। यह माना जाता है कि यदि समाज में परिवर्तन लाना है तो शिक्षा में, और उसमें भी मुख्य रूप से पाठयचर्या में परिवर्तन लाया जाए, परिवर्तन स्वतः हो जाएगा। पर इसके साथ ही साथ सामाजिक स्थितियों एवं समाज की मांग में जिस प्रकार का परिवर्तन होगा पाठयचर्या भी उसी प्रकार से परिवर्तित होगा क्योंकि पूर्व में यह स्पष्ट किया गया जा चुका है कि पाठयचर्या सदैव समाज की आवश्यकताओं और सामाजिक उद्देश्यों पर आधारित होता है। इसके साथ ही सामाजिक दशायें, देशकाल एवं स्थान विशेष अपने नागरिकों के दर्शन को भी प्रभावित करते हैं और

वहीं दूसरी तरफ दर्शन से स्थान विशेष का समाज प्रभावित भी होता है। पाठयचर्या के निर्माण के पीछे कई आधार हैं जो पाठयचर्या में सम्मिलित हो विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के संतुलित निर्माण हेतु नींव का कार्य करते हैं। पाठयचर्या निर्माण के विभिन्न मुख्य आधार इस प्रकार हैं;

- पाठयचर्या निर्माण के दार्शनिक आधार
- पाठयचर्या निर्माण के मनोवैज्ञानिक आधार
- पाठयचर्या निर्माण के सामाजिक आधार
- पाठयचर्या निर्माण के सांस्कृतिक आधार

पाठ्यचर्या निर्माण के पीछे दर्शन एक बल के रूप में कार्य करता है जो पाठ्यचर्या में दार्शनिक तथ्यों का समावेश करते हुए शिक्षा के सर्वोत्तम एवं उत्कृष्ट लक्ष्यों की ओर मानव को अग्रसर करता है। **ज़ैस** (1976) के पाठयचर्या के उदारवादी सिद्धांत के अनुसार पाठयचर्या निर्माण में क्या, क्यों, कैसे और कौन; ये चार पायों के रूप में हैं। वास्तव में में दर्शन की शुरुआत भी इन्हीं प्रश्नों से ही माना जाता है। दार्शनिक या कोई भी दर्शन चाहे वह भारतीय दर्शन हो अथया पाश्चात्य दर्शन, इन्हीं क्या, क्यों, कैसे और कौन प्रश्नों के उत्तर से जुड़े हैं। सदियों से दार्शनिक मनुष्य का अस्तित्व, नैतिकता, अच्छाई, सत्य, सुंदरता से सम्बंधित प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए प्रयासरत हैं ताकि वह मानव को मिल रहे कष्टों का निवारण कर सके। कुछ दर्शनों में यह निवारण सांसारिक कष्टों से मुक्ति प्राप्त कर मोक्ष प्राप्ति की आकांक्षा से है वहीं कुछ दर्शनों में संसार में जीवन यापन करते मुए मनुष्य शरीर को मिलने वाले कष्टों को दूर करने से है। सभी दर्शन मानव अस्तित्व से सम्बंधित जिन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए प्रयासरत हैं, वे हैं;

- मैं कौन हूँ
- मैं क्या हूँ
- मैं कहाँ से आया हूँ
- मृत्यु के उपरांत मैं कहाँ जाऊंगा
- मृत्यु क्या है?
- जीवन क्या है?
- आत्मा का अस्तित्व क्या है?
- सत्य क्या है?
- किसी भी चीज को सत्य या असत्य कहने का आधार क्या है?

- जीवन का अर्थ क्या है
- हम किस प्रकार जान सकते हैं कि हम क्या जानते हैं?
- मनुष्य के रूप में जन्म लेने के पीछे विशेष क्या है?
- सही या गलत; अच्छा या बुरा के पीछे कौन से आधार हैं?
- नैतिक क्या है?
- सुन्दरता क्या है?

मनुष्य को विवेक का प्राणी माना जाता है। ये सभी प्रश्न मनुष्य के ही मस्तिष्क में उत्पन्न होते हैं और दर्शन की उत्पत्ति भी मनुष्य के द्वारा इन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के प्रयास से ही मानी गयी है की स्वयं एवं इस विश्व कि उत्पत्ति एवं अस्तित्व को लेकर मनुष्य प्रारंभ से ही जिज्ञासु रहा है और कभी प्रयोगों एवं खोजों के माध्यम से तो कभी चिंतन-मनन के द्वारा प्रश्नों का उत्तर ढूंढने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा है। अतएव दर्शन की उत्पत्ति का आधार भी मानव का विवेक अथवा ज्ञान माना जाता है। यदि शब्दों के अर्थ के रूप में देखा जाए तो Philosophy शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द "philos" (प्रेम) and "sophia" (ज्ञान) से हुयी है जिसका अर्थ ज्ञान से प्रेम या ज्ञान के प्रति प्रेम है. वहीँ यदि दर्शन शब्द की उत्पत्ति की व्याख्या की जाए तो दर्शन शब्द दृ धातु से बना है जिसका अर्थ है देखना। यहाँ देखने का अर्थ सामान्य रूप से देखना नहीं बल्कि विवेक से किसी चीज को देखना। वस्तु से जुड़े उस सत्य को भी देखने की शक्ति जो आँखों से नहीं बल्कि विवेक से ही देखी और समझी जा सकती है। इस प्रकार भारतीय या पाश्चात्य कोई भी दर्शन हो, का आधार ज्ञान या विवेक ही है।

दर्शन हमारे व्यक्तिगत विश्वासों और मूल्यों पर निर्भर करता है. जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि दर्शन हमारा अपना दृष्टिकोण है की हम अपने आस-पास की दुनिया को किस रूप में और किस प्रकार से देखते हैं और इसके साथ ही हमारे आस-पास की इन चीजों में हम किसे अपने अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण समझते हैं. दार्शनिक तथ्यों ने सदैव समाज और विद्यालयों को प्रभावित किया है अतः पाठ्यचर्या निर्माण के अंतर्गत दार्शनिक आधार का अध्ययन अतिमहत्वपूर्ण हो जाता है. एच.टी. जॉनसन ने अपनी पुस्तक 'फाउंडेशन ऑफ़ एजुकेशन' में दर्शन को जीवन की आधारभूत समस्याओं का उत्तर प्राप्त करने तथा मनुष्य के जीवन को सार्थकता प्रदान करने के लिए किए जा रहे अध्ययन के रूप में परिभाषित किया है. शिक्षा प्राप्त करने का भी मुख्य उद्देश्य जीवन की आधारभूत समस्याओं का निवारण एवं मनुष्य जीवन को सार्थकता प्रदान करना है. पाठ्यचर्या निर्माण से पहले निर्माणकर्ताओं को मानव जीवन से सम्बंधित उद्देश्यों की स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए अन्यथा पाठ्यचर्या के उद्देश्य भी अस्पष्ट होंगे

इसके साथ ही उन्हें समाज के विश्वासों, मान्यताओं और मूल्यों का भी स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए. प्रस्तुत इकाई में जिन मुख्य दार्शनिक आधारों का अध्ययन किया जाएगा वे इस प्रकार से हैं;

I. प्रगतिवाद
II. पदार्थवाद
III. पुनर्संरचनावाद

5.3.1 प्रगतिवाद

प्रगतिवाद शिक्षा बालकेंद्रित लक्ष्यों और पाठ्यचर्या से सम्बंधित मत है जो शिक्षा की सत्ता को उसके चले आ रहे रूप में मानने से इनकार करती है और इसके साथ इस पर बल देता है कि किसी भी शिक्षा व्यवस्था का केन्द्र बालक होना चाहिए। शिक्षा बालक को इस प्रयोजन के साथ दी जाती है कि बालक का वर्तमान एवं भावी जीवन सुखमय बन सके। तो यदि शिक्षा बालक के अनुरूप नहीं होगी तो बालक शिक्षा में किस प्रकार रूचि ले पाएंगे और रूचि के अभाव में किसी भी व्यक्ति को शिक्षित करना एवं शिक्षा से जुड़े लक्ष्यों को प्राप्त करना असंभव है। प्रगतिवाद वह दार्शनिक मत या विश्वास है जिसका मानना है कि शिक्षा को वास्तविक जीवन पर आधारित होना चाहिए। विद्यालय बालक को उनके भावी जीवन के लिए तैयार करने के कारखाने हैं। बालक भावी जीवन में आ सकने वाली समस्याओं के निवारण की रणनीतियों को विद्यालय में सीखते हैं। मनुष्य अपनी मूल प्रकृति से सामाजिक होता है और बालक विद्यालय में समाज के लिए ही तैयार होता है कि किस प्रकार उसे समाज में रहते हुए जीवन का निर्वाह करना है, एक सक्रिय सदस्य के रूप में समाज के विकास में योगदान करना है। समाज में सहज एवं सरल रूप से रहने के लिए शिक्षा को भी इस प्रकार का होना चाहिए कि वह समाज से जुडी हुयी हो। साथ ही साथ बालकों को ऐसी शिक्षा मिले जो उनके भविष्य में आ सकने वाली समस्याओं के निवारण के लिए बालक को सामर्थ्यवान बना सके। इन परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं को ध्यानगत रखते हुए प्रगतिवादियों का मानना है कि बालक को वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में शिक्षा देना चाहिए क्योंकि मनुष्य वास्तविक परिस्थितियों में सबसे अच्छी तरह से सीखता है। वहीं बालक-केन्द्रित प्रगतिवादियों का मानना है कि बालक स्वभाव से जिज्ञासु होता है (रूसो की मान्यता भी इस सम्बन्ध में ऐसी ही थी) अतः बच्चों को सीखने के लिए छोड़ देना चाहिए जिससे वे स्वयं की युक्तियों से सीख सकें। इसके सम्बन्ध में रोजेर्स का विचार है कि शिक्षक को विद्यार्थियों को सिखाने हेतु एक सहज निर्देशक के रूप में होना चाहिए। इस प्रकार प्रगतिशील पाठ्यचर्या के अंतर्गत शिक्षण किसी प्राधिकरण के अधीन नहीं होता है और पाठ्यचर्या का निर्धारण प्रत्येक बालक की प्रकृति के आधार पर उसकी आवश्यकताओं के अनुरूप होता है।

प्रगतिवादी विचारकों में रूसो (1712-1788) और जॉन डीवी (1859-1952) का नाम उल्लेखनीय है । दोनों ही बाल-केन्द्रित शिक्षा के पक्षधर रहे हैं और उनके विचारों में प्रगतिवादी शिक्षा का समावेश मिलता है । वैसे तो रूसो प्रकृतिवादी और डीवी प्रयोजनवादी शैक्षिक विचारधारा के आधार स्तम्भ माने जाते हैं पर दोनों ही शिक्षा की धुरी में बालक को रखते हैं अतः दोनों ही अलग-अलग दार्शनिक विचारधारा के होने के बावजूद भी प्रगतिवादी विचारधारा के समर्थक माने जाते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य समर्थकों में पेस्टोलोज़ी, फ्रोबेल एवं मेरिया मोंटेसरी इत्यादि का नाम आता है। शिक्षा की क्षेत्र में हुए प्रगतिशील आन्दोलन के फलस्वरूप अमेरिकी विद्यालयों में पाठ्यचर्या के परिवर्तन की मांग हुयी । इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप पाठ्यचर्या को और अधिक व्यापक बनाया गया जिससे शिक्षा छात्रों के लिए उनके रूचि के अनुकूल एवं और भी प्रासंगिक बन सके। यद्यपि डीवी को प्रयोजनवाद के मुख्य दार्शनिक के रूप में जाना जाता है परन्तु प्रगतिवाद के क्षेत्र में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने शिक्षा के मनोविज्ञान, ज्ञानमीमांसा, मूल्य एवं लोकतंत्र जैसे विषयों पर व्यापक रूप से लिखा पर इसके साथ ही उनके द्वारा दिए गए शिक्षा के दर्शन ने प्रगतिवादी दर्शन की नींव रखी। वैसे देखा जाए तो प्रगतिवाद प्रयोजनवाद दोनों के ही शैक्षिक लक्ष्य समान हैं जहाँ बालक को समाज के लिए तैयार करने की बात की जाती है और इसके लिए उसे समाज की वास्तविक परिस्थितियों में शिक्षा देने की बात की जाती है।

प्रगतिवाद की वास्तविक शुरुआत 1886 में मानी जाती है जब जॉन डीवी यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो में प्रोफेसर के रूप में कार्यरत थे। अपने शैक्षिक विचारों के परीक्षण के लिए डीवी ने एक प्रयोगशाला स्कूल की स्थापना की । उनके लेखन एवं प्रयोगशाला विद्यालय में किए कार्य ने प्रगतिशील शिक्षा आन्दोलन के लिए मंच तैयार किया।

डीवी का मत है कि शिक्षा का लक्ष्य समाज के युवाओं को वयस्क जीवन के लिए तैयार करना है. डीवी लोकतंत्र का घोर समर्थक था. उसका मानना था कि लोकतंत्र की संकल्पना तभी फल-फूल और विकसित हो पायेगी जब शिक्षा शिक्षार्थियों को उनकी रूचि और क्षमताओं को महसूस कराने में सक्षम होगी. परिवर्तन का आधार शिक्षा है और जब शिक्षा का आधार लोकतान्त्रिक होगा तब समाज भी लोकतान्त्रिक हो जाएगा. इसके साथ ही प्रगतिवाद का मानना है कि विद्यार्थियों को समूह में सीखने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि कुछ योग्यताएं एवं कौशल समूह में रह कर ही सीखे जा सकते हैं जैसे-सहकारिता की भावना, हम की भावना, सामुदायिकता और ऐसी समस्याओं का समाधान जो व्यक्तिगत रूप से नहीं किया जा सकता है. सामूहिक रूप से सामाजिक एवं बौद्धिक रूप से हुयी अंतःक्रिया समाज में व्याप्त वर्गगत और जातिगत भेदभाव रूपी के कृत्रिम अवरोधों को समाप्त कर सकती है (डीवी, 1920) । भारत जैसे देश में जहाँ जातिगत भेदभाव, वर्गगत अंतर एवं धर्मगत विद्वेष सदा से ही समाज में रहे हैं एवं समाज के लोगों के मध्य अंतर को ख़त्म करने के लिए सरकार के द्वारा अनेक प्रभावी कदम समय-समय पर उठाये जाते रहे हों वैसे देश में प्रगतिवादी शिक्षा

व्यवस्था परमावश्यक है. डीवी ने शिक्षा को वृद्धि और प्रयोगात्मकता की ऐसी प्रक्रिया के रूप में व्याख्या की है जो विचारों और मस्तिष्क के अन्दर उत्पन्न होने वाले कार्य-कारण सम्बन्ध को समस्या–समाधान हेतु प्रयोग में लाती है । समस्या के समाधान के लिए विद्यार्थियों को इन पांच महत्वपूर्ण कदमों से परिचित होना चाहिए तथा इनका अनुपालन भी करना चाहिए।

- समस्या से अवगत होना
- समस्या को परिभाषित करना
- समस्या को हल करने के लिए परिकल्पनाओं का निर्माण करना
- परिकल्पनाओं का परीक्षण करना
- समस्या के सर्वोत्तम समाधान का मूल्यांकन

ज्ञान प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों को लगातार स्वयं प्रयोग करते रहना चाहिए। साथ ही शिक्षकों को भी मात्र अभ्यासों पर ही ध्यान नहीं देना चाहिए बल्कि उन क्रियाकलापों पर ध्यान देना चाहिए जो उनकी वास्तविक जीवन की स्थितियों से सम्बंधित हों। उनका मानना था कि शिक्षा क्रिया करके स्वयं सीखने से सम्बंधित होनी चाहिए।

प्रगतिवादी शिक्षा में खोजपूर्ण सीखना को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया है। वे बच्चों को स्वयं ही खोज कर कुछ नया सिखाने पर बल देते हैं जो बच्चों को उनकी रूचि और जिज्ञासा के अनुसार 'खोजपूर्ण सीखने' की ओर ले जाती है। यह देखने के लिए की पाठ को पूर्ण और उचित रूप में स्वयं में समाहित कर लिया गया है अथवा नहीं यह जिम्मेदारी शिक्षक को दी जाती है कि इसका आकलन वह करे । प्रगतिवादी शिक्षा की शैक्षिक विचारधारा को जैसा रूसो इत्यादि शिक्षा से सम्बंधित अनुशंसा की है, को पूर्ण रूप से मनोविज्ञान पर आधारित माना जा सकता है।

हमारे भूत और भविष्य का ज्ञान वर्तमान के अनुभवों पर आधारित होता है जो स्वयं में वातावरण के साथ हुयी सभी अंतःक्रियाओं को समेटे हुए होता है। वर्तमान के अनुभवों के आधार पर ही भविष्य का निर्माण होता है। यह संरचित होता है जिसके द्वारा हम भविष्य की बाधाओं का अनुमान लगा सकते हैं एवं उससे बाहर आने का रास्ता ढूंढ सकते हैं। जैसे- इतिहास के अध्ययन के द्वारा हम उससे सम्बंधित अपनी समस्याओं को हल करने में सक्षम हो पाते हैं। वर्तमान में उपजी शैक्षिक समस्याओं का निवारण कर हम बेहतर कल बनाने की कल्पना करते हैं। इस विचारधारा ने डीवी के शैक्षिक सिद्धांतों पर अपना प्रभाव डाला। यद्यपि डीवी अमेरिका में प्रगतिवाद का संस्थापक नहीं था पर उसकी विचारधारा को प्रगतिवाद के निकट पाया जाता है जो कि यह मानती है कि समाज की समस्याओं के समाधान के लिए तथा समाज को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आगे ले जाने के लिए शिक्षा एक माध्यम के रूप में प्रयोग में लायी जा सकती है और शिक्षा के अतिरिक्त अन्य कोई माध्यम नहीं

है जो इन समस्याओं के हल के लिए कुंजी के रूप में कार्य कर सके। डीवी कुछ हद तक तो इस विचार को मानते हैं पर उसी समय शिक्षा को मात्र एक उपकरण के रूप में देखने को अस्वीकार करते हैं। उनका मानना है कि शिक्षा मात्र इन समस्याओं का हल ढूंढने वाली या वैज्ञानिकता के विकास का उपकरण नहीं है बल्कि मनुष्य में मनुष्यता का विकास के लिए एक अहम् माध्यम है जिसके अभाव में मनुष्य निरा पशु ही है।

प्रगतिवादी पाठ्यचर्या का स्वरुप

1. प्रगतिवादी प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान के अध्ययन पर बल देते हैं। उनका मानना है की विद्यार्थियों के लिए सबसे अधिक आवश्यक उनके आस-पास के वातावरण को जानना एवं सीखना है, वह चाहे प्राकृतिक वातावरण हो या सामाजिक. चूँकि बालक को अपना जीवन निर्वाह उसी समाज और प्रकृति में करना है अतः बालक के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञान को सीखना ही है। इसके लिए वे पाठ्यचर्या में इन विषयों के समावेश पर विशेष बल देते हैं।
2. प्रगतिवादी पाठ्यचर्या के अंतर्गत शिक्षक से यह अपेक्षा रखी जाती है कि अपने छात्रों को नए वैज्ञानिक खोजों, तकनीकों और सामाजिक परिवर्तनों का ज्ञान देते रहें। इसके लिए शिक्षकों को भी नवीन चीजों से परिचित होना चाहिए जिससे वे इस सम्बन्ध में छात्रों को जानकारी दे सकें।
3. विद्यार्थियों के व्यक्तिगत अनुभवों को बढ़ाने के लिए उन्हें इस प्रकार से सिखाने की व्यवस्था करनी चाहिए कि नया दिया जाने वाला ज्ञान वर्तमान सामुदायिक जीवन से सम्बंधित हो। क्योंकि व्यक्ति उन्हीं परिस्थितियों में अच्छी तरह और जल्दी सीखता है जो उसके वास्तविक जीवन से सम्बंधित हो। अतएव पाठ्यचर्या ऐसी होनी चाहिए जो बालक के वास्तविक जीवन से सम्बंधित हो और उनकी रूचि, योग्यताओं एवं अनुभवों पर आधारित हो।
4. शिक्षकों को शिक्षण हेतु पाठ का आयोजन इस प्रकार करना चाहिए जिससे विद्यार्थियों में जिज्ञासा जागृत हो सके और इसके साथ ही वह विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन और ज्ञान का निर्माण कर सके। इसके लिए पाठ्यपुस्तकों में दिए ज्ञान को पढ़ने के साथ ही छात्रों को उसे कर के भी सीखना चाहिए। उदाहरणस्वरुप: फील्डस्ट्रिप विधि, जहाँ किसी जानकारी को छात्र पहले पुस्तक के माध्यम से प्राप्त करते हैं तत्पश्चात उसे प्राकृतिक वातावरण में समूह में सीखते हैं।
5. प्रगतिवादी शिक्षा विचारधारा के अनुसार पाठ्यचर्या एवं शिक्षण विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो विद्यार्थियों के मध्य परस्पर अंतःक्रिया को प्रोत्साहित .करे इसके लिए विचार विमर्श विधि को शिक्षण विधि के रूप में कक्षा में प्रयुक्त करने की सलाह दी जाती है। इसके साथ ही पाठ्यचर्या को सामाजिक मूल्यों जैसे सहयोग, सामंजस्य और सहनशीलता से सम्बंधित विभिन्न दृष्टिकोणों को विकसित करने का प्रयास करना चाहिए.

6. प्रगतिवाद एक से अधिक विषयों को पढाये जाने पर बल देता है। प्रगतिवादियों का मानना है कि पाठ्यचर्या में मात्र एक ही विषय को न पढाया जाए। बालक को अपना जीवन जीने के लिए कई विषयों के अध्ययन की आवश्यकता होती है। मात्र एक विषय में पारंगत होकर बालक भविष्य में आने वाली सभी कठिनाइयों का सामना नहीं कर सकता जैसे- भाषा में ही कोई विद्यार्थी पारंगत हो तथा सामान्य गणितीय क्रियाओं से बिलकुल अनिभिज्ञ हो तो वह दैनिक जीवन में आने वाली गणितीय समस्याओं का निवारण भाषा के ज्ञान के माध्यम से नहीं कर सकता। इसके लिए गणित का ज्ञान आवश्यक है अतः शिक्षकों को मात्र एक ही विषय पर ध्यान केन्द्रित कर के नहीं रखना चाहिए बल्कि अन्य विषयों का भी अध्यापन करना चाहिए। इसके लिए सबसे उपयुक्त है की विषय को अन्य विषयों से सम्बंधित कर ज्ञान दिया जाए जिससे ज्ञान स्थायी हो और एक विषय में अर्जित ज्ञान को दूसरे विषय में और तद्पश्चात वास्तविक परिस्थितियों में प्रयोग में लाया जा सके।
7. विद्यार्थियों के समक्ष एक अधिक लोकतान्त्रिक पाठ्यचर्या को प्रस्तुत करना चाहिए जो लैंगिक, वर्गगत, धार्मिक, प्रजातीय, जातीय, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि आदि से सम्बंधित विभिन्नताओं को पीछे छोड़ते हुए सभी नागरिकों की उपलब्धियों की सराहना कर सकें तथा समाज के प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यताओं के अनुसार विकास का अवसर प्रदान कर सके।
8. औद्योगिक कला और गृह अर्थशास्त्र में अनुदेशन के द्वारा प्रगतिवादी विद्यालयी शिक्षा को रुचिपूर्ण और उपयोगी बनाने का प्रयास करते हैं। वे ऐसी शिक्षा पर बल देते हैं जहाँ शिक्षा सतत एवं रुचिपूर्ण तरीके से दी जाती हो। प्रगतिवादी शिक्षा व्यवस्था के अनुसार व्यवहारिक रूप से घर कार्यस्थल एवं विद्यालय साथ मिलकर एक सतत और आनंदप्रद शिक्षा जो की जीवन से सम्बंधित हो, देनी चाहिए।
9. कक्षा को जीवन्त होना चाहिए और इसके साथ ही पढाई जाने वाली चीजें रोचक होनी चाहिए। हमारी कक्षाएं नीरस और उबाऊ होती हैं जहाँ छात्रों को मात्र एक मशीने सैम अझते हुए पूरा दिन और पूरा सत्र मात्र कुछ सूचनाओं को भरने का प्रयास किया जाता है। ऐसे नीरस और उबाऊ ज्ञान को विद्यार्थी जल्दी भूलना चाहते हैं और भूल भी जाते हैं अतः शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए कि अतीत में सीखी हुयी चीजों को छात्र भविष्य में आसानी से पुनः स्मरित कर सकें ।
10. छात्रों को कक्षा में समस्याओं को समाधान वास्तविक परिस्थितियों से जोड़ कर सिखाना चाहिए. छात्र कक्षा में समस्याओं का समाधान करना इस प्रकार से करना सीख सकें कि कक्षा से बाहर जब वास्तविक परिस्थितियों में समस्याएं आएं तो वे उन समस्याओं का समाधान सहजता से कर सकें.

इस प्रकार प्रगतिवादी पाठ्यचर्या में प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान सम्बन्धी विषयों जैसे- भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र, गृहविज्ञान, के समावेश पर विशेष

बल दिया जाता है। शिक्षण विधियों में उन विधियों को स्वीकार किया जाता है जो समूह में तथा स्वयं करके सीखने को प्रोत्साहित करती हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. पाठ्यचर्या निर्माण के विभिन्न आधार कौन-कौन से हैं?
2. प्रगतिवादी पाठ्यचर्या में किन विषयों के समावेश पर बल देते हैं?
3. प्रगतिवाद के मुख्य दार्शनिक कौन-कौन हैं?
4. प्रगतिवाद की शुरुआत ..... ई. से माना जाता है।
5. ..... प्रगतिवाद के सर्वप्रमुख दार्शनिक माने जाते हैं।
6. प्रगतिवाद मुख्य रूप से ..... तरीके से सीखने पर बल देता है।
7. प्रगतिवाद के अनुसार पाठ्यचर्या का स्वरुप ..... होना चाहिए।

5.3.2. पदार्थवाद

पदार्थवाद या Essentialism की उत्पत्ति Essential शब्द से हुयी है जिसका अर्थ बुनियादी चीज़ें या मुख्य चीज़ें हैं। पदार्थवाद एक परम्परावादी तथा रुढ़िवादी दर्शन है। इस दर्शन के मूल में आदर्शवाद एवं यथार्थवाद दोनों की अवधारणाएँ सन्निहित हैं। पदार्थवाद विश्व में शक्ति के स्रोत और प्रभुत्व से सम्बंधित एक प्राचीन सिद्धांत है जिसका मानना है कि प्रकृति का जटिल नियम प्रकृति में पाए जाने वाली प्रत्येक वस्तु में स्वयं ही आतंरिक रूप से है। इन नियमों को बाह्य रूप से इन वस्तुओं पर आरोपित करने की आवश्यकता नहीं है। अतः पदार्थवादी चीजों को उसी रूप में स्वीकार करते हैं जिस रूप में वे हैं। वे चीजों को इस रूप में स्वीकार नहीं करना चाहते कि वे ईश्वर द्वारा बनायीं हुयी हैं अथवा प्रकृति प्रदत्त हैं। पदार्थवाद की नवीन विचारधारा भी कुछ हद तक प्राचीन विचारधारा से मिलती है। प्राचीन विचारधारा के ही समान पदार्थवाद की नयी विचारधारा भी पदार्थ को उसके वास्तविक रूप में स्वीकार करने पर बल देते हैं। वे पदार्थ के उसके अस्तित्व और स्वरुप के पीछे प्रकृति के नियम को मानते हैं। वे इस प्रकार के प्रत्येक नियम को अस्वीकार करते हैं जो नियम बाह्य रूप से उसके स्वरुप का निर्धारण करे। वे नियम स्वीकार्य नहीं हैं जो यह आरोपित करें कि वास्तु को कैसा होना चाहिए। प्रकृति ने स्वयं ही प्रत्येक वस्तु का रूप तय करके रखा है। प्रत्येक वस्तु में प्रकृति एवं उसकी शक्ति निहित हैं। प्राचीन विचारधारा जो यहीं तक रुक जाती है वहीँ नवीन विचारधारा प्राचीन विचारधारा के उलट विश्व की आधुनिक वैज्ञानिक समझ की तत्वमीमांसा भी है। पदार्थवाद का 'प्रकृति के नियम' से सम्बंधित सिद्धांत 'Divine Command' सिद्धांत से पूर्णरूपेण अलग है। 'Divine Command' सिद्धांत के अनुसार प्रकृति का नियम वस्तुओं को ईश्वर द्वारा प्रदत्त है। प्राकृतिक विश्व की प्रत्येक चीज ईश्वर के द्वारा आदेशित है। डेकार्ते एवं न्यूटन ने प्रकृति के नियम को इसी रूप में स्वीकार किया है। इसके अनुसार वस्तुएं प्रकृति के

नियमानुसार क्रिया करने को बाध्य हैं क्योंकि इन वस्तुओं की अपनी कोई शक्ति नहीं है। केवल आध्यात्मिक चीजें जैसे- ईश्वर, देवदूत या मनुष्य मानव मस्तिष्क इस प्रकार होते हैं कि वे इच्छित रूप में कार्य कर सकें। वे शक्ति के वास्तविक स्रोत के रूप में हैं।

अठारहवीं शताब्दी में 'Divine Command' का नया रूप विकसित हुआ जिसमें प्राकृतिक दार्शनिकों ने ईश्वर को सभी कार्यों एवं शक्तियों का स्रोत मानाने के स्थान पर प्राकृतिक क्रियाओं के लिए प्रकृति के बल को उत्तरदायी माना।

यदि पदार्थवाद की शैक्षिक दर्शन के रूप में व्याख्या की जाए तो पदार्थवाद एक ऐसा वाद है जो विद्यार्थियों में शैक्षणिक ज्ञान एवं चारित्रिक विकास को बुनियादी या अनिवार्य रूप से बीजारोपित करने पर बल देता है। शैक्षिक दर्शन के रूप में पदार्थवाद 1930 के दशक में प्रचलित हुआ. इस दशक में पदार्थवाद को प्रचलित करने का मुख्य श्रेय विलियम बेगले को है. 40 के दशक में यह दर्शन अंधकार में रहा। तद्पश्चात 1950 के दशक में आर्थर बेस्टर और एडमिरल रिकओवर ने इसे पुनः प्रकाश में ले आए। पदार्थवाद के मुख्य दार्शनिकों में डेकार्ते, न्यूटन, ह्यूम, लॉक, कांट इत्यादि आते हैं। जब अमेरिकी विद्यालयों में पदार्थवाद को शैक्षिक दर्शन के रूप में प्रस्तुत किया गया तो इसे एक कठोर दर्शन कहते हुए आलोचना की गयी। साथ ही यह भी कहा गया की इस दर्शन को विद्यालयों में लागू करना अत्यन्त कठिन है। 1957 में जब सोवियत यूनियन के द्वारा स्पूतनिक का प्रक्षेपण हुआ तब यह घटना अमेरिका के शैक्षणिक हलकों में दहशत का कारण बन गयी। क्योंकि अमेरिकियों द्वारा यह महसूस किया गया कि तकनीकी प्रगति में अमेरिका सोवियत यूनियन से बहुत पीछे छूट गया है। इसने अमेरिकी शिक्षाविदों को यह सोचने पर विवश किया की किस प्रकार से इस तकनीकी पिछड़ेपन को पाटा जा सकता है। शिक्षाविदों ने शिक्षा पर पुनर्विचार किया और यहीं से वास्तविक रूप में पदार्थवाद का जन्म हुआ।

चूँकि पदार्थवाद का जन्म का आधार ही वैज्ञानिकता है। अतः पदार्थवाद विज्ञान और वैज्ञानिकता को पाठ्यचर्या में शामिल करने पर विशेष बल देता है। पदार्थवाद ने विज्ञान के महत्व को विश्व के समक्ष रखने का प्रयास किया तथा कहा कि दुनिया को वैज्ञानिक प्रयोगों के माध्यम से समझने का प्रयास करना चाहिए। विश्व के विषय में आवश्यक और महत्वपूर्ण ज्ञान प्राकृतिक विज्ञान जैसे विषयों के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है अतः वे पाठ्यचर्या में दर्शन शास्त्र, धर्म, कला जैसे गैर-वैज्ञानिक विषयों के स्थान पर प्राकृतिक विज्ञान जैसे विषयों को रखने पर अधिक जोर दिया। प्रगतिवादियों का मानना है कि आज के युग में प्रगति के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण और वैज्ञानिक विषयों की अधिक आवश्यकता है।

पदार्थवाद एक रुढ़िवादी दर्शन है जिसका मानना है कि विद्यालयों को समाज के पुनर्निर्माण का प्रयास नहीं करना चाहिए बल्कि इसके स्थान पर उन पारंपरिक नैतिक मूल्यों एवं विवेक को बढ़ावा देने का प्रयास करना चाहिए जो विद्यार्थियों को आधुनिक नागरिक बनाने में मदद करते हों।

पदार्थवादियों का विचार है कि शिक्षक को पारंपरिक सद्गुणों से युक्त होना चाहिए। शिक्षकों में जिन पारंपरिक गुणों के होने की अनुशंसा की कई है; वे हैं- सत्ता के प्रति सम्मान का भाव, कर्तव्यों के प्रति निष्ठा, अन्य व्यक्तियों की वैयक्तिकता का सम्मान, तथा व्यावहारिकता।

पदार्थवादी पाठ्यचर्या का स्वरुप

पदार्थवादी दर्शन के अनुसार पाठ्यचर्या में निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए;

1. पदार्थवाद पाठ्यचर्या में वैज्ञानिक विषयों का समावेश करने पर बल देता है। इस प्रकार पदार्थवादी पाठ्यचर्या के मुख्य विषयों में गणित, प्राकृतिक विज्ञान, इतिहास, विदेशी भाषायें, और साहित्य को स्थान दिया गया है। गणित और विज्ञान तकनीकी और वैज्ञानिक प्रगति के लिए आवश्यक हैं वहीँ इतिहास का अध्ययन अपने देश के इतिहास के साथ अन्य देशों का इतिहास वहां के परंपरागत मूल्यों के साथ-साथ इसका भी ज्ञान देते हैं कि देश ने किस प्रकार और कहाँ तक प्रगति की है। विदेशी भाषाओँ का अध्ययन देश विशेष के साहित्य के साथ-साथ वहां की पुस्तकों में निहित ज्ञान को प्राप्त करने में मदद करता है।
2. पदार्थवादी व्यायसायिक, जीवन-समायोजन से सम्बंधित तथा इस प्रकार के अन्य विषयों को पाठ्यचर्या में सम्मिलित करने को अस्वीकार करते हैं। वे मुख्य रूप से विज्ञान जैसे विषयों पर बल देते हैं तथा पाठ्यचर्या में उन्हीं का समावेश करने की बात करते हैं।
3. प्राथमिक स्तर पर छात्रों को लिखने, पढ़ने और गणित (3 R's) में निपुणता प्राप्त करने सम्बन्धी शिक्षा दी जाती है क्योंकि आगामी शिक्षा हेतु वे आधार का कार्य करते हैं। पदार्थवादियों को मानना है कि जब तक विद्यार्थी कोई भी विषय जिसकी शिक्षा वे ग्रहण कर रहे हों उसमे पूर्ण ज्ञान एवं निपुणता प्राप्त करके ही वे अगली कक्षा में जाएँ।
4. जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि पदार्थवाद को विद्यालयों में लागू करने के पीछे यह कह कर आलोचना की गयी थी की पदार्थवादी पाठ्यचर्या शैक्षणिक रूप से अत्यन्त कठोर है। वास्तव में मंद गति से सीखनेवालों के साथ ही साथ तीव्र गति से भी सीखनेवालों के लिए भी समान रूप से ही कठोर है। पदार्थवाद छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नताओं जैसे- योग्यताओं और रूचि को नज़रअंदाज करते हुए सभी को एक समान विषय को पढ़ाने की वकालत करता है। इस प्रकार यह तेज़ और कमजोर दोनों प्रकार के छात्रों के लिए समस्या का विषय बन जाता है।
5. सभी के लिए समान पाठ्यचर्या की बात करते हुए भी सीखने की मात्रा में अंतर की बात करता है कि छात्रों को कितना सीखना है यह उनकी योग्यता के अनुसार तय किया जा सकता है।
6. पदार्थवादी छात्रों के लिए चुनौतीपूर्ण पाठ्यचर्या की माँग करते हैं जिससे छात्र वास्तविक जीवन में मिल सकने वाली समस्याओं का समाधान करने में सामर्थ्यवान हो सकें। इस हेतु वे लम्बे विद्यालयी दिन, लम्बे शैक्षणिक साल एवं ऐसी पाठ्यपुस्तकों की वकालत करते हैं जो छात्रों के लिए चुनौतीपूर्ण हों।

7. पदार्थवादी पाठ्यचर्या में शिक्षक को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उनके अनुसार ऐसी कक्षाओं का आयोजन करना चाहिए जिसमें मुख्य भूमिका शिक्षक की हो। कक्षायें शिक्षक के इर्द-गिर्द होनी चाहिए। पदार्थवादी शिक्षक को छात्रों के लिए एक role model के रूप में मानते हैं। जो छात्रों को मात्र बौद्धिक और नैतिक ज्ञान ही न दे बल्कि ज्ञान देने के साथ-साथ उनका बौद्धिक और नैतिक रूप से पथ-प्रदर्शन भी कर सके। उन्हें मात्र ज्ञान का प्राणी बनने में ही मदद न करे बल्कि चारित्रिक रूप से सामर्थ्यवान भी बनाए।
8. चूँकि पदार्थवादी शिक्षण प्रक्रिया को शिक्षक केन्द्रित मानते हैं अतः यह निर्णय लेने का कार्य भी शिक्षकों को दिया जाता है कि वे इस बात का निर्णय करें की विद्यार्थियों को सीखने के लिए सबसे महत्वपूर्ण क्या है। पर इसके साथ ही शिक्षकों के लिए यह आवश्यक है कि वे थोड़ा ध्यान छात्रों की रुचियों का भी रखें क्योंकि रूचि के अभाव में छात्र विषय पर कम ध्यान देंगे फलस्वरूप विषय के अध्ययन में समय अधिक लगेगा।
9. पदार्थवादी पाठ्यचर्या में सभी छात्रों की वैयक्तिक भिन्नताओं को दरकिनार करते हुए हर छात्र के लिए समान पाठ्यचर्या प्रस्तावित की जाती है अतः प्रगति के मूल्यांकन की प्रक्रिया में भी उपलब्धि परीक्षणों में व्यक्तिगत रूप से किसी छात्र की उपलब्धि पर ध्यान देने के स्थान पर कक्षा के मध्यमान पर विशेष ध्यान देते हैं।
10. पदार्थवादी विद्यालयों में अनुशासन हेतु विशेष अनुशंसा की जाती है। वास्तव में क्रमबद्ध रूप से सीखने के लिए विद्यालय में अनुशासन का होना अनिवार्य है। विद्यार्थियों को विद्यालय तथा विद्यालय से बाहर प्रत्येक स्थान पर सत्ता का सम्मान करना चाहिए।
11. विद्यार्थियों को अपनी संस्कृति का ज्ञान होना चाहिए जिससे सही रूप में संस्कृति का हस्तांतरण अगली पीढ़ी को हो सके। इसके लिए कक्षाओं में विद्यार्थियों को सांस्कृतिक रूप से साक्षर होने की शिक्षा दी जाती है जो लोगों, घटनाओं, विचारों एवं संस्थाओं के कार्यसाधक ज्ञान को लिए होता है।
12. शिक्षकों का सुशिक्षित एवं परिपक्व होना अत्यावश्यक है। शिक्षकों को अपने विषय का पारंगत होने के साथ-साथ उस ज्ञान को विद्यार्थियों में हस्तांतरित करने की योग्यता होनी चाहिए।
13. पदार्थवादी विद्यार्थियों में इस प्रकार से शिक्षा को बीजारोपित करने पर बल देते हैं की विद्यालय छोड़ने के पश्चात् भी वे न केवल बुनियादी ज्ञान और कौशल के अधिकारी बल्कि अनुशासित और व्यवहारिक ज्ञान के अधिकारी भी बने रहें जिससे वे सीखे गए ज्ञान का प्रयोग वास्तविक दुनिया एवं परिस्थितियों में कर सकें।

अभ्यास प्रश्न

8. पदार्थवादी दर्शन का जन्म किस देश में हुआ था ?

i. सोवियत रूस
ii. फ्रांस
iii. अमेरिका
iv. जर्मनी

9. पदार्थवादी दर्शन ..... पर आधारित है।
10. 1930 के दशक में पदार्थवाद का प्रमुख दार्शनिक ..... को माना जाता है।
11. पदार्थवादी पाठ्यचर्या में सभी विद्यार्थियों के लिए ..... की बात की जाती है।
12. पदार्थवादी दर्शन के मुख्य समर्थकों में किन-किन दार्शनिकों का नाम आता है?

13. पदार्थवादी शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यचर्या में किन विषयों के समावेश पर बल दिया जाता है?

5.3.3 पुनर्संरचनावाद

पुनर्संरचनावाद को एक ऐसे शैक्षिक उपागम के रूप में देखा जाता है जिसने अमेरिका में सामाजिक परिवर्तन हेतु विद्यालयों के सामाजिक भूमिका निभाने पर बल दिया। पुनर्संरचनावाद के समर्थकों का मानना है कि सामाजिक परिवर्तन के लिए विद्यालयों को मात्र शिक्षा देने वाली शाला बन कर ही नहीं रहना चाहिए वरन इसके इतर विद्यालयों की कुछ सामाजिक भूमिकाएं भी होती हैं जिसे उन्हें भली-भांति निभाना चाहिए । 1930 से 1960 के दौरान पुनर्संरचनावाद अमेरिका में एक अतिलोकप्रिय दर्शन था। वैसे तो पुनर्संरचनावाद का प्रारंभ 1930 के काफी पहले ही हो चुका था पर लम्बे समय तक यह विचारधारा अन्धकार के गर्त में रही। काफी समय तक अंधकार में रहने के पश्चात् 1930 के दशक में यह विचारधारा पुनः प्रकाश में आयी परन्तु 1950 के दशक में यह पूर्णरूपेण पुष्पित-पल्लवित हुई। पुनर्संरचनावाद को काफी हद तक कोलंबिया टीचर्स कॉलेज के थोओडोर ब्रैमेल्ड, के मष्तिस्क की उपज के रूप में देखा जाता है जिसके कार्यों के द्वारा पुनर्संरचनावाद 1950 के दशक में अपने वास्तविक स्वरुप को प्राप्त कर सकी। थोओडोर ब्रैमेल्ड ने अध्ययन के फलस्वरूप अमेरिका में शिक्षा सम्बन्धी तीन मुख्य उपागमों की पहचान की। इसमे पहला स्थायित्ववाद है जिसका मानना है कि शिक्षा का आधार महान पुस्तकें होनी चाहिए दूसरा पदार्थवाद है जो सामाजिक विरासत उपागम पर आधारित थी और तीसरा प्रगतिवाद है जो विद्यार्थी को अपना विकास स्वयं के द्वारा करने की वकालत करता है। पहले दोनों को अस्वीकार करते हुए पाया कि उनकी शैक्षिक विचारधारा तीसरे से मिलती है। प्रारंभ में थोओडोर ब्रैमेल्ड एक कम्युनिस्ट विचारधारा से प्रभावित थे परन्तु कालांतर में पुनर्संरचनावाद की ओर मुड़ गए।

पुनर्संरचनावाद के अन्य प्रमुख समर्थक जॉर्ज काउंट्स (1932) थे जिन्होंने अपने भाषण, जिसका शीर्षक "Dare the School Build a New Social Order" में यह सुझाव दिया कि विद्यालय सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक सुधार के प्रतिनिधि बन गए हैं। अतः इस दिशा में छात्रों से मात्र एक तटस्थ भूमिका निभाने को स्वीकार नहीं किया जा सकता है बल्कि उनसे समाज में एक स्थान, एक सामाजिक पद ग्रहण करने की आशा की जाती है ताकि वे सुधार में अपना विशेष योगदान दे सकें।

पुनर्संरचनावाद के अधिकांश समर्थक वर्ग मुक्त एवं विभेदमुक्त समाज की कल्पना करते हैं अतः पुनर्संरचनावादी जाति, लिंग, धर्म और सामाजिक-आर्थिक स्तर के अंतर को लेकर अधिक संवेदनशील हैं। पुनर्संरचनावाद से सम्बंधित एक अन्य विश्वास Critical Pedagogy है। यह मुख्य रूप से शिक्षण और पाठ्यचर्या सिद्धांत है जो कि हेनरी गिरोक्स और पीटर मैकलॉरेन के द्वारा इसका प्रारूप तैयार किया था जो कि कक्षा में क्रांतिकारी साहित्य के प्रयोग पर बल देता है जिसका लक्ष्य 'मुक्ति' को प्राप्त करना है। अपनी अवधारणाओं के आधार पर Critical Pedagogy मार्क्स के विचारधारा पर आधारित थी जो कि समाज में धन के वितरण में समानता की वकालत करती है और पूंजीवाद का घोर विरोध करती है।

नवीन पुनर्संरचनावादी जैसे पाउलो फ्रेइरे (1968) अपनी पुस्तक 'Pedagogy of the Oppressed' (1968) में गरीब छात्रों के लिए क्रांतिकारी शिक्षा की वकालत करते हैं जिसमें व्यक्ति विभिन्न चरणों से गुजरते हुए पूर्णता को प्राप्त करता है। छात्र स्वयं के लिए स्वयं ही क्रिया करें। ज्ञान के द्वारा वे विभेदनशीलता के विरुद्ध कारवाई करने में सक्षम हो सकें तथा स्वयं ही उत्पीड़न से बाहर निकल सकें।

समाज में परिवर्तन हेतु शिक्षा को एक उपकरण के रूप में है। पुनर्संरचनावादी समाज में सुधार के पक्ष में तर्क देते हैं और साथ ही शिक्षा में इस बात पर विशेष बल देते हैं कि विद्यार्थियों को यह सिखाना या पढाना चाहिए की संपूर्ण समाज या इसके किसी भी भाग में परिवर्तन किस प्रकार लाया जाए। सामान्य रूप में पुनर्संरचनावाद वह दर्शन है जो सामाजिक और सांस्कृतिक आधारभूत सुविधाओं के पुनर्निर्माण पर विश्वास करती है। पुनर्संरचनावाद के अनुसार शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए जो छात्रों की सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करे और साथ ही समस्याओं के अध्ययन के पश्चात् सामाजिक उन्नति के लिए उचित रास्तों की तलाश करे।

पुनर्संरचनावादी पाठ्यचर्या का स्वरुप

पुनर्संरचनावादी दर्शन के अनुसार पाठ्यचर्या का स्वरुप निम्नवत होना चाहिए।

1. पुनर्संरचनावादी पाठ्यचर्या में, छात्रों के लिए सामाजिक समस्याओं की व्याख्या, विश्लेषण एवं मूल्यांकन करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि रचनात्मक परिवर्तन लाने के लिए छात्रों को सम्बंधित

मुद्दों पर चर्चा करना और निवारण के लिए उन्हें प्रोत्साहित करना आवश्यक है। उन्हें इस प्रकार तैयार करना जरुरी है कि वे सामाजिक समस्याओं को दूर करने के लिए प्रतिबद्ध हो जाएँ।

2. पाठ्यचर्या सामाजिक और आर्थिक मुद्दों के साथ-साथ सामाजिक सेवा पर भी आधारित होना चाहिए। पाठ्यचर्या में स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समुदायों महत्वपूर्ण विश्लेषण होना चाहिए जिससे छात्रों को स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समुदायों का समुचित ज्ञान हो सके। इन मुद्दों के कुछ उदाहरण पर्यावरण ह्रास, बेरोजगारी, अपराध, राजनीतिक उत्पीड़न, युद्ध, भूख इत्यादि हैं।
3. पुनर्संरचनावादी ऐसी पाठ्यचर्या की बात करते हैं जो सामाजिक असमानताओं को ख़त्म करने में मदद करती है। समाज में कई तरह की असमानताएं एवं अन्याय हैं जैसे- जाति, लिंग, सामाजिक-आर्थिक स्थिति से सम्बंधित असमानताएं एवं इसकी वजह से उपजा अन्याय। विद्यालयों को छात्रों को इन अन्यायों के विरुद्ध एक क्रांतिकारी कदम लेने को प्रेरित करना चाहिए। इसके साथ ही साथ छात्रों को विवादस्पद मुद्दों की जाँच से भी पीछे नहीं हटना चाहिए। छात्रों को विभिन्न मुद्दों पर आम सहमति बनाने के सम्बन्ध में सीखना चाहिए और इसके लिए छात्रों को एक साथ समूह में कार्य करने को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
4. समाज में हो रहे लगातार परिवर्तन के साथ ही पाठ्यचर्या को भी परिवर्तित होते रहना चाहिए। छात्रों को विभिन्न वैश्विक मुद्दों एवं राष्ट्रों के मध्य अन्योन्याश्रित संबंधों से अवगत होना चाहिए। इसके साथ ही पाठ्यचर्या ऐसी होनी चाहिए जिसमें छात्रों में आपसी समझ और वैश्विक सहयोग बढ़ाने से सम्बंधित पाठ हों।
5. शिक्षकों को सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक नवीकरण एवं अंतर्राष्ट्रीयता को बढ़ाने वाले मुख्य प्रतिनिधियों के रूप में देखा जाता है अतः उन्हें पुरानी संरचनाओं को चुनौती देने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और एक नयी सामाजिक व्यवस्था जो काल्पनिक हो सकती है, को लेने का प्रयास करना चाहिए।
6. पुनर्संरचनावादी सामान्य रूप से पाठ्यचर्या में विज्ञान के स्थान पर सामाजिक विज्ञान जैसे विषयों को रखने की वकालत करते हैं। पाठ्यचर्या में जिन विषयों के समावेश पर मुख्य रूप से बल दिया जाता है उनमें इतिहास, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, धर्म, मूल्य, कविता और दर्शन हैं

अभ्यास प्रश्न

14. पुनर्संरचनावाद को वास्तविक स्वरुप किस दार्शनिक ने प्रदान किया?

    i. पीटर मैकलॉरेन

ii. जॉर्ज काउंट्स
iii. थोओडोर ब्रैमेल्ड
iv. जॉन डीवी

15. पुनर्संरचनावाद मुख्य रूप से किन मुद्दों को पाठ्यचर्या में सम्मिलित करने की बात करता है?
i. सामाजिक मुद्दे
ii. राजनीतिक मुद्दे
iii. सांस्कृतिक मुद्दे
iv. आर्थिक मुद्दे

16. पुनर्संरचनावाद के अनुसार पाठ्यचर्या में किन विषयों का समावेश होना चाहिए?
17. पुनर्संरचनावाद पाठ्यचर्या के अनुसार शिक्षक की भूमिका की चर्चा करें।

5.4 पाठ्यचर्या एवं मूल्यों के बीच सम्बन्ध

पाठ्यचर्या क्या है इसका अध्ययन हम इस इकाई के प्रारंभ में कर चुके हैं। अतः पाठ्यचर्या एवं मूल्यों के मध्य सम्बन्ध जानने से पहले आवश्यक है कि मूल्य क्या हैं ये जान लिया जाए।

मूल्य

मूल्य हमारे समाज में निहित आदर्श और विश्वास हैं जो हमारे विचारों, रीति-रिवाजों, रहन-सहन, वेश-भूषा से परिलक्षित होता है। मूल्यों को विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग तरीके से परिभाषित किया है; परन्तु सभी का आशय कमोबेश एक जैसा ही है।

काने ने मूल्यों को परिभाषित हुए कहा है कि, "मूल्य वे आदर्श तथा विश्वास हैं; जिन्हें समाज के अधिकांश सदस्यों ने अपना लिया है।" अर्थात जिस समाज में जो समाजसम्मत है उसे उस समाज का मूल्य माना जा सकता है। **अंतर्राष्ट्रीय विश्वकोष** के अनुसार, "मूल्य का अर्थ नियमों के उस समुच्चय से लिया जाता है जहाँ चरित्र को व्यक्ति तथा सामाजिक दलों के लिए नियंत्रित किया जाता है।" वहीं **अर्बन** ने मूल्यों की परिभाषा इस रूप में दी है कि "मूल्य वे हैं जो मानवीय अभिलाषाओं को संतुष्ट करते हैं"। **आर. के. मुखर्जी** के शब्दों में, "मूल्यों को सामाजिक दृष्टि से स्वीकार्य उन इच्छाओं तथा लक्ष्यों के रूप में परिभाषित किया है जिन्हें अनुबंधन, अधिगम या समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा आभ्यान्तरीकृत किया जाता है तथा जो आत्मनिष्ठ प्राथमिकताओं, मानकों तथा आकांक्षाओं को ग्रहण करती है।"

मानव कुछ लक्ष्यों को ले कर जन्म लेता है जिनकी प्राप्ति के लिए वह जीवन भर प्रयासरत रहता है इन्हीं जीवन लक्ष्यों को मूल्य की संज्ञा दी जाती है। जीवन से सम्बंधित इन लक्ष्यों की उत्पति के स्रोत इस प्रकार हैं –

मूल्यों के स्रोत

मूल्य हमारे जीवन में ही निहित हैं। जीवन से जुड़े कई पहलू होते हैं जैसे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आर्थिक, राजनीतिक, आध्यात्मिक। अतः मानव जीवन से सम्बंधित प्रत्येक पहलू से मूल्य सम्बंधित होते हैं और समाज में व्याप्त प्रत्येक मूल्य का जन्म मानव से सम्बंधित इन विभिन्न पक्षों से होता है। ये विविध पक्ष इस प्रकार हैं।

i. दर्शन से सम्बंधित मूल्य
ii. सामाजिक संरचना से सम्बंधित मूल्य
iii. धर्म से सम्बंधित मूल्य
iv. संस्कृति से सम्बंधित दर्शन

मूल्यों के प्रकार

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि ये मूल्य हमारे जीवन के लक्ष्य, पक्षों से सम्बंधित होते हैं एवं संस्कृति का ही एक भाग हैं। मूल रूप से प्रत्येक संस्कृति में सर्वमान्य कुछ मूल्य होते हैं। व्यक्तिगत, समानता, स्वतंत्रता, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्रजातान्त्रिक, भ्रातृत्व, धर्मनिरपेक्षता, सत्य व अहिंसा, आध्यामिकता, विश्व-बंधुत्व, भौतिकता आदि इसप्रकार के मूल्य हैं। अर्बन ने मनुष्य के जीवन के तीन महत्वपूर्ण पक्षों के आधार पर मूल्य के तीन प्रकार बताये हैं (i) शारीरिक, (ii) सामाजिक, (iii) आध्यात्मिक। अर्बन के अतिरिक्त अन्य विद्वानों ने भी इन पक्षों से सम्बंधित मूल्य के विभिन्न प्रकार बताये हैं जो इस प्रकार हैं-

सामान्य रूप से मान्य मूल्य-

i. दार्शनिक मूल्य
ii. मनोवैज्ञानिक मूल्य
iii. सामाजिक मूल्य
iv. मानवीय या सार्वभौमिक मूल्य

पाश्चात्य विद्वानों ने विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर मूल्य के भिन्न प्रकार बताये हैं जिनमें शारीरिक, आर्थिक, मनोरंजन, साहचर्य, चरित्र, सौन्दर्य, बौद्धिक एवं धार्मिक आदि सम्मिलित होते हैं। पश्चिमी संस्कृति की मूल्य मीमांसा के अनुसार मूल्यों के चार प्रकार बताए हैं-

i. नैतिक मूल्य
ii. सौन्दर्यपरक मूल्य

iii. सामाजिक या आर्थिक मूल्य
iv. धार्मिक या सांस्कृतिक मूल्य

मनु ने अपनी स्मृति में चार पुरुषार्थों का उल्लेख किया है, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । ये चारों पुरुषार्थ चार भारतीय मूल्य के रूप में जाने जाते हैं । इसमें अर्थ और काम लौकिक मूल्य हैं तथा धर्म और मोक्ष आध्यात्मिक मूल्य हैं । इन मूल्यों के अतिरिक्त अन्य परंपरागत भारतीय मूल्य निम्नलिखित हैं-

i. सत्य
ii. धर्म
iii. शान्ति
iv. प्रेम
v. अहिंसा

जैसा कि पहले ही बताया गया है कि मूल्य समय के साथ परिवर्तनशील हैं। बदलते समय के साथ मूल्यों में भी परिवर्तन हुआ है। आधुनिक भारतीय समाज के मूल्यों के अंतर्गत स्वतंत्रता, न्याय, समानता, भ्रातृत्व, सत्य व अहिंसा, देश-प्रेम, विश्व-बंधुत्व एवं अंतर्राष्ट्रीय सदभाव की भावना तथा इन सबसे ऊपर नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्य आते हैं जो प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक उसी प्रकार से अनुकरणीय हैं।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति अति प्राचीन हैं। मूल्य संस्कृति में ही संलग्नित होते हैं। भारतीय संस्कृति स्वयं में अति मूल्यनिष्ठ संस्कृति मानी जाती है। वस्तुतः प्रत्येक संस्कृति में कुछ मूल्य निहित होते हैं। ये मूल्य उस स्थान उस देशकाल के दर्शन पर आधारित होते हैं। जैसा कि अधिकांश लोगों का मानना है है कि आधुनिकता या पश्चिमी सभ्यता मूल्यहीन है। पश्चिमीकरण, नगरीकरण अथवा आधुनिकीकरण; ये सभी अपने कुछ न कुछ मूल्यों को समाहित कर रखा है। ये बात और है कि ये सभी मूल्य एक हद तक हमारे देश में परंपरागत मान्य मूल्यों से नहीं मिलते, जिसकी वजह से इतना विरोध होता है। परन्तु मूल्यों के स्वरुप में परिवर्तन अवश्यम्भावी है।

इस विश्व में सनातन कुछ भी नहीं है। यदि कुछ स्थायी या सनातन है तो वह परिवर्तन ही है। समाज में परिवर्तन होता रहता है। विभिन्न परिवर्तनों के कारण समाज में परिवर्तन आता है। समाज में आए परिवर्तन के साथ ही दर्शन, आदर्श, विश्वास, धर्म, परम्परा, प्रथा, मनोभाव, साहित्य, विज्ञान सभी में परिवर्तन आता है और इन सभी के साथ मूल्यों में परिवर्तन आता है।

पाठ्यचर्या एवं मूल्य: पाठ्यचर्या के निर्माण के पीछे दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मानवीय जैसे आधार उत्तरदायी हैं । ये आधार मूल्यों के निर्माण के लिए भी

उत्तरदायी हैं तो जैसे ही इन आधारों में परिवर्तन होता है मूल्यों में भी परिवर्तन हो जाता है और पाठ्यचर्या का मुख्य उद्देश्य इन जीवन मूल्यों की प्राप्ति है तो परिवर्तित मूल्यों की प्राप्ति हेतु पाठ्यचर्या में भी परिवर्तन हो जाता है । जिस प्रकार के हमारे समाज के मूल्य होते हैं हमारी पाठ्यचर्या भी उसी प्रकार की होती है। पाठ्यचर्या के माध्यम से इन मूल्यों को प्राप्त कर समाज के द्वारा नियत लक्ष्यों को पाने का प्रयास किया जाता है। शिक्षा एवं पाठ्यचर्या में व्याप्त मूल्यों का को इस रेखाचित्र के माध्यम से समझा जा सकता है । मूल्यों ये परिवर्तन आगे चल कर संस्कृति में परिवर्तन करते हैं।

पाठ्यचर्या एवं मूल्यों के मध्य अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। दोनों एक-दूसरे से अंतर्संबंधित हैं साथ ही एक-दूसरे को प्रभावित करते और होते हैं। मूल्यों के आधार पर शैक्षिक उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं और फिर उन उद्देश्यों के लिए शैक्षिक संरचना बनायी जाती है । शैक्षिक संरचना के हिसाब से विद्यालयी और कक्षा के वातावरण का निर्माण किया जाता है जिसमें निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु शिक्षा दी जानी है। तद्पश्चात उचित पाठ्यचर्या का शिक्षण सहायक सामग्रियों, शिक्षण विधियों एवं तकनीकों के माध्यम से विद्यार्थियों को ज्ञान दिया जाता है। तद्पश्चात उनका मूल्यांकन कर निर्धारित एवं गैरनिर्धारित परिणाम प्राप्त किए जाते हैं। ये स्पष्ट करते हैं कि किन मूल्यों की प्राप्ति नहीं हुयी है और उसके आधार पर संपूर्ण शिक्षण व्यवस्था को पुनर्निर्मित किया जाता है और इस प्रकार यह चक्र निरंतर चलता रहता है।

चित्र संख्या: 5.

शिक्षा में मूल्यों का प्रतिबिम्बन

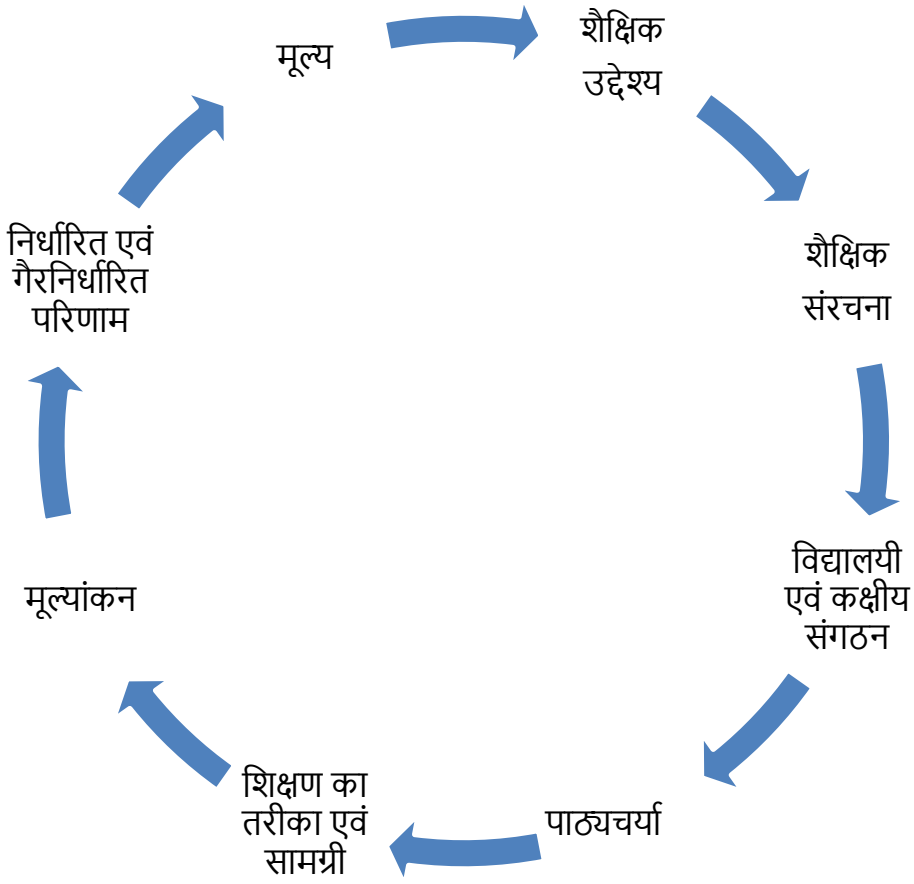

इस इकाई से यह स्पष्ट है कि प्रत्येक दर्शन का शिक्षा को अपनी तरह से प्रभावित करता है। तत्कालीन आदर्शों, विचारधाराओं और सामाजिक आवश्यकताओं के आधार पर शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकता भिन्न-भिन्न होती है। किसी न किसी रूप में शिक्षा सम्बन्धी ये दर्शन आज भी व्यावहारिक हैं। जहाँ पदार्थवादी दर्शन वैज्ञानिकता पर बल देता है वहीँ प्रगतिवादी दर्शन प्राकृतिक विज्ञान के साथ-साथ सामाजिक विज्ञान पर भी बल देता है और पुनर्संरचनावादी दर्शन मूल रूप से सामाजिक विज्ञान एवं सामाजिकता का विकास करने से सम्बंधित दार्शनिक विचारधारा है। इसीप्रकार संस्कृति में निहित मूल्य भी शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित करते हैं।

देश की बढ़ती जनसंख्या के साथ कई समस्याओं ने जन्म लिया। बेरोजगारी की समस्या भी उन्हीं समस्याओं में से एक है। इस बढ़ती जनसंख्या के लिए सरकार के द्वारा सभी के लिए रोजगार की

व्यवस्था करना अत्यन्त कठिन कार्य है। इस हेतु प्रगतिवादी शिक्षा व्यवस्था आवश्यक है जो स्वयं करके सीखने पर बल देती है। स्वयं करके सीखने से जहाँ छात्रों द्वारा किया गया प्रयास, प्रयोग एवं हस्तकौशल तथा अन्य गामक क्रियाओं द्वारा सीखे जाने पर बल देता है वहीँ कहीं न कहीं से स्वरोजगार में सहायक होता है। इसके साथ ही जनसंख्या बढ़ने के साथ देश में परिवार नियोजन को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। जिससे पहले परिवार में जो माता-पिता और उनके दो बच्चे की संकल्पना थी वह दो बच्चों से घटकर मात्र एक बच्चे पर आ गयी है। समाजशास्त्रियों द्वारा यह अंदेशा व्यक्त किया जा रहा है कि आने वाली पीढियां भाई, बहन, बुआ, चाचा, मामा, मौसी जैसे रिश्तों से अनजान रहेंगी। इसका एक और दूरगामी पक्ष यह है कि इन रिश्तों से अनजान रहने के साथ ही उनमें सामाजिक एवं मानवीय गुणों जैसे सहयोग, सामाजिकता, परोपकार त्याग, करुणा, दया, समायोजन जैसे गुणों का अभाव हो जाएगा क्योंकि जीवन से सम्बंधित इस पाठ का प्रारंभ घर एवं परिवार से होता है। वर्तमान समय में भी नवीन पीढ़ियों में इन गुणों का अभाव दिख रहा है इसलिए इन सभी समस्याओं के निवारण के लिए प्रगतिवादी शिक्षा एक हल के रूप में देखी जा सकती है। इतना ही नहीं भारतवर्ष में विष की तरह व्याप्त साम्प्रदायिकता, जातिवाद, वर्णवाद के निवारण में प्रगतिवादी एवं पुनर्संरचनावादी शिक्षा पद्धति उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

पदार्थवादी शिक्षा व्यवस्था भी आज की मांग को देखते हुए आवश्यक है। पदार्थवादी शिक्षा वैज्ञानिकता एवं व्यावहारिकता से सम्बंधित है जो आधुनिक वैज्ञानिक युग के लिए उपयोगी है।

अभ्यास प्रश्न

18. मूल्य को परिभाषित करें?
19. भारतीय परम्परा के अनुसार कौन-कौन से मूल्य माने गए हैं?
20. समाज के मूल्यों में परिवर्तन के साथ पाठ्यचर्या भी परिवर्तित होनी चाहिए । सत्य/असत्य
21. अर्बन के अनुसार मुख्य रूप से पांच मूल्य होते हैं । सत्य/असत्य
22. मूल्य व्यापक रूप से पाठ्यचर्या को प्रभावित करते हैं । सत्य/असत्य
23. किन मूल्यों को आधुनिक भारत में मूल्य की संज्ञा दी जाती है?

सारांश

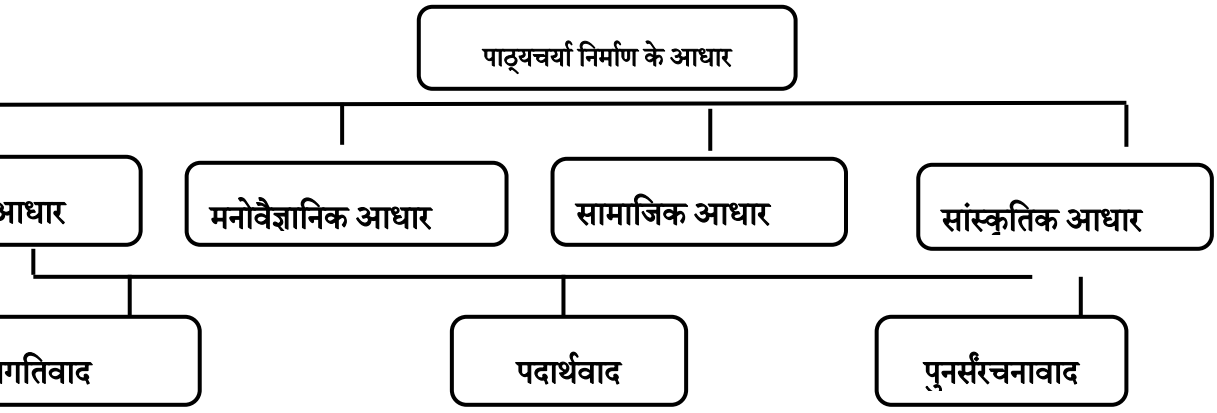

का बालकेंद्रित लक्ष्य व बालकेंद्रित चर्या, पाठ्यचर्या लोकतान्त्रिक विक जीवन की परिस्थितियों में ना, खोजपूर्ण तरीके से सीखने पर समूह में सीखने को प्रोत्साहन, तिक एवं सामाजिक विज्ञान के यन पर बल, शिक्षक को तत्वान्वेषी अध्ययनशील होना चाहिए, शिक्षा द्प्रद, कक्षा जीवन्त, छात्र अंतःक्रिया यक, विभिन्न विषयों का म्बन्ध विधि से अध्यापन । **दार्शनिक-** रुसो, डीवी, पेस्टोलोज़ी, न, मेरिया मोंटेसरी	विज्ञान तथा वैज्ञानिक पाठ्यचर्या को समर्थन, पारंपरिक मूल्यों को प्रोत्साहन, व्यावसायिक तथा जीवन समायोजन से सम्बंधित विषयों को पाठ्यचर्या में रखने को हतोत्साहित, 3R में विशेष ज्ञान या निपुणता प्राप्त करने पर बल, वैयक्तिक विभिन्नताओं को नज़रअंदाज़, सभी छात्रों के लिए सामान पाठ्यचर्या पर छात्रों में अंतर, पाठ्यचर्या अत्यधिक चुनौतीपूर्ण, शिक्षक अत्यन्त महत्वपूर्ण, विषय का ज्ञाता एवं ज्ञान का स्रोत, छात्रों के लिए पथ-प्रदर्शक, व्यक्तिगत उपलब्धियों के स्थान पर सम्पूर्ण कक्षा की उपलब्धि के मध्यमान पर ध्यान, अनुशाषन अत्यावश्यक,विद्यार्थियों के लिए सांस्कृतिक रूप से साक्षर होना आवश्यक । **मुख्य दार्शनिक**- विलियम बेगले, आर्थर बेस्टर, एडमिरल रिकओवर डेकार्ते, न्यूटन, ह्यूम, लॉक, कांट	सांस्कृतिक व सामाजिक पुनर्निर्माण से सम्बंधित विचारधारा अतएव पाठ्यचर्या भी ऐसी ही, सामाजिक समस्याओं के अध्ययन से सम्बंधित, विद्यालय सामाजिक सुधार व सामाजिक परिवर्तन के प्रतिनिधि, छात्र भविष्य के समाजसुधारक, वर्गमुक्त एवं विभेदमुक्त समाज की कल्पना, पाठ्यचर्या में सामाजिक विज्ञान के विषयों पर विशेष बल, अंतर्राष्ट्रीयता को बढ़ावा एवं नए समाज की स्थापना की कल्पना । **मुख्य दार्शनिक**- थोओडोर ब्रैमेल्ड जॉर्ज काउंट्स, हेनरी गिरोक्स, पीटर मैकलॉरेन, पाउलो फ्रेइरे

5.6 शब्दावली

1. **प्रगतिवाद:** प्रगतिवाद वह दार्शनिक मत है जो इस पर बल देता है कि किसी भी शिक्षा व्यवस्था का केन्द्र बालक होना चाहिए साथ ही शिक्षा वास्तविक जीवन पर आधारित होनी चाहिए।
2. **पदार्थवाद:** पदार्थवाद विश्व में शक्ति के स्रोत और प्रभुत्व से सम्बंधित एक प्राचीन सिद्धांत है जिसका मानना है कि प्रकृति का जटिल नियम प्रकृति में पाए जाने वाली प्रत्येक वस्तु में आतंरिक रूप से है। अतः रूप परिवर्तित करने के स्थान पर वस्तु को उसे उसी के रूप में स्वीकार करना चाहिए।
3. **पुनर्संरचनावाद:** पुनर्संरचनावाद वह शैक्षिक विचारधारा है जिसका मानना है कि सामाजिक परिवर्तन लाने में मुख्य योगदान विद्यालय ही कर सकते हैं।
4. **मूल्य:** मूल्य समाज के वे आदर्श या विश्वास हैं जो समाज सम्मत हैं तथा समाज के अधिकांश सदस्य गुणों के रूप में जिनका अनुसरण करते हैं।

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पाठयचर्या निर्माण के मुख्य आधार इस प्रकार हैं;
   i. पाठयचर्या निर्माण के दार्शनिक आधार
   ii. पाठयचर्या निर्माण के मनोवैज्ञानिक आधार
   iii. पाठयचर्या निर्माण के सामाजिक आधार
   iv. पाठयचर्या निर्माण के सांस्कृतिक आधार
2. प्रगतिवादी पाठ्यचर्या में प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान सम्बन्धी विषयों जैसे- भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र, गृहविज्ञान, को पाठ्यचर्या में शामिल करने पर विशेष बल दिया जाता है.
3. प्रगतिवाद के प्रमुख दार्शनिक रुसो, डीवी, पेस्टोलोज़ी, फ्रोबेल, मेरिया मोंटेसरी इत्यादि हैं।
4. 1886
5. जॉन डीवी
6. खोजपूर्ण
7. लोकतान्त्रिक

8. **iii.** अमेरिका
9. वैज्ञानिकता
10. विलियम बेगले
11. समान पाठ्यचर्या
12. पदार्थवाद के मुख्य दार्शनिकों में विलियम बेगले, आर्थर बेस्टर, एडमिरल रिकओवर डेकार्ते, न्यूटन, ह्यूम, लॉक, कांट इत्यादि आते हैं।
13. पदार्थवादी पाठ्यचर्या में मुख्यतः वैज्ञानिक विषयों का समावेश करने पर बल दिया जाता है। पाठ्यचर्या में गणित, प्राकृतिक विज्ञान, इतिहास, विदेशी भाषायें, और साहित्य विषय को सम्मिलित किया जाता है।
14. **iii.** थोओडोर ब्रैमेल्ड
15. **i.** सामाजिक मुद्दे
16. पुनर्संरचनावाद के अनुसार पाठ्यचर्या में सामाजिक विज्ञान जैसे विषयों को रखना चाहिए। सामाजिक विज्ञान में जिन विषयों के समावेश पर मुख्य रूप से बल दिया जाता है उनमें इतिहास, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, धर्म, मूल्य, कविता और दर्शन इत्यादि हैं।
17. पुनर्संरचनावादी दर्शन में शिक्षक को एक महत्वपूर्ण भूमिका प्राप्त है। शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक नवीकरण एवं अंतर्राष्ट्रीयता को बढ़ाने वाले मुख्य प्रतिनिधि के रूप में देखा जाता है।
18. मूल्यों को सामाजिक दृष्टि से स्वीकार्य उन इच्छाओं तथा लक्ष्यों के रूप में परिभाषित किया है जिन्हें अनुबंधन, अधिगम या समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा आभ्यान्तरीकृत किया जाता है तथा जो आत्मनिष्ठ प्राथमिकताओं, मानकों तथा आकांक्षाओं को ग्रहण करती है।
19. भारतीय परम्परा में मूल मूल्यों के रूप में सत्य, धर्म, शान्ति, प्रेम और अहिंसा हैं।
20. सत्य
21. असत्य
22. सत्य
23. आधुनिक भारतीय में स्वतंत्रता, न्याय, समानता, भ्रातृत्व, सत्य व अहिंसा, देश-प्रेम, विश्व-बंधुत्व एवं अंतर्राष्ट्रीय सदभाव की भावना इत्यादि को मूल्यों की संज्ञा दी जाती है।

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Connolly, J. J. (1998). *The Triumph of Ethnic Progressivism: Urban Political Culture in Boston 1900-1925*. Cambridge: Harvard University Press
2. Ellis, B. (2002). *The Philosophy of Nature: A Guide of the New Essentialism.* Chesham: Acumen Publishing limited
3. Heslep, R. (1997). *Philosophical Thinking in Educational Practice*. london: Greenwood Publishing.
4. abaree, D.F. (2005*).* Progressivism, Schools and Schools of Education: An American Romance. *Paedagogica Historica*. 41, (1 & 2), 275–288.
5. ink, W. A. (1992). The Paradox of Southern Progressivism, 1880-1930. USA: University of North Carolina Press.
6. insky, l. Reference, Essentialism, and Modality. The Journal of Philosophy, 66, No. (20), 687-700. Retrieved Feb. 17, 2013 from http://links.jstor.org/sici?sici=0022362X%2819691016%2966%3A20%3C687%3AREAM%3E2.0.CO%3B2-6
7. Nugent, W. (2010). *Progressivism: A Very Short Introduction*. New York: Oxford University Press, Inc.
8. Paul, l.A. (2006). In Defense of Essentialism. *Philosophical Perspectives*. 20.
9. Pestritto, R. J. & Atto, W. J. (Eds.) (2008). *American Progressivism*. lanham: lexington Books.
10. Radu, l. (2011). John Dewey and Progressivism in American Education. *Bulletin of the Transilvania University of Braşov Series VII: Social Sciences, law*. 4 (2).
11. Rogers, C. (1990) The Carl Rogers Reader,ed. H.Kirschenbaum and V.land Henderson, london, Constable.

12. Anderson, W.J. (). Progressivism: An Historiographical Essay

5.9 सहायक/उपयोगी सामग्री

1. चतुर्वेदी, पी. एवं खण्डाई, एच. (2011). *मूल्य शिक्षा.* नयी दिल्ली: ए.पी.एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन।
2. Doll, R.C. (1986). *Curriculum Improvement: Decision Making and Process*. Boston: Allyn and Bacon.
3. Goodlad, J.I. (1979). *Curriculum Inquiry*. New York: McGraw-Hill.
4. Mrunalini, T. (2008). *Curriculum Development.* Hyderabad: Neelkamal Publication PVT. ITD.
5. Ornstein, A. and Hunkins, F. (1998). *Curriculum: Foundations, Principle and Issues.* Boston, MA: Allyn & Bacon.
6. Ornstein, A. C. (nd). *Philosophy as a Basis for Curriculum Decisio*ns. Retrieved Feb 15, 2013 from https://wiki.usask.ca/download/attachments/44564505/Philosophy_%20Curriculum.pdf
7. Rao, U. (2011). *Education for Values.* New Delhi: Himalaya Publishing House.
8. Tanner, E. and Tanner, I (1980). *Curriculum Development: Theory into Practice.* New York: Macmillan Publishing Co.
9. Tyler, R.W. (1949). *Basic Principles of Curriculum and Instruction*. Chicago: University of Chicaga Press.

5.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्रगतिवाद क्या है? प्रगतिवादी दर्शन के अनुसार पाठ्यचर्या का स्वरुप कैसा होना चाहिए?
2. पदार्थवादी एवं पुनर्संरचनावादी दार्शनिक विचारधारा को स्पष्ट करें । पदार्थवादी एवं पुनर्संरचनावादी पाठ्यचर्या में क्या समानताएं एवं विभिन्नताएं हैं? विस्तार से वर्णन करें।
3. मूल्यों को परिभाषित करें। विभिन्न आधारों के अनुसार मूल्यों के कौन-कौन से प्रकार हैं एवं पाठ्यचर्या से मूल्य किस प्रकार सम्बंधित हैं?

Unit 6

पाठचर्या संरचना के मनोवैज्ञानिक आधार

Psychological Bases of Curriculum Construction

विषय संख्या

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

6.2 उद्देश्य (Objectives)

भाग-1

6.3 मनोवैज्ञानिक आधार (Psychological bases)

6.3. शिक्षा और मनोविज्ञान (Education & Psychology)

6.3.2 शिक्षा का अर्थ (Meaning of Education)

6.3.3 मनोविज्ञान का अर्थ (Meaning of Psychology)

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

भाग-2

6.4 पाठ्यचर्या संरचना के आधार के रूप में मनोविज्ञान

(Psychology as a force of Curriculum Construction)

6.4.1 परिपक्वता एवं विकास (Maturity and Development)

6.4.2 व्यक्तिगत भिन्नता (Individual Differences)

6.4.3 अभिरुचि (Interest)

6.4.4 अभिप्रेरणा (Motivation)

6.4.5 अधिगम प्रक्रिया (Learning Process)

6.4.6 अधिगम स्थानान्तरण (Transfer of Learning)

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

भाग-3 - व्यवहारात्मक एवं संज्ञानात्मक अधिगम सिद्धान्तों के मनोवैज्ञानिक निहितार्थ -

6.5.1 व्यवहारात्मक अधिगम के सिद्धान्त (Principles of Learning Behavioral Theories)

1 थार्नडाइक का अधिगम सिद्धान्त

2 पावलव का अनुकूलित अनुक्रिया का सिद्धान्त

3 स्किनर का क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का सिद्धान्त

4 हल का प्रबलन सिद्धान्त

5 टोलमैन का प्रभावकारी सिद्धान्त

6 बण्डुरा का सामाजिक अधिगम सिद्धान्त

7 गुथरी का सामीप्य सम्बन्धवाद का सिद्धान्त

6.5.2 अधिगम के संज्ञानात्मक क्षेत्र के सिद्धान्त (Principles of Learning Cognitive Theories)

1 अधिगम के सूझ का सिद्धान्त

2 पियाजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

6.6 सारांश (Summery)

6.7 शब्दावली (Glossary)

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer of Exercise Question)

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference)

6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्यक्रम (Reference Book)

6.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Question)

6.1 प्रस्तावना (Introduction) -

शिक्षा एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जो मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती है। मानव समाज का एक अभिन्न अंग है समाज से परे उसके अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा

सकती है। शिक्षा मानव की जन्मजात शक्तियों के विकास की प्रक्रिया है जो समाज में निरन्तर गतिशील है। मानव के विचारों में परिवर्तन एवं विकास करने तथा अपनी सभ्यता और संस्कृति से परिचित कराने का कार्य शिक्षा ही करती है। शिक्षा ही हमारी संस्कृति तथा सभ्यता को सुरक्षित रखते हुए उसे आने वाली पीढी को भी हस्तान्तरित करती है। वर्तमान समय में शिक्षा में अनेक प्रकार के खेलों, नाटकों, सामूहिक गीतों, संगीतों, वाद-विवाद, नृत्यों, प्रतियोगिताओं, खान-पान, वेशभूषा, रीतिरिवाज, परम्पराओं एवं देश-विदेश के भ्रमण के आयोजनों के माध्यम से बालकों को समूह की संस्कृति से परिचित कराया जाता है। जिससे उनमें अपनी संस्कृति तथा अन्य संस्कृतियों के मध्य समन्वयात्मक दृष्टिकोण विकसित किया जा सके।

संस्कृति की शिक्षा के द्वारा व्यक्ति अपने प्राकृतिक एवं सामाजिक परिवेश से समायोजन करने में समर्थ होने लगता है। इससे व्यक्ति के सामाजिक व्यक्तित्व का निर्माण होता है और उससे वह एक व्यावहारिक प्राणी बन जाता है। इन सबसे वह आजीविका निर्वाह करने तथा जीवन जीने में आवश्यक अन्य कार्यों में भी महत्त्वपूर्ण सहायता प्राप्त करता है। परिणामस्वरूप वह सामाजिक संस्थाओं को अपनाता है और उनके अनुरूप व्यवहार भी करता है। इससे व्यक्ति जीवन में प्रत्येक अवसर पर व्यवहार के स्पष्ट प्रतिमान पा लेता है और वह समाज का एक उत्तरदायी सदस्य बन जाता है।

इस प्रकार मनोविज्ञान में व्यक्ति के व्यवहार, मानसिक प्रक्रियाओं एवं अनुभवों का अध्ययन शैक्षिक परिस्थितियों में किया जाता है। जिसका ध्येय शिक्षण की प्रभावशाली तकनीकों को विकसित करना तथा अधिगमकर्ता की योग्यताओं एवं अभिरूचियों का आंकलन करना है। यह व्यावहारिक मनोविज्ञान की शाखा है जो शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया को सुधारने में प्रयासरत है।

6.2 उद्देश्य (Objectives) -

1. बालकों की बुद्धि,ज्ञान और व्यवहार में उन्नति किये जाने के विश्वास को बढाना।
2. मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों की खोज एवं तथ्यों के संग्रह का अध्ययन कराना।
3. बालकों में निष्पक्ष एवं सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण विकसित करने में सहयोग प्रदान करना।
4. सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूप व महत्त्व को समझने में सहयोग प्रदान करना।
5. शिक्षण की समस्याओं का समाधान करने में सहयोग प्रदान करना।
6. बालक की रुचियों एवं अभिवृत्तियों का अध्ययन कराना।

7. शिक्षकों के शिक्षण परिणामों में तुलना करने में सहयोग प्रदान करना।

8. शिक्षण विधियों, निर्देशन कार्यक्रमों, विद्यालय संगठन एवं प्रशासन के स्वरूपों का ज्ञान कराना।

भाग-एक

6.3 मनोवैज्ञानिक आधार (Psychological bases)

6.3.1 शिक्षा और मनोविज्ञान (Education & Psychology)

मनोविज्ञान में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि मानव शैक्षिक वातावरण में सीखता कैसे है तथा शैक्षणिक क्रियाकलाप अधिक प्रभावी कैसे बनाये जा सकते हैं। यह मनोविज्ञान का व्यावहारिक रूप है और शिक्षा की प्रक्रिया में मानव व्यवहार का अध्ययन करने वाला विज्ञान है। यह शिक्षा के सभी पहलुओं जैसे शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षण विधि, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन, अनुशासन आदि को प्रभावित करता है। बिना मनोविज्ञान की सहायता के शिक्षा प्रक्रिया सुचारू रूप से नहीं चल सकती। मनोविज्ञान विद्यार्थी तथा सीखने की क्रियाओं के मध्य शिक्षक एवं विद्यार्थी का व्यवहार है। यह विद्यार्थी में वांछित व्यवहार परिवर्तन द्वारा उसे सर्वांगस्वरूप प्रदान करता है।

संक्षेप में हम कह सकते है कि मनोविज्ञान अपनी विभिन्न खोजों के लिए वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करता है। तदुपरान्त, यह उनसे प्राप्त होने वाले निष्कर्षों के आधार पर शिक्षा की समस्याओं का समाधान करता है और बालकों की उपलब्धियों के सम्बन्ध में भविष्यवाणी करता है। जिस प्रकार वैज्ञानिक विभिन्न तथ्यों का निरीक्षण और परीक्षण करके उनके सम्बन्ध में अपने निष्कर्ष निकालकर किसी सामान्य नियम का प्रतिपादन करता है, उसी प्रकार शिक्षक, कक्षा-कक्ष की किसी विशेष या तात्कालिक समस्या का अध्ययन और विश्लेषण करके उनका समाधान करने का उपाय खोजता है।

6.3.2 शिक्षा का अर्थ (Meaning of Education)

शिक्षा शब्द की व्युत्पति संस्कृत की 'शिक्ष्' धातु से हुई है जिसका अर्थ है सीखना और सिखाना। शिक्षा में वह सब कुछ निहित है जो हम समाज में रहकर सीखते हैं या सिखाते हैं। शिक्षाशास्त्री शिक्षा शब्द का प्रयोग प्रायः तीन रूपों में करते हैं।

1. ज्ञान knowledge

2. पाठ्यचर्या का विषय Subject of Curriculum

3. व्यवहार में परिवर्तन लाने वाली प्रक्रिया Process of Changing the Behavior

वास्तव में यदि देखा जाए तो शिक्षा का तीसरा अर्थ अधिक उचित प्रतीत होता है। समाज में रहकर व्यक्ति जो कुछ भी सीखता है उसी के परिणामस्वरूप वह स्वयं को पाशविक प्रवृतियों से ऊंचा उठाता है और सभ्य एवं सामाजिक प्राणी बनने की इच्छा रखता है। शिक्षा के द्वारा ही बालक का मार्गदर्शन होता है, परन्तु हम शिक्षा को विद्यालय की चारदीवारी के अन्दर चलने वाली प्रक्रिया ही नहीं मानते वरन् इसे समाज में अनवरत चलने वाली प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करें। भारत में शिक्षा का अर्थ ज्ञान से लगाया जाता है। गाँधी जी के अनुसार शिक्षा का तात्पर्य व्यक्ति के शरीर, मन और आत्मा के समुचित विकास से है।

6.3.3 मनोविज्ञान का अर्थ (Meaning of Psychology)

मनोविज्ञान वह विज्ञान है जो शिक्षा की समस्याओं का विवेचन, विश्लेषण एवं समाधान करता है। शिक्षा, मनोविज्ञान से कभी पृथक नहीं रही है। मनोविज्ञान चाहे दर्शन के रूप में रहा हो, उसने शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति का विकास करने में सहायता की है। मनोविज्ञान, सब प्रकार की ज्ञानात्मक क्रियाओं जैसे-स्मरण, कल्पना, संवेदना आदि, संवेगात्मक क्रियाओं जैसे-रोना, हँसना, क्रुद्ध होना आदि और क्रियात्मक क्रियाओं जैसे- बोलना, चलना, फिरना आदि का अध्ययन करता है।

वाटसन के अनुसार- मनोविज्ञान, व्यवहार का निश्चित विज्ञान है।

वुडवर्थ के अनुसार- मनोविज्ञान, वातावरण के सम्बन्ध में व्यक्तियों की क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।

अपनी उन्नति जानिए (Check Your Progress)

प्र. 1 मानव व्यवहार का अध्ययन करने वाला विज्ञान है।?

(अ) समाज विज्ञान (ब) राजनीति विज्ञान (स)मनोविज्ञान (द) जीव विज्ञान

प्र. 2 ''शिक्षा का तात्पर्य व्यक्ति के शरीर, मन और आत्मा के समुचित विकास से है'' यह परिभाषा किस विद्वान की है?

प्र. 3 बोलना, चलना, फिरना आदि किस प्रकार की क्रियाएँ है ?

(अ) क्रियात्मक (ब) ज्ञानात्मक (स) संवेगात्मक (द) कोई नहीं।

प्र. 4 ''मनोविज्ञान, वातावरण के सम्बन्ध में व्यक्तियों की क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।'' यह परिभाषा किस विद्वान की है?

(अ) वाटसन (ब) स्किनर (स) मन (द) वुडवर्थ

भाग दो

6.4 पाठ्यचर्या संरचना के आधार के रूप में मनोविज्ञान

(Psychology as a force of Curriculum Construction)

शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति ने शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षण पद्धति, पाठ्यचर्या, शिक्षा के संगठन, अनुशासन की अवधारणा, शिक्षक की भूमिका आदि सभी क्षेत्रों को नया आयाम प्रदान किया है। मनोविज्ञान के विकास ने पाठयचर्या संरचना को कई प्रकार से प्रभावित किया है। पाठयचर्या की पृष्ठभूमि में मनोवैज्ञानिक दृष्टि सर्वत्र व्याप्त रहती है फिर भी इसके पाठयचर्या निर्माण के मुख्य आधारक निम्ननिलिखित हैं -

6.4.1 परिपक्वता एवं विकास (Maturity and Development)-

मनुष्य की आयु में वृद्धि के साथ समुचित रूप से होने वाले शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन को मनोविज्ञान में परिपक्वता की संज्ञा दी जाती है। बालक का शारीरिक विकास शिक्षाक्रम को निश्चित रूप से प्रभावित करता है। अतः अधिगम की स्थितियों में पाठ्यचर्या का चयन बालक की विकास की अवस्थाओं की दृष्टि से किया जाना चाहिए। मनोविज्ञान शिक्षक को अपने छात्रों को समझने में सहायता प्रदान करता है साथ ही यह भी बताता है कि शिक्षक को छात्रों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। शिक्षक का व्यवहार पक्षपात रहित हो। उसमें सहनशीलता, धैर्य व अर्जनात्मक शक्ति होनी चाहिए। विकास की विशेषताएं समझने में सहायता देता है।

प्रत्येक छात्र विकास की कुछ निश्चित अवस्थाओं से गुजरता है जैसे शैशवास्था (0-2 वर्ष) बाल्यावस्था (3-12 वर्ष) किशोरावस्था (13-18 वर्ष) प्रौढ़ावस्था (18-21 वर्ष)। विकास की दृष्टि से इन अवस्थाओं की विशिष्ट विशेषताएं होती हैं। यदि शिक्षक इन विभिन्न अवस्थाओं की विशेषताओं से परिचित होता है वह अपने छात्रों को भली प्रकार समझ सकता है और छात्रों को उसी प्रकार निर्देशन देकर उनको लक्ष्य प्राप्ति में सहायता कर सकता है।

6.4.2 व्यक्तिगत भिन्नता (Individual Differences)-

शिक्षा मनोविज्ञान, व्यक्तिगत भिन्नता का ज्ञान कराता है। संसार के कोई भी दो व्यक्ति बिल्कुल एक से नहीं होते। प्रत्येक व्यक्ति अपने में विशिष्ट व्यक्ति है। साथ ही व्यक्ति के अन्दर विभिन्न प्रकार की क्षमताओं के विभिन्न स्तर भी होते हैं । वर्तमान समय में विभिन्न आयु वर्ग के बालकों की आवश्यकताएँ भिन्न-2 होती हैं तथा इन बालकों के लिए अलग-2 पाठ्यक्रमों का ढंग उपयोग में लाया जा रहा है किन्तु एक ही आयु वर्ग में व्यक्तिगत भिन्नता के कारण पाठ्यक्रमों में विविधता की भी आवश्यकता है। एक कक्षा में शिक्षक को 30 से लेकर 50 छात्रों को पढ़ाना होता है जिनमें अत्यधिक व्यक्तिगत भिन्नता होती है। यदि शिक्षक को इस बात का ज्ञान हो जाए तो वह अपना शिक्षण सम्पूर्ण छात्रों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाला बना सकता है।

6.4.3 अभिरुचि (Interest)-

अभिरुचि का तात्पर्य किसी वस्तु या विषय के प्रति लगाव का होना है। बालक में जन्मजात अभिरुचियों की संख्या बहुत कम होती है। उनमें काव्यात्मक, कलात्मक एवं संगीत संबंधी अभिरुचियों के अतिरिक्त अधिकांश अभिरुचियाँ बालक वातावरण के माध्यम से अर्जित कर सकते हैं। इसके लिए पाठयचर्या के निर्माताओं को विविध अधिगम-अनभुवों के साथ-2 उचित अभिप्रेरकों, निर्देशनों तथा पुनर्बलन की व्यवस्थाओं की ओर भी ध्यान देना चाहिए। इसलिए पाठयचर्या निर्माण में रुचि के सिद्धांत का अपना विशेष महत्त्व है।

6.4.4 अभिप्रेरणा (Motivation)-

अभिप्रेरणा से प्राणी की अनुक्रिया की शक्ति में वृद्धि होती है। अभिप्रेरणा का शाब्दिक अर्थ किसी कार्य को करने का बोध होता है। अभिप्रेरणा से हमारा अभिप्राय केवल आन्तरिक उत्तेजनाओं से होता है, जिन पर हमारा व्यवहार आधारित होता है। इस अर्थ में बाह्य उत्तेजनाओं को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता है। स्किनर के अनुसार अभिप्रेरणा सीखने का राजमार्ग है। अतः अभिप्रेरणा बालक में सीखने के लिए उत्सुकता उत्पन्न करती है। वह उसमें एक ऐसी शक्ति जागृत करती है, जो उसे निर्धारित उद्देश्य सम्बन्धी लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर अग्रसर करती है। अभिप्रेरणा के माध्यम से बालक अपनी मानसिक योग्यताओं से कहीं अधिक उपलब्धि प्राप्त करते हैं। एक कुशल शिक्षक विद्यालय में अभिप्रेरणा का सकारात्मक प्रयोग करके बालकों को नवीन तथ्यों के विषय में रुचि उत्पन्न कर सकता है। तथा पाठ्यचर्या निर्माणकर्ताओं को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि निश्चित तथ्यों के पश्चात् अभिप्रेरणा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

6.4.5 अधिगम प्रक्रिया (Learning Process)-

अधिगम प्रक्रिया में पाठयचर्या नियोजकों के लिए के सैद्धान्तिक पक्ष की अपेक्षा इसका व्यावहारिक एवं शैक्षिक पक्ष अधिक महत्त्वपूर्ण है, मनोविज्ञान के विकास के साथ ही साथ अधिगम- मनोविज्ञान भी बहुत विकसित हो चुका है। अधिगम का क्षेत्र–सिद्धन्त उद्दीपन एवं

अनुक्रिया के बीच होने वाली प्रक्रियाओं की संकल्पना पर आधारित है। अतः पाठयचर्या नियोजकों एवं शिक्षकों को S –R संबंध स्थापित करते समय उनकी मध्यवर्ती क्रियाओं प्रतिक्रियाओं के प्रति भी सजग रहने की आवश्यकता होती है। **स्किनर के** अनुसार, अधिगम, व्यवहार में उत्तरोत्तर सामंजस्य की प्रक्रिया है।

अधिगम, शिक्षण का मूल आधार है। शिक्षा की समस्त प्रक्रिया इसी पर निर्भर करती है। अधिगम की मानव जीवन का पर्याय माना जाता है। इसी क्रिया द्वारा मानव नित्य नवीन अनुभव प्राप्त करता है और उन अनुभवों का प्रयोग करके भविष्य को सुखमय बनाने का प्रयास करता है।

6.4.6 अधिगम स्थानान्तरण (Transfer of Learning)-

अधिगम या प्रशिक्षण के स्थानांतरण से तात्पर्य एक परिस्थिति या क्षेत्र में अर्जित ज्ञान, प्रशिक्षण और आदतों का दूसरी परिस्थिति या क्षेत्र में उपयोग किया जाना है। अधिगम के स्थानांतरण को ध्यान में रखते हुए पाठयचर्या नियोजकों को पाठयचर्या का निर्धारण छात्रों की आवश्यकता के अनुकूल होना चाहिए। पाठयचर्या के माध्यम से भावी जीवन की आवश्यकताओं का भी परिचय कराया जाना चाहिए। अधिगम को प्रभावशील तथा सरल बनाने का दायित्व शिक्षक का है।

अपनी उन्नति जांचिए (Check Your Progress)

प्र.1- बाल्यावस्था में छात्र की आयु निर्धारित है।

(अ) 0-2 वर्ष (ब) 3-12 वर्ष (स)13-18 वर्ष (द) इनमें से कोई नहीं

प्र.2- अधिगम, व्यवहार में उत्तरोत्तर सामंजस्य की प्रक्रिया है। यह कथन किसका है-

(अ) पियाजे का (ब) स्किनर का (स) मन का (द) सी.वी. गुड का

प्र.3- बालक में जन्मजात होती है।

(अ) काव्यात्मक प्रतिभा (ब) कलात्मक प्रतिभा (स) संगीत प्रतिभा (द) अभिरुचि

प्र.4- अधिगम या प्रशिक्षण के स्थानांतरण से क्या तात्पर्य है?

भाग-3 - व्यवहारात्मक एवं संज्ञानात्मक अधिगम सिद्धान्तों के मनोवैज्ञानिक निहितार्थ -

6.5.1 व्यवहारात्मक अधिगम के सिद्धान्त (Principles of Learning Behavioral Theories)-

प्रारम्भिक व्यवहारवाद में वाट्सन को ही प्रमुख माना जाता है तथा उत्तरकालीन व्यवहारवाद में हल, गथरी, स्किन्नर, टालमैन, बैन्डुरा आदि का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। यद्यपि उत्तरकालीन व्यवहारवादियों ने वाट्सन द्वारा निर्मित ढाँचे को सामान्य रूप से स्वीकार किया, परन्तु उन्होंने मनोविज्ञान पद्धति को उत्तम बनाने के लिए मौलिक प्रयास किये। प्रारंभिक उत्तरकालीन व्यवहारवादियों में कुछ बिंदुओं पर मत विभिन्नता दिखाई देती है।

(1) कार्यक्षेत्र की दृष्टि से आरंभिक व्यवहारवाद का रूप विस्तृत रहा इसमें कई प्रकार के सम्प्रत्यय- जैसे संवेग, स्मृति, चिंतन, सीखना आदि के अध्ययन पर बल दिया गया। जबकि उत्तरकालीन व्यवहारवाद अधिक बिंदु केन्द्रित था अतः सीखने पर अधिक बल दिया गया।

(2) प्रारम्भिक व्यवहारवाद अन्तर्ज्ञान के समर्थन पर आधारित था जबकि उत्तरकालीन व्यवहारवादी विचारधारा और सिद्धान्त प्रयोगात्मक समर्थन पर आधारित हैं।

(3) प्रारम्भिक व्यवहारवाद में व्यवहार परिमार्जन हेतु किसी प्रविधि विषेष का वर्णन वाट्सन द्वारा नहीं किया गया केवल कुछ सामान्य विषयों पर बल डाला गया, किन्तु उत्तरकालीन व्यवहारवादियों द्वारा कईं प्रविधियों का वर्णन किया गया, जिससे आदत निर्माण और व्यवहार को उत्तम बनाने में सफलता मिली हैं।

व्यवहारवाद की मान्यतायें- व्यवहारवाद की कुछ प्रमुख मान्यतायें हैं।

(क) छोटे-छोटे प्रक्रिया तत्वों द्वारा व्यवहार का निर्माण होता है तथा वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक विधियों के माध्यम से इन तत्वों का पता लगाया जा सकता है।

(ख) व्यवहारवाद यह भी मानता है कि व्यवहार रचना मूलतः ग्रन्थियों के स्रावण से (glandulal secretion) और पेषीय गति (musculal Movement) द्वारा होती है।

(ग) व्यवहारवाद की तृतीय मान्यता है कि उद्दीपक जितना तीव्रता से प्राप्त होगा अनुक्रिया उतनी अविलम्ब होगी। अर्थात् प्रत्येक अनुक्रिया के लिए पर्याप्त उद्दीपन आवश्यक है।

(घ) व्यवहारवाद चेतना को एक संकल्पना मानता है और यदि चेतना है भी तो इसका वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं, यह कहकर चेतना का खण्डन करता। यह अपने व्यवहार-विज्ञान को मनोविज्ञान कहते हुए मनोवाद का विरोध करता है।

(ङ) छोटे-छोटे प्रक्रिया तत्वों द्वारा व्यवहार का निर्माण होता है तथा वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक विधियों के माध्यम से इन तत्वों का पता लगाया जा सकता है।

अधिगम, जीवनपर्यन्त चलने वाली क्रिया है। व्यवहार में कोई भी अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन ही अधिगम कहलाता है। व्यवहार में परिवर्तन अभ्यास या अनुभूति के परिणामस्वरूप ही

होता है। थकान, परिपक्वता दवा खाने, भूख, नींद, प्यास अभिप्रेरणात्मक स्थिति में उतार-चढाव आदि के कारण हुए परिवर्तन को सीखना नहीं कहा जा सकता है। इस सिद्धान्त को अंगीकार करने वाले मनोवैज्ञानिकों का मत है कि उत्तेजक तथा उसके प्रभाव से उत्पन्न अनुक्रिया के बीच जो सम्बन्ध स्थापित होता है, उसका आधार पुनर्बलन होता है। इससे उत्तेजना एवं अनुक्रिया के बीच में स्थायी बन्धन बन जाता है। स्नायु तन्त्र (Nervous System) में यही सम्बन्ध व्यवहार परिवर्तन या नवीन व्यवहार सीखने में सहायक होता है।

इस प्रकार उत्तेजक तथा अनुक्रिया के बीच क्रिया-प्रतिक्रिया होती है जिसके फलस्वरूप व्यक्ति नये व्यवहार को सीखता है। इस सिद्धान्त को मानने वाले मनोवैज्ञानिकों ने अनेक प्रयोंगो द्वारा उन कारकों को खोज निकाला है जिसके कारण सीखने की प्रक्रिया पूर्ण होती है। इस सिद्धान्त का सूत्र है- S R, यहाँ पर S =Stimulus, R= Response है। अधिगम के सिद्धान्त अधोलिखित है -

1. **थार्नडाइक का अधिगम सिद्धान्त(Thorndike's theory of Learning)** -

ई. एल. थार्नडाइक ने सन् 1913 में प्रकाशित होने वाली अपनी पुस्तक शिक्षामनोविज्ञान(Educational Psychology) में अधिगम के एक नवीन सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इसे 'प्रयास व त्रुटि' का सिद्धान्त भी कहते हैं। ई0एल0 थार्नडाइक (E.L.Thorndike) ने प्रयत्न व भूल के इस सिद्धान्त के बारे में बताते हुए कहा, कि जब व्यक्ति कोई कार्य सीखता है, तब उसके सामने एक विशेष स्थिति या उद्दीपक (Stimulus) होता है, जो उसे विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया करने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार एक विशिष्ट उद्दीपक का एक विशिष्ट अनुक्रिया (response) से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है, तो उसे उद्दीपक अनुक्रिया सम्बन्ध कहते हैं।

थार्नडाइक का प्रयोग-

थार्नडाइक एक पशु मनोवैज्ञानिक थे, इन्होंने बिल्ली, चूहे, मुर्गी आदि पर प्रयोग करके यह निष्कर्ष निकाला कि पशु-पक्षी व बच्चे प्रयत्न व भूल द्वारा सीखते हैं। अपने एक प्रयोग में इन्होंने एक भूखी बिल्ली को पिंजड़े में बन्द कर दिया और पिंजड़े के बाहर भोज्य सामग्री रख दी गई। बिल्ली के लिए भोजन उद्दीपक था। उद्दीपक के कारण उनमें प्रतिक्रिया आरम्भ हुई। बिल्ली ने बाहर निकलकर भोजन प्राप्त करने के लिए कई प्रयत्न किये और पिंजड़े के चारों ओर घूमकर कई पंजे मारे और प्रयत्न करते-करते अचानक उस तार को खींच लिया। जिससे पिंजड़े का दरवाजा खुलता था। दोबारा फिर बन्द करने पर बाहर उसे आने के लिए पहले से कम समय में सफलता मिल गई। तीसरे और चैथे

प्रयास में और भी कम प्रयत्नों में सफलता मिल गई और एक परिस्थिति आई, जब एक बार में ही वो दरवाजा खोलकर बाहर आने लगी।

इसी प्रकार मैक्डूगल मनोवैज्ञानिक ने भी कई प्रयोग किया और यह सिद्ध कर दिया, कि पशु या मनुष्य जितनी बार प्रयत्न करता है, उतनी ही उसकी भूले कम होती जाती है और वह सफल क्रिया करना सीख लेता है।

2 **पावलव का अनुकूलित अनुक्रिया का सिद्धान्त-**

शास्त्रीय अनुबंधन सिद्धान्त का प्रतिपादन सन् 1904 ई. में रूसी शरीरक्रिया वैज्ञानिक आई.पी. पावलव ने किया जिनका जन्म 1849 ई. में रशीया में हुआ। पाचन क्रिया के ग्रंथीय स्नायविक कारकों पर शोध के लिए उन्हें नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पावलव अनुबंधन का यह सिद्धान्त व्यवहारवाद की ही देन है यह सिद्धान्त शरीर विज्ञान से जुड़ा हुआ है।

(क) **अनुबंधन (Conditioning)** - सामान्य रूप से यदि कहें तो व्यवहार को सीख लेना ही अनुबंधन हैं। अनुबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा उद्दीपक और अनुक्रिया के बीच एक साहचर्य स्थापित हो जाता है।

(ख) **साहचर्य-** साहचर्य का सामान्यार्थ है साथ-साथ, अर्थात् एक के होने पर दूसरे की निश्चितता का पता चले- जैसे - जहाँ धुआँ होगा वहाँ आग होगी, इस उदाहरण में धुआँ और आग का साहचर्य दिख रहा है।

मनोविज्ञान की भाषा में यदि उद्दीपक और अनुक्रिया का साहचर्य स्थापित है तो उद्दीपक के समक्ष होने पर प्राणी अनुक्रिया अवष्य करेगा। अर्थात् ऐसा नहीं होगा कि उद्दीपक है और अनुक्रिया न हो। या उद्दीपक न हो और अनुक्रिया हो जाय।

(ग) **उद्दीपक**- एक, वस्तु, परिस्थिति, उत्तेजना जो कि प्राणी की अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी है उद्दीपक कहलाती है। यह दो प्रकार का हो सकता है।

- प्राकृतिक उद्दीपक (Natural stimulus) - वह उद्दीपक जो बिना किसी पूर्व (परीक्षण) के प्राणी में अनुक्रिया उत्पन्न करता है, प्राकृतिक उद्दीपक कहलाता है।
- कृत्रिम उद्दीपक (Artificial stimulus)- वह उद्दीपक जो यदि कुछ समय तक प्राकृतिक उद्दीपक से पूर्व या बाद में दिया जाता है तो उसमें भी प्राकृतिक उद्दीपक के गुण आ जाते हैं और प्राणी में अनुक्रिया उत्पन्न करने में सक्षम होता है, कृत्रिम उद्दीपक कहलाता है।

(घ) **अनुक्रिया** - उद्दीपक को देखकर प्राणी में उत्पन्न व्यवहार को अनुक्रिया कहा जा सकता है।

- प्राकृतिक अनुक्रिया (NaturalResponse) बिना प्रशिक्षण के प्राकृतिक उद्दीपक को देखकर जो अनुक्रिया होती है, प्राकृतिक अनुक्रिया कहलाती है। जैसे भोजन को देखकर लार बहना।
- अनुबंधित अनुक्रिया- यह सीखी गयी एक सहज क्रिया है। जो कृत्रिम उद्दीपक और स्वाभाविक उद्दीपक के साहचर्य स्थापित होने के बाद व्यक्त होती है। इसे अनुबंधित सहज क्रिया इसलिए कहा जाता है, कि इसका घटित होना अनुबंधित उद्दीपक पर निर्भर करता है।

शास्त्रीय अनुबंधन का शैक्षिक महत्व-

(क) **संवेगात्मक समन्वय में सहायता** - यह सिद्धान्त मानसिक असामान्यता(Mental Abnormality) और संवेगात्मक अस्थिरता (Emotional Instability) का उपचार करने में सहायता देता है। इस सिद्धान्त के द्वारा संवेगों में एकता बनाई जा सकती है।

(ख) **अभिवृत्तियों का विकास** - छात्रों के जीवन और सीखने के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करना अति आवश्यक है। इस उद्देश्य की प्राप्ति अनुबंधन के इस सिद्धान्त द्वारा की जा सकती है। इस प्रकार का दृष्टिकोण छात्रों को समस्या समाधान में मदद करता है।

(ग) **भाषा सीखने में सहायक** - भाषा अधिगम के लिए अनुबंधन के इस सिद्धान्त की मदद से साहचर्य विधि का प्रयोग करके भाषा का ज्ञान या प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है।

(घ) **बुरी आदतों की समाप्ति** - इस सिद्धान्त के अनुप्रयोग से चोरी करना, झूठ बोलना आदि बुरी आदतों को दंड से जोड़कर समाप्त किया जा सकता है।

(ङ) **अच्छी आदतों का विकास** - इस सिद्धान्त में साहचर्य पर अधिक बल दिया जाता है। जिसकी सहायता से अनुशासनप्रियता, स्वच्छता, बड़ों का सम्मान आदि अच्छी आदतों का विकास किया जा सकता है।

(च) **समायोजन में सहायता** - इस सिद्धान्त के द्वारा विद्यार्थियों को समायोजन करने में सहायता की जा सकती है।

(छ) **प्रभावशाली अधिगम**- किसी क्रिया को बार-बार दोहराने से अधिगम प्रभावशाली बनता है। कई विषयों का अभ्यास और पुनरावृत्ति आवष्यक होती है, जैसे- गणित, विज्ञान, इतिहास, भूगोल

आदि का अधिगम प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है। हिन्दी भाषा की एक उक्ति में इस सिद्धान्त की झलक दिखती है- ''करत करत अभ्यास से जडमति होत सुजान। या जिस प्रकार गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि कठिनतम कार्य भी अभ्यास से साधा जा सकता है। अभ्यासेन तु कौन्तेय--।

(ज) **संस्कृति विकास में सहायक**- बच्चे छोटी उम्र में बहुत कुछ सीख लेते है अतः हमारी संस्कृति और संस्कारों को भी इस सिद्धान्त के माध्यम से बच्चों को सिखाकर उनका विकास किया जा सकता है।

(झ) **अनुशासन निर्माण**- विद्यालयों में सामूहिक रूप से अनुशासन निर्माण करने में अनुबंधन के इस सिद्धान्त की सहायता ली जा सकती है।

3 स्किनर का क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का सिद्धान्त-

क्रियाप्रसूत अनुबंधन सिद्धान्त के प्रतिपादक बी.एफ.स्किन्नर महोदय का जन्म 1904 में हुआ। 1931 में उन्होंने पी. एच. डी. की उपाधि हारवर्ड विश्वविद्यालय से प्राप्त की। 1945 में उनको इण्डियाना विश्वविद्यालय में मनोविज्ञान विभाग के अध्यक्ष के रूप में नियुक्ति मिली। इसी दशक में स्किन्नर की रूचि सीखने के सिद्धान्त प्रतिपादन में थी। इन्होंने चूहों पर कबूतरों पर कईं प्रयोग किये। उनकी कईं कृतियाँ प्रकाशित हुईं जैसे-(The Behaviovr of organism, science and human, Behaviour, verbal Behaviour, Beyond Freedom and Dignity, etc.) स्किन्नर द्वारा प्रतिपादित अनुबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति मुक्त अनुक्रिया परिस्थिति में रहकर किसी व्यवहार को सीखता है।

4 हल का प्रबलन सिद्धान्त-

हल का प्रणोद न्यूनीकरण सिद्धान्त/प्रबलन का सिद्धान्त/आवश्यकता ह्रास का सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है। हल ने अधिगम की व्याख्या हेतु उद्दीपक अनुक्रिया के बदले उद्दीपक-प्राणी-अनुक्रियाय सूत्र को विकसित किया। जैसे- S → R

S-O-R

उन्होंने थार्नडाइक के प्रभाव के नियम और पावलव के शास्त्रीय एवं स्किन्नर के क्रियाप्रसूत अनुबंधन का समर्थन किया उनका मानना था कि आवश्यकता ह्रास ही प्रबलन है जो कि अधिगम के लिए महत्वपूर्ण है। मनुष्य की कुछ जैविक आवश्यकतायें हैं, जिनको पूरा करने के लिए प्रयास करता है। आवश्यकतापूर्ति के बाद वह संतुष्ट हो जाता है। और इसी प्रकार भविष्य में भी ऐसे प्रयास करना सीख लेता है। आवश्यकता को ही अन्तर्नोद (Drive) कहा जाता है, और इस सिद्धान्त को प्रणोद (अन्तर्नोद) या आवश्यकता ह्रास का सिद्धान्त कहा जाता है।

5 टालमैन का प्रभावकारी सिद्धान्त-

इस सिद्धान्त को सोद्देश्य व्यवहारवाद इसलिए कहा गया कि टोलमैन का विश्वास था कि प्राणी का प्रत्येक व्यवहार लक्ष्याधारित होता है, अर्थात् उसका एक उद्देश्य होता है। इस सिद्धान्त को अधिगम का संज्ञानात्मक सिद्धान्त तथा चिह्न गेस्टाल्ट सिद्धान्त भी कहते हैं। उनका मत है कि बार-बार के अनुभव से प्राणी अधिगम परिस्थिति की विभिन्न वस्तुओं के मध्य सम्बन्ध समझता जाता है। परिस्थिति की प्रत्येक वस्तु एक चिह्न है जो अगली वस्तु की प्रत्याशा (Expectaney) उत्पन्न करती है। यदि यह प्रत्याशा पूर्ण हो जाती है तो चिह्न (उस वस्तु) और चिह्न सूचित (अगली वस्तु) के मध्य सम्बन्ध उत्पन्न हो जाता है और प्रत्येक वस्तु अगली वस्तु के लिए चिह्न बनती जाती है। इस प्रकार प्राणी सम्पूर्ण अधिगम परिस्थिति की सभी (सूचित) वस्तुओं के सम्बन्धों को सीख कर एक संज्ञानात्मक नक्शा बना लेता है कि कौन वस्तु हमें किस वस्तु तक पहुँचाती है।

टोलमैन का सिद्धान्त(S-R) सिद्धान्त न होकर(S-S) सिद्धान्त है अर्थात् उद्दीपन-उद्दीपन सम्बन्ध है न कि उद्दीपन अनुक्रिया सम्बन्ध।

6 बण्डुरा का सामाजिक अधिगम सिद्धान्त-

बन्डुरा के अनुसार मानव व्यवहार व्यवहारात्मक निर्धारकों, संज्ञानात्मक निर्धारकों और पर्यावरणीय निर्धारकों की एक दूसरे पर आश्रित अन्तःक्रिया का परिणाम होता है। उन्होंने सीखने के दो प्रमुख स्रोत बताये हैं -

1. **अनुक्रिया परिणाम**- व्यक्ति द्वारा की गयी अनुक्रिया के कुछ नकारात्मक व सकारात्मक परिणाम होते हैं। जो उसमें तुष्टि या खीज का भाव उत्पन्न करता है। जिनके द्वारा व्यक्ति अपने भावी व्यवहार के लिए सीखता है।

2. **अनुरूपन**- व्यक्ति जब अन्य व्यक्तियों को व्यवहार करते हुए देखता है। और उसे भविष्य में उपयोग के लिए धारण कर लेता है। बण्डुराने इस सिद्धान्त में चार प्रक्रियाओं का उल्लेख किया है जिनके माध्यम से व्यक्ति वह व्यवहार सीख लेता है।

- **ध्यान** -(Attention)- उस व्यक्ति के व्यवहार का ध्यानपूर्वक प्रेक्षण।
- **धारण**-(Rettention)- उस व्यवहार का तद्वत् स्मरण करना।
- **पेशीय उत्पादन**(Motor Pooduction)- धारण किये हुए व्यवहार की क्रिया रूप में अभिव्यक्ति करना।
- **अभिप्रेरणा**-(Motivation)- अधिगम को सुदृढ करने के लिए अभिप्रेरक आवष्यक है।

7 गथरी का सामीप्य सम्बन्धवाद का सिद्धान्त-

गथरी का मानना था कि उद्दीपन और अनुक्रिया का सम्बन्ध मात्र समीपता के आधार पर स्थापित होता है, और एक ही बार की समीपता उद्दीपक और अनुक्रिया को अधिकतम सम्बन्धित कर देती है। उन्होंने उद्दीपक अनुक्रिया के साहचर्य को अधिगम का आधार माना है। गथरी ने उद्दीपक अनुक्रिया के सम्बन्ध में प्रबलन, प्रणोदन, परिस्थिति की पुनरावृत्ति को नहीं माना। उनके अनुसार अधिगम हेतु एक ही आवश्यक शर्त है - उद्दीपन और अनुक्रिया की समीपता।

6.5.2 अधिगम के संज्ञानात्मक क्षेत्र के सिद्धान्त (Principles of Learning Cognitive Theories) –

संज्ञान शब्द की व्युत्पत्ति सम् उपसर्ग ज्ञा धातु से हुई है जिसका अर्थ है जानना अथवा अवबोधन करना। संज्ञानात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत इस बात की विवेचना की जाती है कि व्यक्तियों में स्वयं के प्रति तथा अपने वातावरण के प्रति विवेक किस प्रकार विकसित होता है और वे अपने वातावरण के वरिप्रेक्ष्य में कैसे कार्य करते हैं।

संज्ञानात्मक सिद्धान्तवादियों के अनुसार अध्यापन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा विद्यार्थी में विवेक या अन्तर्दृष्टि का विकास होता है। कक्षा सम्बन्धी अनुभवों को विद्यार्थी के व्यक्तिगत लक्ष्यों से सम्बन्धित कर दिया जाता है।

संज्ञानात्मक उपागम अधिगम में बोध को बल व महत्व दिया जाता है। इस उपागम के अनुसार अधिगम एक जटिल प्रक्रिया है जिसके फलस्वरुप संज्ञानात्मक संरचना में परिवर्तन आ जाते हैं अर्थात हम कह सकते है कि अधिगम संज्ञानात्मक संरचना में आया परिवर्तन है। सामान्य रुप से ये परिवर्तन तीन प्रकार की प्रक्रियाओं द्वारा आते हैं। ये प्रक्रियाएँ हैं:-

(1)विभेदीकरण

(2)व्यापकीकरण

(3)पुनर्संरचनीकरण

अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा अनुभूति या अभ्यास के फलस्वरूप व्यवहार में अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन होता है। इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करने वाले मनोवैज्ञानिकों का मत है कि उत्तेजक तथा अनुक्रिया के बीच केवल यन्त्रवत सम्बन्ध स्थापित नहीं होते बल्कि इन दोनों के बीच व्यक्ति की वैयक्तिता, उसकी इच्छाएँ, भावनाएँ, क्षमताएँ, अभिरुचियाँ, अभिवृत्तियाँ, मूल्य, पूर्व

अनुभव एवं प्रशिक्षण आदि अनेक तत्त्व हैं, जो सीखने की क्रिया को प्रभावित करते हैं। यही एक कारण है कि एक ही उत्तेजक की स्थिति पर भिन्न-भिन्न व्यक्ति अलग-अलग तरह से अनुक्रिया करते हैं। इस सिद्धान्त को अधोलिखित सूत्र से जाना जा सकता है-

S R

यहाँ पर "O" → Stand for Organism

"S" → Stand for Stimulus

"R" → Stand for Response

इस सिद्धान्त के प्रतिपादकों का मत है कि उत्तेजक तथा अनुक्रिया के बीच व्यक्ति का मस्तिष्क नियन्त्रण का कार्य करता है। वह विभिन्न प्रकार की क्रियाओं तथा व्यवहारों को नियंत्रित करता है, निर्देशित करता है तथा उनमें परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। इस सिद्धान्त का समर्थन करने वाले मनोवैज्ञानिक अधिगमकर्ता को एक गत्यात्मक शक्ति के रूप में मानते हैं, जो वातावरण से क्रिया-प्रतिक्रिया करके सीखता है। अधिगम के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त अधोलिखित हैं-

1 **अधिगम के सूझ का सिद्धान्त-**

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक : वर्दिमर , कोफ्का , कोहलर आदि मनोवैज्ञानिक हैं। इस सिद्धान्त के प्रयोगकर्ता: कोहलर हैं। उन्होंने वनमानुष/सुल्तान पर अपना प्रयोग किया। उनके सहयोग कर्ता कोफ्का थे। इसका प्रतिपादन सन् 1912 में किया गया। इसे संज्ञानात्मक क्षेत्र सिद्धांत भी कहा जाता है क्योंकि इन सिद्धांतों में संज्ञान अथवा प्रत्यक्षीकरण को विशेष महत्व प्रदान दिया जाता है। इन्हें गेस्टाल्ट सिद्धांत भी कहा जाता है।

गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के अनुसार जब हम वातावरण में किसी वस्तु का प्रत्यक्ष करते हैं तो हम उसकी आकृति, प्रतिमान और विन्यास के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं अर्थात उसके नवीन प्रतिमानों को देखकर उनको संगठित करते हैं, जिससे हमें एक सार्थक समग्रता का ज्ञान होता है।

गेस्टाल्ट शब्द जर्मन भाषा का है जिसका अर्थ 'समग्रता' अथवा 'संपूर्ण' है। इस सिद्धांत के प्रतिपादक वर्दिमर , कोफ्का और कोहलर को माना जाता है। अंतर्दृष्टि सिद्धांत की व्याख्या कोहलर ने अपनी पुस्तक 'गेस्टाल्ट साइकोलोजी' सन् 1959 में की है। गेस्टाल्ट सिद्धांत के अनुसार सीखना प्रयास व त्रुटि न होकर सूझ के द्वारा होता होता है। सूझ का अभिप्राय अचानक उत्पन्न होने वाले एक ऐसे विचार से है जो किसी का समाधान कर दे, सूझ द्वारा सीखने के अन्तर्गत प्राणी परिस्थितियों का भली प्रकार से अवलोकन करता हैं।

तत् पश्चात् अपनी प्रतिक्रिया देता हैं। सूझ द्वारा सीखने के लिए बुद्धि की आवश्यकता होती है और इस प्रकार के के अधिगम में मस्तिष्क का सर्वाधिक प्रयोग होता हैं।

कोहलर का प्रयोग

कोहलर ने एक पिंजरे में सुल्तान नामक चिंपाजी को बंद कर दिया। पिंजरे में दो छड़े इस प्रकार रखी गई कि उन्हें एक दूसरे में फंसाकर लंबा बनाया जा सकता था और पिंजरे के बाहर केले इधर-उधर रखे गए थे। चिंपाजी केलों तक पहुंच नहीं सकता था। केलों को देखकर चिंपाजी उन्हें लेने का प्रयास करने लगा किंतु बिना छडों की सहायता से उन्हें प्राप्त करना कठिन था। यकायक चिंपाजी की दृष्टि छडों पर गई और उसने केलों और छडों के मध्य संबंध स्थापित कर लिया। उसने छडों को उठाया अचानक दोनों छडों को उसने एक दूसरे में फंसाया और उन्हें लंबा कर लिया तथा उन छड़ियों की सहायता से केलों को अपनी ओर खींच कर प्राप्त कर लिया।

इस प्रकार कोहलर ने चिंपाजी पर अनेक प्रयोग किए और निष्कर्ष निकाला कि जीव संपूर्ण वातावरण का प्रत्यक्षीकरण करता है और इसके आधार पर उनमें सूझ उत्पन्न होती है, इससे वह अपनी समस्या का समाधान करना सीख लेता है अर्थात जब व्यक्ति के सामने जब कोई समस्या आती है तो उस समस्या का समाधान करने के लिए व्यक्ति के मस्तिष्क में एक नया विचार आता है जिसके आधार पर व्यक्ति अपनी समस्या का समाधान कर लेता है यह नया विचार ही सूझ अथवा अंतर्दृष्टि कहलाता है

2 पियाजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त-

शिक्षा जगत में पियाजे के कार्य तथा विचारों की ओर अत्यधिक ध्यान गया है यद्यपि उसने कार्य लगभग पचास वर्ष पहले किया था। पियाजे ने बच्चे के विकास और वृद्धि का अध्ययन किया। पियाजे का मुख्य उद्देश्य शैशवकाल से आरम्भ करते हुए प्रौढ़ावस्था तक मानव चिन्तन की प्रक्रिया को स्पष्ट करना है।

जीन पियाजे द्वारा प्रतिपादित संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्तों के द्वारा बुद्धि ज्ञान तथा विद्यार्थी और उसके पर्यावरण के सम्बन्ध को पुनःपरिभाषित कया गया हैं। बुद्धि एक जैविक तन्त्र की भाँति एक सतत् प्रक्रिया हैं। जिसमें संज्ञानात्मक संरचनाओं का निर्माण होता रहता है। वातावरण के साथ सतत रुप से अन्योन्य क्रिया करने के उद्देश्य से बच्चे को बुद्धि की आवश्यकता हैं। इसी भाँति ज्ञान भी बच्चे और उसके वातावरण के मध्य अन्योन्य क्रियाओं का प्रतिफल हैं। शैशवकाल तथा पूर्व बाल्यकाल में ज्ञान अत्यधिक रुप से व्यक्ति-सापेक्ष होता और पूर्व प्रौढ़ावस्था में जाते जाते यह

अधिक वस्तु-सापेक्ष या वस्तुपरक हो जाता हैं। पियाजे का विश्वास है कि अधिगम कुछ प्रक्रियाओं का प्रकार्य हैं। ये प्रक्रियाँ हैं :-

आत्मसात्करण / समावेशीकरण

समंजन

अनुकूलन तथा

साम्यधारण

पियाजे द्वारा प्रतिपादित इस संज्ञानात्मक उपागम को भली भान्ति समझने के लिए आइए इन सम्प्रत्ययों (प्रक्रियाओं) की विस्तार से विवेचना करें।

आत्मसात्करण / समावेशीकरण -

यह वह प्रक्रिया है जिसमें नए पदार्थों व अनुभवों का समावेश पूर्व विद्यमान संज्ञानात्मक योजना (स्कीमैटा) जो क्रियाओं का सुनिश्चित अनुक्रम हैं। ज्योंही किसी प्रक्रिया की मानसिक योजना विकसित होती है वह प्रत्येक नए पदार्थ तथा प्रत्येक अवस्थिति में लागू होती है। अनुभवों का समावेशन एक संज्ञानात्मक योजना के अनुक्रम के रुप में होता है। इसे समझने के लिए जैविक समावेशन का उदाहरण के माध्यम से उसका संज्ञानात्मक समावेशीकरण के साथ सादृश्यता स्थापित करें। जब हम सामान्य भोज्य पदार्थ से कोई भिन्न भोज्य पदार्थ खाते हैं, तो सम्भव है कि हम उसे पचा नहीं पाएं यदि पचा नहीं पाते हैं तो उससे पेट सम्बन्धी कोई न कोई विकार उत्पन्न हो सकता है। और यदि हम उसे पचा लेते हैं तो वह हमारे विद्यमान जैविक ढ़ांचे में समावेशित हो जाता है।

इस तरह भिन्न प्रकार का भोजन पचकर रक्त आदि में परिवर्तित हो जाता है। जब भोजन पचकर समावेशित हो जाता है, जो हमारे जैविक ढ़ाचे को शक्ति प्रदान करती है, जिसके फलस्वरुप किसी और भोज्य पदार्थ को पचाने की शक्ति का विकास हुआ है। इस सादृश्यता की सहायता से हम संज्ञानात्मक समावेशीकरण प्रक्रिया को समझ सकते हैं।

समंजन -

समावेशीकरण के साथ साथ समंजन की क्रिया भी होती रहती है जिसमें व्यक्ति का वातावरण के साथ आमना-सामना होता है। समंजन से तात्पर्य है कि आन्तरिक ढ़ाँचे का स्थिति विशेष की विशिष्टताओं अथवा गुणों के सामन्जस्य। उदाहरणार्थः जैविक संरचना के सादृश्य में यदि हम एक विशेष प्रकार का भोजन छोड़कर दूसरे प्रकार का भोजन खाने लग जाएं, तो कुछ समय पश्चात् शरीर की आन्तरिक संरचना का सामंजस्य नए प्रकार के भोजन के साथ हो जाता हैं। इस प्रक्रिया को समंजन कहते हैं। इसमें संदेह नहीं कि समंजन का होना समावेशीकरण नर निर्भर करता

है। अतः ये दोनों प्रक्रियाएँ साथ-साथ चलती हैं। समग्र विकास के परस्पर सम्बन्धित दो पक्ष हैं। जैसी जैविक ढांचे के संदर्भ मे हुई उसी प्रकार की प्रक्रिया संज्ञानात्मक ढांचे में भी होती रहती है। किसी व्यक्ति का एक भिन्न संस्कृति या सभ्यता के साथ समंजन उसी अवस्था में सम्भव है जब वह उस नई अवस्थिति के घटकों का समावेशीकरण का विकास होता रहता हैं। इस प्रक्रिया में व्यक्ति के आन्तरिक संज्ञानात्मक ढांचे का रूपान्तरण हो जाता है।

साम्यधारण -

संज्ञानात्मक विकास के संदर्भ में साम्यधारण वह स्व-नियामक प्रकिया है जिसमें व्यक्ति अपना स्थायित्व बनाए रखने के साथ वृद्धि विकास व परिवर्तन प्राप्त करता रहता है। यह शक्तियों का संतुलन न होकर एक ऐसी गतिज प्रक्रिया है जो सतत रूप से व्यवहार को नियमित करती रहती है। वस्तुतः यह समावेशीकरण और समंजन के मध्य संतुलन को बताती है। निरन्तर चलने वाली अन्योन्य क्रियाओं और निरन्तर हो रहे परिवर्तन के दौरान साम्यधारण के बिना संज्ञानात्मक विकास में निरन्तरता एवं सम्बद्धता का अभाव होगा और यह इसके विपरीत विखण्डित व अव्यवस्थित हो जाएगा। साम्यधारण नए और पुराने अनुभवों के मध्य संतुलन रखने वाला कार्य है। यह एक गतिज प्रक्रिया है जो असंगति को कम करती है।

अनुकूलन-

समावेशीकरण नई अनुभूतियों का विद्यमान मानसिक योजनाओं (स्कीमैटा) में समावेश करने में सहायता करता हैं जबकि समंजन के द्वारा पुराना स्कीमा (मानसिक योजनाएँ) नई अनुभूतियों के आधार पर परिवर्तित विस्तरित अथवा संयुक्त हो जाता है। इसके फलस्वरुप व्यक्ति को इसके नए वातावरण के साथ में समन्जित होने में सहायता मिलती है। नए वातावरण के प्रति समन्जित होने की प्रक्रिया अनुकूलन कहलाती हैं। यह अनुकूलीकरण भी स्थाई नहीं है। जैसे-जैसे व्यक्ति अपना कार्य क्षेत्र परिवर्तित करता है वह बहुत सी संषोधित अन्विति योजनाएँ (स्कीमैटा) विकसित कर लेता है। अनुकूलन जीव और उसके वातावरण के मध्य होने वाली अन्योन्य क्रियाओं का प्रतिफल है जो व्यक्ति को (जीव को) अपने वातावरण से प्राप्त अनुभवों को व्यवस्थित अथवा संगठित करने में सहायता करता है।

संज्ञानामक कार्यव्यापार के लक्षण वर्णन पर आधारित करते हुए (जो संगठन और अनुकूलन द्वारा निर्मित होता है) पियाजे महोदय बुद्धि की परिभाषा प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुसार बुद्धि कोई ऐसा स्थिर गुण नहीं है जो जीवन भर के लिए निश्चित कर दिया हो अपितु वातावरण के प्रति अनुकूलित करने वाली प्रक्रिया हैं। वातावरण की अवस्थितियों को अपने विद्यमान संज्ञानात्मक ढांचे में समावेशित कर लेता हैं अथवा अपने संज्ञानात्मक ढांचे को वातावरण की अपेक्षाओं के प्रति ढाल लेता है (समंजित कर लेता है) जो ये अपेक्षाएँ प्रभावित होती हैं। पहली अवस्था में व्यक्ति का

व्यवहार विद्यमान संज्ञानात्मक ढाँचो द्वारा निर्धारित होता हैं और दूसरी अवस्था में व्यक्ति के संज्ञानात्मक ढांचे वातावरण के अनुसार परिवर्तित हो जाते हैं। इसका परिणाम है अनुकूलित व्यवहार अथवा बुद्धि। अनुकूलीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने विद्यमान अवबोधन अधिगम व विवेक और नई परिस्थिति नए अनुभवों व समस्याओं के मध्य साम्यधारण अथवा संतुलन प्राप्त करता हैं।

मानव की अपने आप व वातावरण के बीच सन्तुलन करते हुए जीवित रहने की वृत्ति अनुकूलन कहलाती हैं। पियाजे महोदय साम्यधारणा को एक गतिज तथा वृद्धि उत्पादक प्रक्रिया के रुप में समझाते हैं इससे पहले कोई बच्चा अगली मानसिक अवस्था को प्राप्त कर सकने योग्य बने उस पूर्वोत्तर मानसिक अवस्था पर साम्यधारण प्राप्त कर लेना आवश्यक हैं। अतः किसी जीव का अनुकूलन उसकी वृद्धि उन समास्याओं और प्रक्रियाओं को स्पष्ट करते हैं जो बुद्धि अथवा ज्ञान के अनुकूलन में निहित हैं (पियाजे 1980)। में उन अवस्थाओं का विृस्तृत वर्णन किया है जिनके अन्तर्गत कोई विशेष संज्ञानात्मक प्रकार्य विकसित होता है उस समय का भी जिस पर कोई विशेष अवधारणा प्राप्त हो सकती हैं।

अपनी उन्नति जानिए (Check your Progress)

प्र. 1. प्रारम्भिक व्यवहारवाद का प्रमुख किसे माना जाता है?

(अ) वाट्सन (ब) हल (स) कोहलर (द) थार्नडाइक

प्र. 2. संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त सर्वप्रथम किसने दिया ?

(अ) कोहलर ने (ब) स्किनर ने (स) जीन पियाजे ने (द) बण्डुरा ने

प्र. 3. 'मानव व्यवहार व्यवहारात्मक निर्धारकों, संज्ञानात्मक निर्धारकों और पर्यावरणीय निर्धारकों की एक दूसरे पर आश्रित अन्तःक्रिया का परिणाम होता है' यह परिभाषा किस विद्वान की है?

प्र. 4. गेस्टाल्ट शब्द का क्या अर्थ है ?

6.6 सारांश Summary –

शिक्षा मानव की जन्मजात शक्तियों के विकास की प्रक्रिया है जो समाज में निरन्तर गतिशील है। मानव के विचारों में परिवर्तन एवं विकास करने तथा अपनी सभ्यता और संस्कृति से परिचित कराने का कार्य शिक्षा ही करती है। मनोविज्ञान में व्यक्ति के व्यवहार, मानसिक प्रक्रियाओं

एवं अनुभवों का अध्ययन शैक्षिक परिस्थितियों में किया जाता है। जिसका ध्येय शिक्षण की प्रभावशाली तकनीकों को विकसित करना तथा अधिगमकर्ता की योग्यताओं एवं अभिरूचियों का आंकलन करना है। यह शिक्षा के सभी पहलुओं जैसे शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षण विधि, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन, अनुशासन आदि को प्रभावित करता है। बिना मनोविज्ञान की सहायता के शिक्षा प्रक्रिया सुचारू रूप से नहीं चल सकती।

मनोविज्ञान के विकास ने पाठयचर्या संरचना को कई प्रकार से प्रभावित किया है। पाठयचर्या की पृष्ठभूमि में मनोवैज्ञानिक दृष्टि सर्वत्र व्याप्त रहती है फिर भी इसके पाठयचर्या निर्माण के मुख्य निर्धारक- परिपक्वता एवं विकास, व्यक्तिगत भिन्नता, अभिरुचि, अभिप्रेरणा, अधिगम प्रक्रिया, अधिगम स्थानान्तरण हैं। व्यवहारवादियों ने वाट्सन द्वारा निर्मित ढाँचे को सामान्य रूप से स्वीकार किया, परन्तु उन्होंने मनोविज्ञान पद्धति को उत्तम बनाने के लिए मौलिक प्रयास किये। प्रमुख सिद्धान्त - थार्नडाइक का अधिगम सिद्धान्त, पावलव का अनुकूलित अनुक्रिया का सिद्धान्त, स्किनर का क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का सिद्धान्त, हल का प्रबलन सिद्धान्त, टोलमैन का प्रभावकारी सिद्धान्त, बण्डुरा का सामाजिक अधिगम सिद्धान्त, गुथरी का सामीप्य सम्बन्धवाद का सिद्धान्त हैं। संज्ञानात्मक सिद्धान्तवादियों के अनुसार अध्यापन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा विद्यार्थी में विवेक या अन्तर्दृष्टि का विकास होता है। कक्षा सम्बन्धी अनुभवों को विद्यार्थी के व्यक्तिगत लक्ष्यों से सम्बन्धित कर दिया जाता है। अधिगम के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त अधिगम के सूझ का सिद्धान्त एवं जीन पियाजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है।

6.7. शब्दावली Glossary -

मनोविज्ञान - वातावरण के सम्बन्ध में व्यक्ति की क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।

व्यवहारात्मक – बालक के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जीवन जीने की सामाजिक प्रक्रिया है।

संज्ञानात्मक - संज्ञान शब्द की व्युत्पत्ति सम् उपसर्ग ज्ञा धातु से हुई है जिसका अर्थ है जानना अथवा अवबोधन करना।

पाठ्यचर्या निर्माण- औपचारिक एवं अनौपचारिक दृष्टि से बालक के सर्वाङ्गीण विकास हेतु तैयार की जाने वाली विषयवस्तु या सामग्री।

6.8. अभ्यास प्रश्नो के उत्तर:-

भाग-एक

उत्तर (1) मनोविज्ञान

(2) गाँधी जी

(3) क्रियात्मक

(4) वुडवर्थ

भाग-दो

उत्तर (1) 3-12 वर्ष

(2) स्किनर का

(3) अभिरुचि

(4) एक परिस्थिति या क्षेत्र में अर्जित ज्ञान, प्रशिक्षण और आदतों का दूसरी परिस्थिति या क्षेत्र में उपयोग किया जाना है।

भाग-तीन

उत्तर (1) वाट्सन

(2) जीन पियाजे ने

(3) बण्डुरा की

(4) समग्रता अथवा संपूर्णता

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. सिंह, अरुण कुमार, 2012 मनोविज्ञान के सम्प्रदाय एवं इतिहास, वाराणसी: मोतीलाल बनारसीदास,

2. सिंह, अरुण कुमार, 2012 उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, वाराणसी: मोतीलाल बनारसीदास,

3. ओबराय, डा. ए. सी.,2013, शिक्षण एवं अधिगम का मनोविज्ञान नई दिल्ली: आर्यबुकडिपो

4. अशरफ, अजीमुर्रहमान जावेद, 2009,मनोविज्ञान का संक्षिप्त इतिहास, वाराणसी: मोतीलाल बनारसीदास

5. पाण्डेय, के. पी.,2013, नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन

6. मंगल, एस. के.,2002, बाल अधिगम प्रक्रिया, नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो।

7. चौधरी, प्रो. प्रभादेवी,-सम्पादक, तिवारी, डा0 नीलाभ, जैन,डा0 नितिन भारतीय शिक्षा मनोविज्ञानम् ,भोपाल परिसर , राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान।

6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्यक्रम-

1. सिंह, अरुण कुमार, 2012 उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, वाराणसी: मोतीलाल बनारसीदास।

2. पाठक, पी. डी., 2013-14, शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।

3. ओबराय, डा. ए. सी.,2013, शिक्षण एवं अधिगम का मनोविज्ञान नई दिल्ली: आर्यबुकडिपो।

4. 5. पाण्डेय, के. पी.,2013, नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन।

6.11 निबंधात्मक प्रश्न – Essay type Question

प्र. 1 शिक्षा का अर्थ लिखिए। शिक्षा और मनोविज्ञान बालक को किस प्रकार प्रभावित करती है। विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्र. 2 मनोविज्ञान मानव व्यवहार का विज्ञान है। इस कथन की समीक्षा कीजिए।

प. 3 बालक की शिक्षा और विकास में वंशानुक्रम तथा वैयक्तिक भिन्नता के प्रभाव को विस्तार से लिखिए।

प्र. 4 व्यवहारात्मक अधिगम सिद्धान्तों के मनोवैज्ञानिक निहितार्थ को स्पष्ट करते हुए पावलव का अनुकूलित अनुक्रिया का सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन कीजिए।

प्र. 5 संज्ञानात्मक अधिगम सिद्धान्तों के मनोवैज्ञानिक निहितार्थ को स्पष्ट करते हुए जीन पियाजे के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन कीजिए।

इकाई –7 पाठयचर्या संरचना के समाजशास्त्रीय आधार

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 पाठयचर्या निर्माण के समाज शास्त्रीय आधार
7.4 पाठयचर्या विकास हेतु समाज एक बल
7.5 भारत में सामाजिक परिवर्तन
7.5.1 विज्ञान एवं तकनीकी के प्रभाव के संदर्भ में सामाजिक परिवर्तन
7.5.2 पाठयचर्या विकास पर सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव
7.6 सारांश
7.7 शब्दावली
7.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
7.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
7.11 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

शिक्षा जीवन पर्यंत चलने वाली प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार मे निरंतर परिवर्तन एवं परिमार्जन होता है। व्यक्ति के व्यवहार में यह परिवर्तन औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों माध्यमों से होता है। पाठयचर्या का संबंध शिक्षा के औपचारिक माध्यम से है। पाठयचर्या को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है। कनिंघम ने पाठयचर्या को कलाकार के हाथ में एक ऐसे साधन के रूप मे परिभाषित किया जिससे वह अपनी सामग्री(शिक्षार्थी) को अपने आदर्श(उद्देश्य) के अनुसार अपनी चित्रशाला(विद्यालय) में ढाल सके। डीवी के अनुसार "सीखने का विषय या पाठयचर्या , पदार्थों, विचारों और सिद्धांतों का चित्रण है जो निरंतर उद्देश्यपूर्ण क्रियांवेषण साधन या बाधा के रूप में आ जाते हैं।" भारतीय माध्यमिक शिक्षा आयोग ने पाठयचर्या को निम्न प्रकार परिभाषित किया, 'पाठयचर्या का अर्थ केवल उन सैद्धान्तिक विषयों से नहीं है जो विद्यालयों में परंपरागत रूप से पढ़ाये जाते हैं, बल्कि इसमें अनुभवों की संपूर्णता भी सम्मिलित होती है, जिनको विद्यार्थी विद्यालय,

कक्षा, पुस्तकालय, प्रयोशाला, कार्यशाला, खेल के मैदान तथा शिक्षक एवं छत्रों के अनेकों अनौपचारिक संपर्कों से प्राप्त करता है। इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठयचर्या हो जाता है जो छत्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित करता है और उनके संतुलित व्यतित्व के विकास मे सहायता देता है।' पाठयचर्या निर्माण करते समय शिक्षाविदों को जीवन एवं सृष्टि से जुड़े कई आधारभूत प्रश्नों, समाज की समस्याओं,वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों, समाज की अपेक्षाओं, सीखने वाले अर्थात बालक की मनोवैज्ञानिक प्रवृति, वैयक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखना पड़ता है। निश्चित रूप से दार्शनिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आधारों पर निर्मित पाठयचर्या ही प्रभावशाली और उद्देश्यपूर्ण होता है। प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत आप पाठयचर्या निर्माण के समाजशास्त्रीय आधार से परिचित होंगे अर्थात आप पाठयचर्या निर्माण पर समाज की अपेक्षाएँ, सामाजिक लक्ष्य, सामाजिक समस्याएँ किस प्रकार प्रभाव डालतीं हैं ? उनको समझेंगे । हमारा समाज किस प्रकार पाठयचर्या निर्माण के लिए उत्तरदायी है? इस विषय के बारे में भी आप अध्ययन करेंगे अर्थात समाज किस प्रकार एक बल रूपी कारक है जिससे पाठयचर्या निर्माण समय-समय पर हमारे समाज से प्रभावित दिखायी पड़ता है। समाज में विभिन्न कारणों से सामाजिक परिवर्तन होते रहते हैं। आधुनिक युग में किस प्रकार नयी-नयी वैज्ञानिक खोजें एवं तकनीकी हमारे समाज को प्रभावित करती हैं? वर्तमान समय में किस प्रकार सामाजिक परिवर्तन पाठयचर्या विकास को प्रभावित करता है? इस विषय पर स्पष्ट एवं विस्तृत चर्चा करेंगे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

1. पाठयचर्या निर्माण के समाजशास्त्रीय आधारों का वर्णन कर सकेंगे।
2. पाठयचर्या विकास को प्रभावित करने वाले सामाजिक दबावों को स्पष्ट कर सकेंगे।
3. विज्ञान एवं तकनीकी के प्रभाव के सन्दर्भ में भारत में होने वाले सामाजिक परिवर्तन की चर्चा कर सकेगें।
4. पाठयचर्या विकास पर सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।
5. पाठयचर्या विकास में समाज की भूमिका स्पष्ट कर सकेंगे।
6. सामाजिक परिवर्तन में विज्ञान एवं तकनीकी के सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव की सूची बना सकेंगे।
7. पाठयचर्या निर्माण के समाज शास्त्रीय आधार का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगें।

7.3 पाठयचर्या निर्माण के समाजशास्त्रीय आधार

मनुष्य समाज में रहकर जीवन व्यतीत करता है जिसके कारण उसके जीवन का प्रत्येक पक्ष समाज से प्रभावित होता है। शिक्षा मनुष्य के जीवन के महत्वपूर्ण पक्षों में से एक है। शिक्षा का मुख्य लक्ष्य ही बालक का समाजीकरण करना अर्थात उसे उचित सामाजिक जीवन जीने हेतु आवश्यक ज्ञान, योग्यतायें व कौशल प्राप्त करने में सहायता करना है। इससे स्पष्ट है कि शिक्षा के इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु निर्मित होने वाले पाठयचर्या में सामाजिक पृष्ठभूमि एवं समाज की अपेक्षाएँ अवश्य ही सम्मिलित रहती हैं। शिक्षा के माध्यम से बालक के व्यवहार में अपेक्षित/वांछित परिवर्तन लाया जाता है यह अपेक्षा/वांछनीयता सामाजिक आकांक्षाओं की दिशा में होती है। अतः पाठयचर्या जहाँ एक ओर व्यक्त् से संबन्धित होता है वहीं दूसरी ओर समाज से भी जुड़ा होता है। शिक्षा द्वारा ही व्यक्ति समाज का योग्यतम सदस्य बनता है। कुछ विद्वानों का मत है कि 'शिक्षा समाज विज्ञान व्यक्ति तथा उसके सांस्कृतिक वातावरण में जिसमें दूसरे व्यक्ति, सामाजिक समूह व्यवहार के नमूने होते हैं।व्यक्ति के प्रतिक्रिया का अध्ययन करता है।'

शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार की निम्नलिखित विशेषताएं हैं-

- सामाजिक जीवन के लिये तैयार करता है। शिक्षा का उद्देश्य बालकों को सामाजिक जीवन के लिये तैयार करना है। इसलिये विद्यालयी परिस्थितियों में ऐसी क्रियाओं का संगठन एवं आयोजन किया जाता है जिससे बालकों में सामाजिक भावना पैदा हो। जैसे-खेलकूद, वाद-विवाद सभा, सांस्कृतिक रंगारंग कार्यक्रम, स्काउट-गाइड आदि
- **समाजहित की भावना का विकास करना-** शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होता है कुशल एवं बुद्धिजीवी नागरिक तैयार करना जो समाज हित के लिए प्रयासरत हो।
- **सामाजिक प्रवृत्ति पर आधारित पाठयचर्या** - समाज के आधार पर ही पाठयचर्या पर प्रभाव पड़ता है। आधुनिक समय में सामाजिक विषयों पर लोगों का रूझान बढ़ा है तथा इस विषय को अधिक महत्व दिया जा रहा है। पाठयचर्या सदैव समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप् होना चाहिए।
- **शिक्षा का सामाजिक उन्नति में योगदान-** शिक्षा के द्वारा समाज के प्रत्येंक व्यक्ति में सामाजिक चेतना के भाव पैदा किये जातें है। मनुष्य में जागृत यह चेतना सामाजिक उन्नति एवं प्रगति में सहायक होती है अतः यह आवश्यक है कि समाज के हर व्यक्ति को शिक्षा ग्रहण करने का अवसर प्रदान किये जाये।
- **विद्यालय समाज के लघु रूप में-** विद्यालय को समाज का लघु रूप कहते हैं तथा विद्यालय का समाज से अधिक संबंध होता है। अतः बालक को जो उपयोगी हो वही शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

- **प्रजातंत्र शासन का समर्थन**- ''सामाजिक प्रकृति प्रजातंत्र शासन का समर्थन करती है। यही कारण है कि अब शिक्षा देना सक सामाजिक कार्य माना जाता है। उपरोक्त विवरण के आधार पर आप समझ गये होंगे कि हमारी शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं? तथा समाज के उत्थान में शिक्षा किस प्रकार महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है?

समाजशास्त्रीय आधार और आधुनिक शिक्षा

आज भी शिक्षा में समाजशास्त्रीय आधार को विशेष रूप से लिया गया है। आप देखेंगे कि इन्हीं कारणों से शिक्षा में परिवर्तन दिखता है। ये परिवर्तन निम्नलिखित हैं।

- अध्यापकों की समय-समय पर तथा उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था पर अधिक बल दिया जाने लगा है।
- मानसिक मन्द एवं विकलांग श्रेणी के साथ-साथ गरीब बच्चों की शिक्षा की उचित व्यवस्था की जाने लगी है।
- मजदूरों एवं प्रौढ़ो की भी शिक्षा की उचित व्यवस्था की जाने लगी है।
- व्यवसायिक शिक्षा हेतु विभिन्न शैक्षिक/प्रशिक्षण संस्थान भी खोले जा रहे हैं।
- स्त्री शिक्षा पर बल दिया जा रहा है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर आप देख सकते हैं कि आधुनिक समय में शिक्षा पर समाजशास्त्रीय विचार का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है । शिक्षा के क्षेत्र में समाजवादी प्रवृत्ति का महत्व भी इस विचारधारा के साथ-साथ तथा अन्य कारणों से नयी-नयी प्रवृत्तियों का जन्म हो रहा है।

समाजशास्त्रीय प्रवृत्तिः- शिक्षा में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का तात्पर्य शिक्षा में समाजिकतावाद को अधिक महत्व देने से ही अर्थात प्रत्येक मनुष्य में पूर्ण रूप से समाजिक विकास करने से है जिससे कि व्यक्ति सामाजिक जीवन के लिये तैयार हो सके और समाज का कल्याण कर सके। इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में अर्थात शिक्षा संगठन, शिक्षा प्रबन्ध, पाठ्य वस्तु, शिक्षण-पद्धति आदि में कई परिवर्तन हुए। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है जो व्यक्ति के द्वारा जाति की सामाजिक चेतना में भाग लेने से विकसित होती है।

शिक्षा में समाजशास्त्री प्रवृत्ति के कारण

i. **समाजिक उद्देश्यः-** समाजशास्त्र के विकास के साथ-साथ शिक्षा में समाजशास्त्रीय विचार धारा का ठीक विकास हुआ जिसके फलस्वरूप शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य को प्रमुखता मिली।

ii. **औद्योगिक क्रान्तिः-**18वीं शताब्दी में यूरोप में एक महान् व्यावसायिक औद्योगिक क्रान्ति हुई। इसके पश्चात नये-नये समाजों की रचना हुई और जीवन के आदर्शो में भी परिवर्तन दिखलाई पड़ने लगा तथा लेखकों एवं राजनीतिज्ञों का ध्यान जन साधारण तथा काम-जीवियों की भलाई की ओर आकर्षित हुए।

iii. **मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक प्रवृत्तियां:**- मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के प्रवर्तक पेस्तालॉजी ने जनसाधारण का जीवन सुधारने पर, हरबर्ट ने नैतिक चरित्र के विकास पर तथा फ्रोबेल ने समाज सुधार पर बल दिया अर्थात सभी मनोवैज्ञानिको ने समाज सुधार पर ध्यान दिया।

iv. **जनतन्त्रीय भावनाओं का विकास-** 18वीं तथा 19वीं शताब्दी में जनतंत्र का विकास चारों तरफ हुआ तथा इस समय राजनीतिज्ञों ने यह अनुभव किया कि प्रजातंत्र के स्थायित्व में जनसाधारण का सहयोग आवश्यक है। यह सहयोग जनतंत्र से तभी पा सकते है जब उनके रहने का, उनकी आवश्यकता की पूर्ति का तथा उनकी शिक्षा का समुचित प्रबन्ध किया जाए। तथा ये भी देखा गया कि अशिक्षित जनता द्वारा जनतंत्र का सफल संचालन नहीं हो सकता।

v. **सामाजिक शिक्षा की उत्पत्तिः-**व्यक्तिवादी धारा की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप सामाजिक प्रवृत्तियों को बल मिला और ऑगस्ट कॉम्टे ने समाजशास्त्र नामक एक नये विषय की रचना की जिसका उद्देश्य मानव तथा उसके सामाजिक संबंधों का अध्ययन था। इसी समय जार्ज पेनी ने समाज शास्त्री के आधार शैक्षिक समाजशास्त्र की रचना की जिसने समाजशास्त्र के अनुसार शिक्षा के विभिन्न अंगों को निश्चित किया। इससे न केवल समाजिकतावादी प्रवृत्ति को बल मिला। अपितु उसकी नींव और भी पक्की हो गयी।

vi. अतः उपरोक्त विस्तृत चर्चा के आधार पर आप सामाजिक प्रवृत्तियों तथा समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास के कारणों के विषय में विस्तार से जान गये होंगे कि शिक्षा किस प्रकार समाजशास्त्रीय प्रवृत्तियों में समय-समय पर परिवर्तन करता है। जिससे हमारे समाज में शिक्षा एवं समाज के मध्य सामंजस्य रहता है।

7.4 पाठयचर्या विकास हेतु समाज एक बल रूपी कारक

शिक्षा और समाज में संबंध:-शिक्षा तथा समाज में घनिष्ठ संबंध होता है। शिक्षा और समाज को एक दूसरे से स्वतंत्र नहीं माना जा सकता है। वे एक दूसरे पर आधारित तथा एक-दूसरे के पूरक हैं। समाज में ही प्रत्येक मनुष्य का जन्म होता है। इनका पालन-पोषण होता है। और उसके व्यक्तित्व का विकास भी होता है। वह समाज के सदस्यों के साथ अंतःक्रिया करता है। वर्तमान समय की आवश्यकतानुसार समाज ही वर्तमान शिक्षा का आधार तथा भविष्य निर्धारित करता है।समाज ही

नयी पीढ़ी हेतु सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण एवं उसका हस्तांतरण करने का प्रबंध शिक्षा के माध्यम से ही करता है।

शिक्षा का समाजवादी दर्शन:-जॉन डीवी के अनुसार शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है जो व्यक्ति के द्वारा जाति की सामजिक चेतना में भाग लेने से विकसित होती है। इस दृष्टि से उचित शिक्षा के विधान के लिए सामाजिक चेतना का अध्ययन करना अति आवश्यक है। शैक्षिक समाज शास्त्र में व्यक्ति, समाज, सामाजिक संस्थाओं, समूहों और सामाजिक वर्गो आदि का अध्ययन किया जाता है और यह देखा जाता है कि इन सबका मनुष्य के विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है। तत्पश्चात इस आधार पर शिक्षा का स्वरूप निश्चित किया जाता है।

अतः उपरोक्त विवरण के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि शिक्षा में पाठयचर्या विकास हेतु समाज एक आधार प्रदान करता है। समय-समय पर सामाजिक परिवर्तन हो रहे हैं जिससे समाज में रहने वालों का रहन-सहन तथा सोच परिवर्तित हो रहा है। इस परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए समाजिक प्राणियों के आवश्यकतानुसार समय-समय पर पाठयचर्या में भी परिवर्तन आवश्यक होता है। तथा इनके आवश्यकता अनुरूप इन्हें शिक्षा प्रदान की जाती है। समाज की अपेक्षाओं/आकांक्षाओं के अनुरूप ही पाठयचर्या विकास अर्थात पाठयचर्या निर्माण करना सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होता है। वर्तमान समय में पाठयचर्या में ऐसे तथ्यों का समावेश करने पर ज़ोर दिया जा रहा है जो बालकों को व्यावसायिक रूप से दक्ष बनाने के साथ-साथ उनमें सहयोग,प्रेम, सहिष्णुता, परोपकार आदि सामाजिक मूल्यों का विकास हो सके, जिससे समाज का हित हो सके। क्योंकि हम सभी यह जानते हैं कि विद्यालय समाज का एक लघु रूप है विद्यालय से जो शिक्षा ग्रहण करेंगे, वैसे ही हम समाज में रहेंगे।

उपरोक्त विवरण से आप जान गयें होंगे कि किस प्रकार समाज, पाठयचर्या विकास हेतु मुख्य आधार का काम करता है?

अभ्यास प्रश्न

1. पाठयचर्या निर्माण के समाजशास्त्रीय आधार का क्या अर्थ है ?
2. शिक्षा एवं समाज में क्या संबंध है ?
3. जॉन डीवी के अनुसार शिक्षा किस प्रकार की किया है ?
4. पाठयचर्या विकास में समाज की कोई दो भूमिका बताइए ?

7.5 भारत में सामाजिक परिवर्तन

जिस प्रकार मनुष्य गतिशील है ठीक उसी प्रकार मनुष्य निर्मित समाज भी गतिशील है। अर्थात सामाजिक परिवर्तन का अर्थ है समाज सम्बन्धी हेरफेर अथवा समाज मे होने वाले परिवर्तन जैसे- मानव जीवन सदैव एक सा नहीं रहता अपितु उसके विचारों आदतों तथा मूल्यों में किसी न किसी प्रकार परिवर्तन सदैव होता रहता है। इस दृष्टि से यदि मानव जीवन में परिवर्तन का होना आवश्यक है तो मानव की इकाई से बने हुए समाज में भी परिवर्तन का होना स्वाभाविक ही है। भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तनों को सरलतापूर्वक उपस्थित करने में सामाजिक कार्यकर्ताओं को दोहरा प्रयास करना पड़ेगा। एक और तो उसको प्रत्येक दिशा में परिवर्तन के लिए रचनात्मक सुझाव देने होंगे तथा दूसरी ओर उनको उन सुझावों को क्रियान्वित करने के मार्ग की बाधाओं को हटाने की भी व्यवस्था करनी पड़ेगी।

सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति एवं विशेषताएँ

इसकी प्रकृति एवं विशेषताएं निम्नलिखित हैं

- **सामाजिक परिवर्तन एक अनिवार्य तथा सतत् प्रक्रिया है-** प्रत्येक समाज में सामाजिक परिवर्तन निरन्तर होता रहता है जैसे यहाँ वैदिक काल में कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था थी वहीं उत्तर वैदिक काल में जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था हो गयी।
- सामाजिक परिवर्तन से व्यक्तियों की अन्तः क्रिया में परिवर्तन होता है। किसी भी समाज में जब परिवर्तन होता है तो व्यक्ति और व्यक्ति समाज में अन्तर हो जाता है।
- सामाजिक परिवर्तन से व्यक्तियों के व्यवहार में परिवर्तन आता है। जबसे यहाँ औद्योगीकरण की प्रक्रिया शुरू हंई है। तभी से इसमें नगरीकरण की प्रक्रिया में तेजी आई है। तथा लोगों के व्यवहार, प्रेम एवं सहयोग पूर्ण व्यवहार में परिवर्तन स्पष्ट हो गया है।
- सामाजिक परिवर्तन से सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन आता है। हमारे भारतीय समाज में जैसे ही कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था में परिवर्तित हो गई। हमारे समाज की सामाजिक व्यवस्था भी बदल गयी।
- सामाजिक परिवर्तन कभी विकासोन्मुख तथा कभी पतनोन्मुखः- कभी किसी सामाजिक परिवर्तन से समाज का उत्थान हुआ और कभी पतन इतिहास बताता है कि हमारे भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था परिवर्तित हुई वैसे ही समाज का रूप ही चरमरा गया इससे वर्णभेद बढ़ गया जिससे आज भी हमें मुक्ति नहीं मिली।
- सभी समाजिक परिवर्तन सांस्कृतिक परिवर्तन नहीं होतेः-सामाजिक परिवर्तन सांस्कृतिक परिवर्तन नही होते किन्तु सभी सांस्कृतिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन अवश्य होते हैं। जैसे-जन्मदिन पर केक काटना एवं मोमबत्तियाँ बुझाना पाश्चात्य शैली की नकल है।

वर्तमान भारत में सामाजिक परिवर्तन के कारण

वर्तमान भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या, विविध संस्कृतियाँ, लोकतन्त्र शासन प्रणाली, विभिन्न राजनैतिक दलों के भिन्न-भिन्न मत, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, अंधाधुन्ध औद्योगीकरण, शिक्षा आदि कारक भारत के वर्तमान सामाजिक परिवर्तन के लिए जिम्मेदार हैं।

उपरोक्त समस्त कारकों में शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का बहुत महत्वपूर्ण कारक है।आइये अब हम शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन के संबंध का अध्ययन करें।

शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन

शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन का गहरा संबंध है कोई समाज अपनी अपेक्षाओं तथा जरूरतों की पूर्ति शिक्षा के माध्यम से ही करता है। सामाजिक दृष्टि से शिक्षा के समस्त कार्यो को दो वर्गो में बाटा जा सकता है।

1. सामाजिक नियंत्रण
2. सामाजिक परिवर्तन

सामाजिक नियंत्रण का अर्थ है- समाज की संरचना, उसके व्यवहार प्रतिमानों ओर कार्य-विधियों की सुरक्षा और समाजिक परिवर्तन का अर्थ है- समाज की संरचना, उसके व्यवहार प्रतिमानों और कार्य-विधियों में परिवर्तन।

शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है। सामाजिक परिवर्तन शिक्षा के स्वरूप उसके उद्देश्य और पाठ्यचर्चा आदि सभी को प्रभावित करता है। यह प्रक्रिया सदैव चलती रहती है। आइये आगे देखते हैं कि किस प्रकार शिक्षा सामाजिक परिवर्तन करती है? तथा किस प्रकार शिक्षा समाजिक परिवर्तन को प्रभावित करता है?

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन करती है- सामाजिक परिवर्तन के जो घटक बताये गये हैं उन सबके विकास का मूल कारण शिक्षा ही होती है प्रत्येक सभ्य समाज अपने नागरिकों के लिये औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था करता है। इस शिक्षा से मनुष्य का मानसिक विकास होता है। यह अपने तथा समाज के और सम्पूर्ण विश्व के विषय में सदैव सोचता रहता है। जिससे उसे समाज की आवश्यकताओं और समस्याओं की अनुभूति भी होती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति और समस्याओं के हल के लिये वह विचार विमर्श कर के उसका हल खोजता है। और इससे समाज को प्रभावित करता है अतः यह कार्य शिक्षा के अभाव में सम्भव नहीं है। प्राचीन काल में पाठ्यचर्चा में धर्म और नैतिकता मुख्य विषय थे जिससे हमारा समाज धर्म प्रधान था। वर्तमान समय में पाठ्यचर्चा व्यवसायिक शिक्षा/तकनीकी शिक्षा पर ज्यादा बल दिया गया है।

सामाजिक परिवर्तन शिक्षा को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक समाज अपनी शिक्षा का निर्माण स्वयं करता है अतः उसका स्वरूप वैसा ही होता है, जैसा समाज होता है अब यदि समाज में कुछ परिवर्तन होते हैं तो वह समाज अपनी शिक्षा को उसी के अनुरूप बदलने का प्रयास करता है। अतः प्रभावित करता है। प्राचीन भारत में धर्म प्रधान समाज था इसलिए उस समय की शिक्षा भी धर्म-प्रधान थी और धर्म उस समय पाठ्यचर्चा का मुख्य विषय था। आधुनिक युग में अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा, स्त्री शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, कृषि शिक्षा, तकनीकी शिक्षा पर विशेष बल दिया जाने लगा है।

आप जान गये होंगे कि किस प्रकार शिक्षा सामाजिक परिवर्तन को तथा सामाजिक परिवर्तन शिक्षा को प्रभावित करता है।

7.5.1 विज्ञान एवं तकनीकी के संदर्भ में सामाजिक परिवर्तन

भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र में निरन्तर प्रगति हो रही है, इस सबसे पुरानी मान्यताएं समाप्त सी हो रही हैं और वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो रहा है इससे सामाजिक परिवर्तन बहुत तेजी से हो रहा है। प्राचीन समय से अब तक वर्ण व्यवस्था कायम है किन्तु विज्ञान यह कहता है कि अर्न्तजातीय विवाह से उत्पन्न होने वाली पीढ़ी सदैव अपने माता-पिता से उच्च कोटि की जाति होगी तथा इन संतानों के शीलगुण सर्वश्रेष्ठ होंगे अतः विज्ञान किसी जाति व्यवस्था को नहीं मानता। कल तक हमारे परिवार में आये अतिथि का हम स्वागत सत्कार करते थे तथा कुशल-क्षेम पूछते थे किन्तु तकनीकी के विकास ने टेलीविजन का आविष्कार कर दिया जिससे आजकल हम अतिथि को सीधे टेलिविजन के सामने बिठा देते हैं। इस युग में मशीनों के आविष्कार से कुटीर उद्योग धन्धों के स्थान पर भारी उद्योगों का विकास हुआ है। परिणामतः बेरोजगारी बढ़ी है। इससे धनी और धनी हुए है तथा निर्धन और निर्धन, प्रेम और सहयोग के आधार पर बने समाजों में द्वेष और असहयोग बढ़ रहा है। कितना बड़ा सामाजिक परिवर्तन हुआ है। आधुनिक समय में विज्ञान एवं प्रौद्यौगिकी ने हमारे समाज का स्वरूप ही बदल दिया है। वैज्ञानिक उपकरणों, वैज्ञानिक खोजों ने मानव की जीवनशैली को बहुत गहराई से प्रभावित किया है। कंप्यूटर एवं मोबाइल सबसे सशक्त उदाहरण हैं जिन्होने मनुष्य जीवन के अनेकों पक्षों को प्रभावित किया है। ऐसे कई उपकरण व वस्तुएं हैं जो वैज्ञानिक आविष्कार का परिणाम हैं, जिन्होने सामाजिक सम्बन्धों एवं संस्कृति को प्रभावित किया है।

7.5.2 पाठयचर्या विकास पर सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव

पाठयचर्या विकास पर सामाजिक परिवर्तन का पूरा–पूरा प्रभाव दिखता है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण है समय-समय पर पाठयचर्या में परिवर्तन। सामाजिक परिवर्तन का पाठयचर्या विकास पर, सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव की विवेचना हम दो पक्षों में कर सकते हैं। सर्वप्रथम सकारात्मक पक्ष तथा दूसरा नकारात्मक पक्ष। आधुनिक समाज की बदलती हुई आवश्यकताएं उसमें तीव्र गति से

होने वाले परिवर्तनों की ही देन होती हैं। कोई भी समाज इन तीव्रगामी परिवर्तनों से तभी ढंग से अनुकूलन कर सकता है जब वह उन परिवर्तन से उपजी वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, तकनीकी एवं पारिस्थितिकीय आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था करे पाठयचर्या विकास पर सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव का साकारात्मक पक्ष यह है कि यह नागरिक कर्तव्यों एवं अधिकारों के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित कर रहा है, विज्ञान एवं तकनीकी का विकास तेजी से हो रहा है जिससे लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोंण विकसित हो रहा है, समाज में लोगों के आर्थिक प्रगति के लिए व्यावसायिक एवं औद्योगिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जा रहा है। प्राकृतिक संसाधनों के अधिकतम सदुपायोग के लिए लोगों में कौशल विकसित किये जा रहे हैं, स्वास्थ्य शिक्षा, जनसंख्या शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा आदि पर विशेष बल दिया जा रहा है। वही दूसरी तरफ इसका नकारात्मक पक्ष यह बताता है कि वर्तमान शिक्षा व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं सांस्कृतिक विकास करने में असमर्थ है व्यक्ति के अभिवृत्तियों एवं मूल्यों का प्रतिपादन तथा परम्परागत एवं नवीन मूल्यों में सामंजस्य स्थापित करने में कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है।

अभ्यास प्रश्न

5. भारत में सामाजिक परिवर्तन से क्या तात्पर्य है ?
6. सामाजिक परिवर्तन की कोई दो प्रकृति बताइए ?
7. शिक्षा सामाजिक परिवर्तन को कैसे प्रभावित करती है ?
8. विज्ञान तथा तकनीकि किस प्रकार सामाजिक परिवर्तन में भूमिका अदा करती है ?

7.6 सारांश

इस इकाई में आपने पाठयचर्या विकास के समाज शास्त्रीय आधार के विषय में अध्ययन किया तथा यह ज्ञान प्राप्त किया कि किस प्रकार पाठयचर्या विकास में समाज भूमिका अदा करता है अर्थात हमारी शिक्षा व्यवस्था समाज की आवश्यकताओं एवं समस्याओं को ध्यान में रख कर बनायी जाती है इसलिये समय-समय पर आवश्यकता होने पर हम पाठयचर्या में परिवर्तन भी करते रहते हैं। इस इकाई में आपने यह भी देखा कि किस प्रकार प्राचीन समय से आधुनिक समय में समाज में परिवर्तन परिलक्षित हुये हैं तथा विज्ञान एवं तकनीकी किस प्रकार सामाजिक परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है। इसी क्रम में आपने देखा कि किस प्रकार समय-समय पर सामाजिक परिवर्तन होने पर पाठयचर्या विकास पर इस सामाजिक परिवर्तन का क्या प्रभाव पड़ता है? इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएं, सामाजिक परिवर्तन के कारक, शिक्षा तथा सामाजिक परिवर्तन में संबंध आदि अवधारणाओं के विषय में विस्तार से जान गये होंगे।

7.7 शब्दावली

1. **पाठयचर्या विकास**-शिक्षा प्रदान करने हेतु आवश्यक पाठ्य विषय वस्तु को सूचीबद्ध करना।
2. **समाजशास्त्रीय आधार**-सामाजिक शिक्षा से ज्ञान प्राप्त करके।
3. **सामाजिक परिवर्तन**-समाज में होने वाला फेर-बदल।
4. **सांस्कृतिक परिवर्तन**- सांस्कृतिक कार्यक्रमों की क्रियाविधि में फेरबदल।
5. **समाजशास्त्रीय शिक्षा**-समाज की उन्नति एवं समाज के विषय में ज्ञान देने वाली शिक्षा।
6. **विकासोन्मुख सामाजिक परिवर्तन**-विकास की ओर ले जाने वाला सामाजिक फेरबदल।
7. **पतनोन्मुख सामाजिक परिवर्तन**-पतन की ओर ले जाने वाला सामाजिक फेरबदल

7.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पाठयचर्या निर्माण की प्रक्रिया पूरी करना।
2. शिक्षा एवं समाज में घनिष्ठ संबध है क्योंकि विद्यालय समाज का लघु रूप होता है।
3. जॉज डीवी के अनुसार शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है।
4. पाठयचर्या विकास में समाज एक आधार प्रदान करता है समाज वर्तमान जरूरतों एवं समस्याओं से अवगत कराता है।
5. भारत में सामाजिक परिवर्तन से तात्पर्य है कि भारत मेँ प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक किस प्रकार समाज के लोगों का रहन सहन एवं सोचने के तरीके में परिवर्तन हुआ है।
6. सामाजिक परिवर्तन एक अनिवार्य एवं सतत् पक्रिया है। सामाजिक परिवर्तन से समाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होता है।
7. शिक्षा सामाजिक परिवर्तन करती है सामाजिक परिवर्तन के जो घटक बताये गये हैं। उन सबके विकास का मूल कारण शिक्षा ही है। शिक्षा समाज के लोगों के मानसिक विकास एवं चिंतन स्तर को विकसित करती है जो कि सामाजिक परिवर्तन के लिये उत्तरदायी होता है।
8. विज्ञान तथा तकनीकि प्राचीन काल से चल रही वर्ण व्यवस्था एवं प्राचीन मान्यताओं को गलत ठहराते हुए सामाजिक परिवर्तन में अपनी भूमिका अदा कर रही है।

7.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Harap, Henry (1970). *The changing curriculum.* New York.

2. Jacoles, Heidi (1974). *Curriculum design and implementation.* New York.
3. J. Dewey (1966). The child and the curriculum – The School and Society. USA: Phonix.
4. Kelly, A.V. (1977). *The curriculum: theory and practice.* London: Harper and Row.
5. Ornstein, C.& Hunkins P. (1988). Curriculum, Foundations, Principles and Issues. New Jersey: Prentice Hall.
6. Stake, R.E. et al (1969). *Curriculum foundations: principles and issues.*New Jersey : Prentice Hall.
7. Stufflebeam et al (1971). *Curriculum foundations principles and issues.*New Jersey: Prentice Hall.

7.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. यादव, एस. (2010). *पाठयचर्या विकास*, आगरा: श्री विनोद पुस्तक मंदिर.
2. Agrawal, J.C. (1990). *Curriculum reforms in India.* New Delhi.
3. Bhatt, B.D. and Sharma, S.R. (1992). Principles of Curriculum Construction. New Delhi: Kanishka Publishing House.
4. Dewal, O.S. (2004). National Curriculum. *In Encyclopedia of Indian Education.* New Delhi: NCERT.
5. Government of India (1966). *Report of the education commission 1964-66.* New Delhi: Government of India.
6. Government of India (1966). *National Policy on Education - 1986.* New Delhi: Government of India.
7. IGNOU (1997). *Curriculum and instruction (Block 1 & 2).* New Delhi: IGNOU.
8. Mohanty, J. (1981). *Indian education in emerging society.* New Delhi.
9. NCERT (1985). *National curriculum for primary and secondary education.* New Delhi: NCERT.
10. Teba, Hilda (1962). *Curriculum development, theory and practice.* New York: Harcourt.

7.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार से क्या समझते हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए तथा पाठयचर्या निर्माण में इसकी क्या भूमिका है ? समझाइए।
2. सामाजिक परिवर्तन से आप क्या समझते हैं ? तथा शिक्षा किस प्रकार सामाजिक परिवर्तन हेतु उत्तरदायी है। स्पष्ट कीजिए।
3. विज्ञान तथा तकनीकी किस प्रकार सामाजिक परिवर्तन में भूमिका अदा कर रही है? साथ ही साथ सामाजिक परिवर्तन के सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्षों पर प्रकाश डालिए ?
4. पाठयचर्या विकास से आप क्या समझते हैं? इसका विकास किन-किन समाजशास्त्रीय आधारों पर करते हैं तथा पाठयचर्या विकास को सामाजिक परिवर्तन किस प्रकार प्रभावित करता है? स्पष्ट कीजिए।